प्रेम एवं सद्भावनाएं

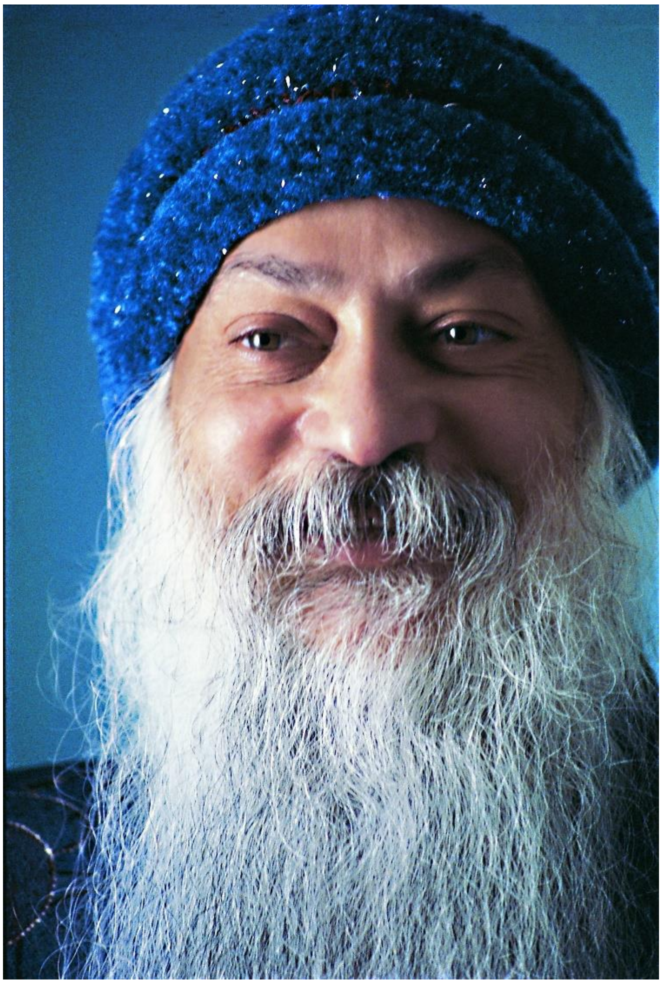

अनुक्रमांक

- प्रेम क्या है?
- भय या प्रेम
- प्रेम और विवाह
- प्रेम है द्वार प्रभु का
- शरीर-शुद्धि के अंतरंग सूत्र
- विचार-शुद्धि के सूत्र
- भाव-शुद्धि की कीमिया

प्रेम क्या है?

संभोग से समाधि की ओर-1

मेरे प्रिय आत्मन्!

प्रेम क्या है?

जीना और जानना तो आसान है, लेकिन कहना बहुत कठिन है। जैसे कोई मछली से पूछे कि सागर क्या है? तो मछली कह सकती है, यह है सागर, यह रहा चारों तरफ, वही है। लेकिन कोई पूछे कि कहो क्या है, बताओ मत, तो बहुत कठिन हो जाएगा मछली को।

आदमी के जीवन में भी जो श्रेष्ठ है, सुंदर है और सत्य है, उसे जीया जा सकता है, जाना जा सकता है, हुआ जा सकता है, लेकिन कहना बहुत मुश्किल है। और दुर्घटना और दुर्भाग्य यह है कि जिसमें जीया जाना चाहिए, जिसमें हुआ जाना चाहिए, उसके संबंध में मनुष्य-जाति पांच-छह हजार वर्ष से केवल बातें कर रही है।

प्रेम की बात चल रही है, प्रेम के गीत गाए जा रहे हैं, प्रेम के भजन गाए जा रहे हैं, और प्रेम का मनुष्य के जीवन में कोई स्थान नहीं है। अगर आदमी के भीतर खोजने जाएं तो प्रेम से ज्यादा असत्य शब्द दूसरा नहीं मिलेगा। और जिन लोगों ने प्रेम को असत्य सिद्ध कर दिया है और जिन्होंने प्रेम की समस्त धाराओं को अवरुद्ध कर दिया है और बड़ा दुर्भाग्य यह है कि लोग समझते हैं वे ही प्रेम के जन्मदाता भी हैं।

धर्म प्रेम की बातें करता है, लेकिन आज तक जिस प्रकार का धर्म मनुष्य-जाति के ऊपर दुर्भाग्य की भांति छाया हुआ है, उस धर्म ने ही मनुष्य के जीवन से प्रेम के सारे द्वार बंद कर दिए हैं। और न इस संबंध में पूरब और पश्चिम में कोई फर्क है, न हिंदुस्तान में और न अमेरिका में कोई फर्क है। मनुष्य के जीवन में प्रेम की धारा प्रकट ही नहीं हो पाई। और नहीं हो पाई तो हम दोष देते हैं कि मनुष्य ही बुरा है, इसलिए नहीं प्रकट हो पाई। हम दोष देते हैं कि यह मन ही जहर है, इसलिए प्रकट नहीं हो पाई।

मन जहर नहीं है। और जो लोग मन को जहर कहते रहे हैं, उन्होंने ही प्रेम को जहरीला कर दिया, प्रेम को प्रकट नहीं होने दिया है। मन जहर हो कैसे सकता है? इस जगत में कुछ भी जहर नहीं है। परमात्मा के इस सारे उपक्रम में कुछ भी विष नहीं है, सब अमृत है। लेकिन आदमी ने सारे अमृत को जहर कर लिया है। और इस जहर करने में शिक्षक, साधु-संत और तथाकथित धार्मिक लोगों का सबसे ज्यादा हाथ है।

इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी है। क्योंकि अगर यह बात दिखाई न पड़े तो मनुष्य के जीवन में कभी भी प्रेम भविष्य में भी नहीं हो सकेगा। क्योंकि जिन कारणों से प्रेम नहीं पैदा हो सका है, उन्हीं कारणों को हम प्रेम प्रकट करने के आधार और कारण बना रहे हैं! हालतें ऐसी हैं कि गलत सिद्धांतों को अगर हजारों वर्ष तक दोहराया जाए तो फिर हम यह भूल ही जाते हैं कि सिद्धांत गलत हैं; और दिखाई पड़ने लगता है कि आदमी गलत है, क्योंकि उन सिद्धांतों को पूरा नहीं कर पा रहा है।

मैंने सुना है, एक सम्राट के महल के नीचे से एक पंखा बेचने वाला गुजरता था और जोर से चिल्ला रहा था कि अनूठे और अदभुत पंखे मैंने निर्मित किए हैं। ऐसे पंखे कभी भी नहीं बनाए गए। ये पंखे कभी देखे भी नहीं गए हैं। सम्राट ने खिड़की से झांक कर देखा कि कौन है जो अनूठे पंखे ले आया है! सम्राट के पास सब तरह के पंखे थे..दुनिया के कोने-कोने में जो मिल सकते थे। और नीचे देखा, गलियारे में खड़ा हुआ एक आदमी साधारण दो-दो पैसे के पंखे होंगे और चिल्ला रहा है कि अनूठे, अद्वितीय।

उस आदमी को ऊपर बुलाया और पूछा कि इन पंखों में क्या खूबी है? दाम क्या हैं इन पंखों के? उस पंखे वाले ने कहा कि महाराज, दाम ज्यादा नहीं हैं। पंखे को देखते हुए दाम बहुत कम हैं, सिर्फ सौ रुपये का पंखा है। सम्राट ने कहा,

सौ रुपये! यह दो पैसे का पंखा, जो बाजार में जगह-जगह मिलता है, और सौ रुपये दाम! क्या है इसकी खूबी? उस आदमी ने कहा, खूबी! यह पंखा सौ वर्ष चलता है। सौ वर्ष के लिए गारंटी है। सौ वर्ष से कम में खराब नहीं होता है। सम्राट ने कहा, इसको देख कर तो ऐसा लगता है कि यह सप्ताह भी चल जाए पूरा तो मुश्किल है। धोखा देने की कोशिश कर रहे हो? सरासर बेईमानी, और वह भी सम्राट के सामने! उस आदमी ने कहा, आप मुझे भलीभांति जानते हैं, इसी गलियारे में रोज पंखे बेचता हूं। सौ रुपये दाम हैं इसके और अगर सौ वर्ष न चले तो जिम्मेवार मैं हूं। रोज तो नीचे मौजूद होता हूं। और फिर आप सम्राट हैं, आपको धोखा देकर जाऊंगा कहां?

वह पंखा खरीद लिया गया। सम्राट को विश्वास तो न था, लेकिन आश्चर्य भी था कि यह आदमी सरासर झूठ बोल रहा है, किस बल पर बोल रहा है! पंखा सौ रुपये में खरीद लिया गया और उससे कहा कि सातवें दिन तुम उपस्थित हो जाना।

दो-चार दिन में ही पंखे की डंडी बाहर निकल गई। सातवें दिन तो वह बिल्कुल मुर्दा हो गया। लेकिन सम्राट ने सोचा कि शायद पंखे वाला आएगा नहीं। लेकिन ठीक समय पर सातवें दिन वह पंखे वाला हाजिर हो गया और उसने कहा, कहो महाराज!

उन्होंने कहा, कहना नहीं है, यह पंखा पड़ा हुआ है टूटा हुआ। यह सात दिन में ही यह गति हो गई, तुम कहते सौ वर्ष चलेगा। पागल हो या धोखेबाज? क्या हो?

उस आदमी ने कहा कि मालूम होता है आपको पंखा झलना नहीं आता है। पंखा तो सौ वर्ष चलता ही। पंखा तो गारंटीड है। आप पंखा झलते कैसे थे?

सम्राट ने कहा, और भी सुनो, अब मुझे यह भी सीखना पड़ेगा कि पंखा कैसे किया जाता है!

उस आदमी ने कहा, कृपा करके बताइए कि इस पंखे की गति सात दिन में ऐसी कैसे बना दी आपने? किस भांति पंखा किया?

सम्राट ने पंखा उठा कर करके दिखाया कि इस भांति मैंने पंखा किया है।

उस आदमी ने कहा, समझ गया भूल। इस तरह पंखा नहीं किया जाता।

सम्राट ने कहा, और क्या रास्ता है पंखा झलने का?

उस आदमी ने कहा, पंखा पकड़िए सामने और सिर को हिलाइए। पंखा सौ वर्ष चलेगा। आप समाप्त हो जाएंगे, लेकिन पंखा बचेगा। पंखा गलत नहीं है, आपके झलने का ढंग गलत है।

यह आदमी पैदा हुआ है..पांच-छह हजार या दस हजार वर्ष की संस्कृति का यह आदमी फल है। लेकिन संस्कृति गलत नहीं है, यह आदमी गलत है। आदमी मरता जा रहा है रोज और संस्कृति की दुहाई चलती चली जाती है..कि महान संस्कृति, महान धर्म, महान सब कुछ! और उसका यह फल है आदमी, उसी संस्कृति से गुजरा है और यह परिणाम है उसका। लेकिन नहीं, आदमी गलत है और आदमी को बदलना चाहिए अपने को। और कोई कहने की हिम्मत नहीं उठाता कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि दस हजार वर्षों में जो संस्कृति और धर्म आदमी को प्रेम से नहीं भर पाए वह संस्कृति और धर्म गलत हों! और अगर दस हजार वर्षों में आदमी प्रेम से नहीं भर पाया तो आगे कोई संभावना है इसी धर्म और इसी संस्कृति के आधार पर कि आदमी कभी प्रेम से भर जाए?

दस हजार वर्षों में जो नहीं हो पाया, वह आगे भी दस हजार वर्षों में होने वाला नहीं है। क्योंकि आदमी यही है, कल भी यही होगा आदमी। आदमी हमेशा से यही है और हमेशा यही होगा। और संस्कृति और धर्म, जिनके हम नारे दिए चले जाते हैं, और संतों और महात्माओं की जिनकी दुहाइयां दिए चले जाते हैं...सोचने के लिए हम तैयार नहीं कि कहीं हमारे बुनियादी चिंतन की दिशा ही तो गलत नहीं है?

मैं कहना चाहता हूं कि वह गलत है। और गलत का सबूत है यह आदमी। और क्या सबूत होता है? एक बीज को हम बोएं और फल जहरीले और कड़वे हों तो क्या सिद्ध होता है? सिद्ध होता है कि वह बीज जहरीला और कड़वा रहा होगा। हालांकि बीज में पता लगाना मुश्किल है कि उससे जो फल पैदा होंगे, वे कड़वे पैदा होंगे। बीज में कुछ खोजबीन नहीं की जा सकती। बीज को तोड़ो-फोड़ो, कोई पता नहीं चल सकता कि इससे जो फल पैदा होंगे, वे कड़वे होंगे। बीज को बोओ, सौ वर्ष लग जाएंगे..वृक्ष होगा, बड़ा होगा, आकाश में फैलेगा, तब फल आएंगे..और तब पता चलेगा कि वे कड़वे हैं।

दस हजार वर्ष में संस्कृति और धर्म के जो बीज बोए गए हैं, यह आदमी उसका फल है और यह कड़वा है और घृणा से भरा हुआ है। लेकिन उसी की दुहाई दिए चले जाते हैं हम और सोचते हैं कि उससे प्रेम हो जाएगा। मैं आपसे कहना चाहता हूं, उससे प्रेम नहीं हो सकता है। क्योंकि प्रेम के पैदा होने की जो बुनियादी संभावना है, धर्मों ने उसकी ही हत्या कर दी है और उसमें ही जहर घोल दिया है।

मनुष्य से भी ज्यादा प्रेम पशु और पक्षियों में और पौधों में दिखाई पड़ता है; जिनके पास न कोई संस्कृति है, न कोई धर्म है। संस्कृत और सुसंस्कृत और सभ्य मनुष्यों की बजाय असभ्य और जंगल के आदमी में ज्यादा प्रेम दिखाई पड़ता है; जिसके पास न कोई विकसित धर्म है, न कोई सभ्यता है, न कोई संस्कृति है। जितना आदमी सभ्य, सुसंस्कृत और तथाकथित धर्मों के प्रभाव में मंदिरों और चर्चों में प्रार्थना करने लगता है, उतना ही प्रेम से शून्य क्यों होता चला जाता है?

जरूर कुछ कारण हैं। और दो कारणों पर मैं विचार करना चाहता हूं। अगर वे ख्याल में आ जाएं तो प्रेम के अवरुद्ध स्रोत टूट सकते हैं और प्रेम की गंगा बह सकती है। वह हर आदमी के भीतर है, उसे कहीं से लाना नहीं है। प्रेम कोई ऐसी बात नहीं है कि कहीं खोजने जाना है उसे। वह है। वह प्राणों की प्यास है हर एक के भीतर, वह प्राणों की सुगंध है प्रत्येक के भीतर। लेकिन चारों तरफ से परकोटा है उसके और वह प्रकट नहीं हो पाती। सब तरफ पत्थर की दीवार है और वे झरने नहीं फूट पाते। तो प्रेम की खोज और प्रेम की साधना कोई पाजिटिव, कोई विधायक खोज और साधना नहीं है कि हम जाएं और कहीं प्रेम सीख लें।

एक मूर्तिकार एक पत्थर को तोड़ रहा था। कोई देखने गया था कि मूर्ति कैसे बनाई जाती है। उसने देखा कि मूर्ति तो बिल्कुल नहीं बनाई जा रही है; सिर्फ छैनी और हथौड़े से पत्थर तोड़ा जा रहा है। तो उस आदमी ने पूछा कि यह आप क्या कर रहे हैं? मूर्ति नहीं बनाएंगे! मैं तो मूर्ति का बनना देखने आया हूं। आप तो सिर्फ पत्थर तोड़ रहे हैं।

उस मूर्तिकार ने कहा कि मूर्ति तो पत्थर के भीतर छिपी है, उसे बनाने की जरूरत नहीं है; सिर्फ उसके ऊपर जो व्यर्थ पत्थर जुड़ा है उसे अलग कर देने की जरूरत है और मूर्ति प्रकट हो जाएगी। मूर्ति बनाई नहीं जाती, मूर्ति सिर्फ आविष्कृत होती है, डिस्कवर होती है, अनावृत होती है, उघाड़ी जाती है।

मनुष्य के भीतर प्रेम छिपा है, सिर्फ उघाड़ने की बात है। उसे पैदा करने का सवाल नहीं है, अनावृत करने की बात है। कुछ है जो हमने ऊपर से ओढ़ा हुआ है, जो उसे प्रकट नहीं होने देता।

एक चिकित्सक से जाकर आप पूछें कि स्वास्थ्य क्या है? और दुनिया का कोई चिकित्सक नहीं बता सकता कि स्वास्थ्य क्या है। बड़े आश्चर्य की बात है! स्वास्थ्य पर ही तो सारा चिकित्सा-शास्त्र खड़ा है, सारी मेडिकल साइंस खड़ी है और कोई नहीं बता सकता कि स्वास्थ्य क्या है। लेकिन चिकित्सक से पूछें कि स्वास्थ्य क्या है? तो वह कहेगा, बीमारियों के बाबत हम बता सकते हैं कि बीमारियां क्या हैं, उनके लक्षण हमें पता हैं, एक-एक बीमारी की अलग-अलग परिभाषा हमें पता है। स्वास्थ्य? स्वास्थ्य का हमें कोई भी पता नहीं है। इतना हम कह सकते हैं कि जब कोई बीमारी नहीं होती, तो जो होता है, वह स्वास्थ्य है।

स्वास्थ्य तो मनुष्य के भीतर छिपा है, इसलिए मनुष्य की परिभाषा के बाहर है। बीमारी बाहर से आती है, इसलिए बाहर से परिभाषा की जा सकती है। स्वास्थ्य भीतर से आता है, उसकी कोई परिभाषा नहीं की जा सकती। इतना ही हम

कह सकते हैं कि बीमारियों का अभाव स्वास्थ्य है। लेकिन यह स्वास्थ्य की कहां परिभाषा हुई? स्वास्थ्य के संबंध में तो हमने कुछ भी न कहा। कहा कि बीमारियां नहीं हैं, तो बीमारियों के संबंध में कहा। सच यह है कि स्वास्थ्य पैदा नहीं करना होता, या तो छिप जाता है बीमारियों में या बीमारियां हट जाती हैं तो प्रकट हो जाता है।

स्वास्थ्य हममें है। स्वास्थ्य हमारा स्वभाव है।

प्रेम हममें है। प्रेम हमारा स्वभाव है।

इसलिए यह बात गलत है कि मनुष्य को समझाया जाए कि तुम प्रेम पैदा करो। सोचना यह है कि प्रेम पैदा क्यों नहीं हो पा रहा है? बाधा क्या है? अड़चन क्या है? कहां रुकावट डाल दी गई है? अगर कोई भी रुकावट न हो तो प्रेम प्रकट होगा ही, उसे सिखाने की और समझाने की कोई भी जरूरत नहीं है। अगर मनुष्य के ऊपर गलत संस्कृति और गलत संस्कार की धाराएं और बाधाएं न हों, तो हर आदमी प्रेम को उपलब्ध होगा ही। यह अनिवार्यता है। प्रेम से कोई बच ही नहीं सकता। प्रेम स्वभाव है।

गंगा बहती है हिमालय से। बहेगी गंगा, उसके प्राण हैं, उसके पास जल है। वह बहेगी और सागर को खोज ही लेगी। न किसी पुलिसवाले से पूछेगी, न किसी पुरोहित से पूछेगी कि सागर कहां है? देखा किसी गंगा को चैरस्ते पर खड़े होकर पूछते कि सागर कहां है? उसके प्राणों में है छिपी सागर की खोज और ऊर्जा है, तो पहाड़ तोड़ेगी, मैदान तोड़ेगी और पहुंच जाएगी सागर तक। सागर कितना ही दूर हो, कितना ही छिपा हो, खोज ही लेगी। और कोई रास्ता नहीं है, कोई गाइड-बुक नहीं है कि जिससे पता लगा ले कि कहां से जाना है, लेकिन पहुंच जाती है।

लेकिन बांध बांध दिए जाएं, चारों तरफ परकोटे उठा दिए जाएं। प्रकृति की बाधाओं को तोड़ कर तो गंगा सागर तक पहुंच जाती है, लेकिन अगर आदमी की इंजीनियरिंग की बाधाएं खड़ी कर दी जाएं, तो हो सकता है गंगा सागर तक न पहुंच पाए। यह भेद समझ लेना जरूरी है।

प्रकृति की कोई भी बाधा असल में बाधा नहीं है, इसलिए गंगा सागर तक पहुंच जाती है, हिमालय को काट कर पहुंच जाती है। लेकिन अगर आदमी ईजाद करे, इंतजाम करे, तो गंगा को सागर तक नहीं भी पहुंचने दे सकता है।

प्रकृति का तो एक सहयोग है, प्रकृति तो एक हार्मनी है। वहां जो बाधा भी दिखाई पड़ती है, वह भी शायद शक्ति को जगाने के लिए चुनौती है। वहां जो विरोध भी दिखाई पड़ता है, वह भी शायद भीतर प्राणों में जो छिपा है, उसे प्रकट करने के लिए बुलावा है। वहां शायद कोई बाधा नहीं है। वहां हम बीज को दबाते हैं जमीन में; दिखाई पड़ता है कि जमीन की एक पर्त बीज के ऊपर पड़ी है, बाधा दे रही है। लेकिन वह बाधा नहीं दे रही। अगर वह पर्त न होगी, तो बीज अंकुरित भी नहीं हो पाएगा। ऐसे दिखाई पड़ता है कि एक पर्त जमीन की बीज को नीचे दबा रही है। लेकिन वह पर्त दबा इसलिए रही है, ताकि बीज दबे, गले और टूट जाए और अंकुर बन जाए। ऊपर से दिखाई पड़ता है कि वह जमीन बाधा दे रही है, लेकिन वह जमीन मित्र है और सहयोग कर रही है बीज को प्रकट करने में।

प्रकृति तो एक हार्मनी है, एक संगीतपूर्ण लयबद्धता है।

लेकिन आदमी ने जो-जो निसर्ग के ऊपर इंजीनियरिंग की है, जो-जो उसने अपनी यांत्रिक धारणाओं को ठोंकने की और बिठाने की कोशिश की है, उससे गंगाएं रुक गई हैं, जगह-जगह अवरुद्ध हो गई हैं। और फिर आदमी को दोष दिया जाता है। किसी बीज को दोष देने की जरूरत नहीं है। अगर वह पौधा न बन पाए, तो हम कहेंगे कि जमीन नहीं मिली होगी ठीक, पानी नहीं मिला होगा ठीक, सूरज की रोशनी नहीं मिली होगी ठीक। लेकिन आदमी के जीवन में खिल न पाए फूल प्रेम का, तो हम कहते हैं..तुम हो जिम्मेवार। और कोई नहीं कहता कि भूमि न मिली होगी ठीक, पानी न मिला होगा ठीक, सूरज की रोशनी न मिली होगी ठीक; इसलिए यह आदमी का पौधा अवरुद्ध रह गया, विकसित नहीं हो पाया, फूल तक नहीं पहुंच पाया।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि बुनियादी बाधाएं आदमी ने खड़ी की हैं। प्रेम की गंगा तो बह सकती है और परमात्मा के सागर तक पहुंच सकती है। आदमी बना इसलिए है कि वह बहे और प्रेम बहे और परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन हमने कौन सी बाधाएं खड़ी कर दी हैं?

पहली बात, आज तक मनुष्य की सारी संस्कृतियों ने सेक्स का, काम का, वासना का विरोध किया है। इस विरोध ने, मनुष्य के भीतर प्रेम के जन्म की संभावना तोड़ दी, नष्ट कर दी..इस निषेध ने! क्योंकि सच्चाई यह है कि प्रेम की सारी यात्रा का प्राथमिक बिंदु काम है, सेक्स है। प्रेम की यात्रा का जन्म, गंगोत्री..जहां से गंगा पैदा होगी प्रेम की..वह सेक्स है, वह काम है। और उसके सब दुश्मन हैं..सारी संस्कृतियां, और सारे धर्म, और सारे गुरु, और सारे महात्मा..तो गंगोत्री पर ही चोट कर दी, वहीं रोक दिया। पाप है काम, अधम है काम, जहर है काम। और हमने सोचा भी नहीं कि काम की ऊर्जा ही, सेक्स एनर्जी ही अंततः प्रेम में परिवर्तित होती और रूपांतरित होती है। प्रेम का जो विकास है, वह काम की शक्ति का ही ट्रांसफार्मेशन है, वह उसी का रूपांतरण है।

एक कोयला पड़ा हो और आपको ख्याल भी नहीं आएगा कि कोयला ही रूपांतरित होकर हीरा बन जाता है। हीरे और कोयले में बुनियादी रूप से कोई भी फर्क नहीं है। हीरे में भी वे ही तत्व हैं जो कोयले में हैं। और कोयला हजारों वर्ष की प्रक्रिया से गुजर कर हीरा बन जाता है। लेकिन कोयले की कोई कीमत नहीं है, उसे कोई घर में रखता भी है तो ऐसी जगह जहां दिखाई न पड़े। और हीरे को लोग छातियों पर लटका कर घूमते हैं, कि वह दिखाई पड़े। और हीरा और कोयला एक ही हैं! लेकिन कोई दिखाई नहीं पड़ता कि इन दोनों के बीच अंतर्संबंध है, एक यात्रा है।

कोयले की शक्ति ही हीरा बनती है। और अगर आप कोयले के दुश्मन हो गए..जो कि हो जाना बिल्कुल आसान है, क्योंकि कोयले में कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता..तो हीरे के पैदा होने की संभावना भी समाप्त हो गई, क्योंकि कोयला ही हीरा बन सकता था।

सेक्स की शक्ति ही, काम की शक्ति ही प्रेम बनती है।

लेकिन उसके विरोध में हैं, सारे दुश्मन हैं उसके। अच्छे आदमी उसके दुश्मन हैं। और उसके विरोध ने प्रेम के अंकुर भी नहीं फूटने दिए। और जमीन से, प्रथम से, पहली सीढ़ी से नष्ट कर दिया भवन को। फिर वह हीरा नहीं बन पाता कोयला, क्योंकि उसके बनने के लिए जो स्वीकृति चाहिए, जो उसका विकास चाहिए, जो उसको रूपांतरित करने की प्रक्रिया चाहिए, उसका सवाल ही नहीं उठता। जिसके हम दुश्मन हो गए, जिसके हम शत्रु हो गए, जिससे हमारी द्वंद्व की स्थिति बन गई और जिससे हम निरंतर लड़ने लगे..अपनी ही शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है, सेक्स की शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है। और शिक्षाएं दी जाती हैं कि द्वंद्व छोड़ना चाहिए, कांफ्लिक्ट छोड़नी चाहिए, लड़ना नहीं चाहिए। और सारी शिक्षाएं बुनियाद में सिखा रही हैं कि लड़ो।

मन जहर है; तो मन से लड़ो। जहर से तो लड़ना पड़ेगा। सेक्स पाप है; तो उससे लड़ो। और ऊपर से कहा जा रहा है कि द्वंद्व छोड़ो। जिन शिक्षाओं के आधार पर मनुष्य द्वंद्व से भर रहा है, वे ही शिक्षाएं दूसरी तरफ कह रही हैं कि द्वंद्व छोड़ो। एक तरफ आदमी को पागल बनाओ और दूसरी तरफ पागलखाने खोलो कि उनका इलाज करना है! एक तरफ कीटाणु फैलाओ बीमारियों के और फिर अस्पताल खोलो कि बीमारियों का इलाज यहां किया जाता है!

एक बात समझ लेनी जरूरी है इस संबंध में।

मनुष्य कभी भी काम से मुक्त नहीं हो सकेगा। काम उसके जीवन का प्राथमिक बिंदु है, उसी से जन्म होता है। परमात्मा ने काम की शक्ति को ही, सेक्स को ही सृष्टि का मूल बिंदु स्वीकार किया है। और परमात्मा जिसे पाप नहीं समझ रहा है, महात्मा उसे पाप बता रहे हैं! अगर परमात्मा उसे पाप समझता है, तो परमात्मा से बड़ा पापी इस पृथ्वी पर, इस जगत में, इस विश्व में कोई भी नहीं है।

फूल खिला हुआ दिखाई पड़ रहा है। कभी सोचा है कि फूल का खिल जाना भी सेक्सुअल एक्ट है! फूल का खिल जाना भी काम की एक घटना है, वासना की एक घटना है! फूल में है क्या..उसके खिल जाने में? उसके खिल जाने में कुछ भी नहीं है, वे बिंदु हैं पराग के, वीर्य के कण हैं, जिन्हें तितलियां उड़ा कर दूसरे फूलों पर ले जाएंगी और नया जन्म देंगी।

एक मोर नाच रहा है..और कवि गीत गा रहे हैं और संत भी देख कर प्रसन्न होंगे। लेकिन उन्हें ख्याल नहीं कि नृत्य एक सेक्सुअल एक्ट है। मोर पुकार रहा है अपनी प्रेयसी को या अपने प्रेमी को। वह नृत्य किसी को रिझाने के लिए है। पपीहा गीत गा रहा है; कोयल बोल रही है; एक आदमी जवान हो गया है; एक युवती सुंदर होकर विकसित हो गई है। वे सब की सब सेक्सुअल एनर्जी की अभिव्यक्तियां हैं। वह सब का सब काम का ही रूपांतरण है। यह सब का सब काम की ही अभिव्यक्ति, काम की ही अभिव्यंजना है। सारा जीवन, सारी अभिव्यक्ति, सारी फ्लावरिंग काम की है।

और उस काम के खिलाफ संस्कृति और धर्म आदमी के मन में जहर डाल रहे हैं। उससे लड़ाने की कोशिश कर रहे हैं। मौलिक शक्ति से मनुष्य को उलझा दिया है लड़ने के लिए। इसलिए मनुष्य दीन-हीन, प्रेम से रिक्त और थोथा और ना-कुछ हो गया है।

काम से लड़ना नहीं है, काम के साथ मैत्री स्थापित करनी है और काम की धारा को और ऊंचाइयों तक ले जाना है। किसी ऋषि ने किसी वधू को, नव वर और वधू को आशीर्वाद देते हुए कहा था कि तेरे दस पुत्र पैदा हों और अंततः तेरा पति तेरा ग्यारहवां पुत्र हो जाए।

वासना रूपांतरित हो, तो पत्नी मां बन सकती है।

वासना रूपांतरित हो, तो काम प्रेम बन सकता है।

लेकिन काम ही प्रेम बनता है, काम की ऊर्जा ही प्रेम की ऊर्जा में विकसित होती है, फलित होती है। लेकिन हमने मनुष्य को भर दिया है काम के विरोध में। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रेम तो पैदा नहीं हो सका..क्योंकि वह तो आगे का विकास था, काम की स्वीकृति से आता..प्रेम तो विकसित नहीं हुआ और काम के विरोध में खड़े होने के कारण मनुष्य का चित्त ज्यादा से ज्यादा कामुक और सेक्सुअल होता चला गया। हमारे सारे गीत, हमारी सारी कविताएं, हमारे चित्र, हमारी पेंटिंग्स, हमारे मंदिर, हमारी मूर्तियां सब घूम-फिर कर सेक्स के आस-पास केंद्रित हो गईं। हमारा मन ही सेक्स के आस-पास केंद्रित हो गया। इस जगत में कोई भी पशु मनुष्य की भांति सेक्सुअल नहीं है। मनुष्य चैबीस घंटे सेक्सुअल हो गया। उठते-बैठते, सोते-जागते सेक्स ही सब कुछ हो गया। उसके प्राण में एक घाव हो गया..विरोध के कारण, दुश्मनी के कारण, शत्रुता के कारण। जो जीवन का मूल था, उससे मुक्त तो हुआ नहीं जा सकता था, लेकिन उससे लड़ने की चेष्टा में सारा जीवन रुग्ण जरूर हो सकता था, वह रुग्ण हो गया है।

और यह जो मनुष्य-जाति इतनी ज्यादा कामुक दिखाई पड़ रही है, इसके पीछे तथाकथित धर्मों और संस्कृति का बुनियादी हाथ है। इसके पीछे बुरे लोगों का नहीं, सज्जनों और संतों का हाथ है। और जब तक मनुष्य-जाति सज्जनों और संतों के इस अनाचार से मुक्त नहीं होती, तब तक प्रेम के विकास की कोई संभावना नहीं है।

मुझे एक घटना याद आती है। एक फकीर अपने घर से निकला था, किसी मित्र के पास मिलने जा रहा था। निकला है कि घोड़े पर उसका चढ़ा हुआ एक बचपन का दोस्त घर आकर सामने खड़ा हो गया है। उसने कहा कि दोस्त, तुम घर पर रुको, वर्षों से प्रतीक्षा करता था कि तुम आओगे तो बैठेंगे और बात करेंगे, और दुर्भाग्य कि मुझे किसी मित्र से मिलने जाना है। मैं वचन दे चुका हूं तो मैं वहां जाऊंगा। घंटे भर में जल्दी से जल्दी लौट आऊंगा, तब तक तुम विश्राम करो।

उसके मित्र ने कहा कि मुझे तो चैन नहीं है, अच्छा होगा कि मैं तुम्हारे साथ ही चला चलूं। लेकिन उसने कहा कि मेरे कपड़े सब गंदे हो गए हैं धूल से रास्ते की। अगर तुम्हारे पास कुछ अच्छा कपड़ा हो तो मुझे दे दो, तो मैं डाल लूं और साथ हो जाऊं।

निश्चित था उस फकीर के पास। किसी सम्राट ने उसे एक बहुमूल्य कोट, एक पगड़ी और धोती भेंट की थी। उसने सम्हाल कर रखी थी, कभी जरूरत पड़ेगी तो पहनूंगा। वह जरूरत नहीं आई थी। निकाल कर ले आया खुशी में।

मित्र ने जब पहन लिए, तब उसे थोड़ी ईर्ष्या पैदा हुई। मित्र ने पहन कर...तो मित्र सम्राट मालूम होने लगा। बहुमूल्य कोट था, पगड़ी थी, धोती थी, शानदार जूते थे। और उसके सामने वह फकीर बिल्कुल ही नौकर-चाकर, दीन-हीन दिखाई पड़ने लगा। उसने सोचा कि यह तो बड़ा मुश्किल हुआ, यह तो बड़ा गलत हुआ। जिनके घर मैं ले जाऊंगा, ध्यान इस पर जाएगा, मुझ पर किसी का भी ध्यान जाएगा नहीं। अपने ही कपड़े और आज अपने ही कपड़ों के कारण मैं दीन-हीन हो जाऊंगा।

लेकिन बार-बार मन को समझाया कि मैं फकीर हूं, आत्मा-परमात्मा की बात करने वाला। क्या रखा है कोट में, पगड़ी में, छोड़ो! पहने रहने दो, कितना फर्क पड़ता है! लेकिन जितना समझाने की कोशिश की कि कोट-पगड़ी में क्या रखा है, कोट-पगड़ी, कोट-पगड़ी ही उसके मन में घूमने लगी।

मित्र दूसरी बात करने लगा। लेकिन वह भीतर तो...ऊपर तो कुछ और दूसरी बातें कर रहा है, लेकिन वहां उसका मन नहीं है। भीतर उसे बस कोट और पगड़ी! रास्ते पर जो भी आदमी देखता है, उसको कोई भी नहीं देखता, मित्र की तरफ सबकी आंखें जाती हैं। वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया कि यह तो आज भूल कर ली..अपने हाथ से भूल कर ली। जिनके घर जाना था, वहां पहुंचा। जाकर परिचय दिया कि मेरे मित्र हैं जमाल, बचपन के दोस्त हैं, बहुत प्यारे आदमी हैं। और फिर अचानक अनजाने मुंह से निकल गया कि रह गए कपड़े, सो कपड़े मेरे हैं। क्योंकि मित्र भी, जिनके घर गए थे, वे भी उसके कपड़ों को देख रहे थे! और भीतर उसके चल रहा था: कोट-पगड़ी। मेरी कोट-पगड़ी, और उन्हीं की वजह से मैं परेशान हो रहा हूं। निकल गया मुंह से कि रह गए कपड़े, कपड़े मेरे हैं!

मित्र भी हैरान हुआ, घर के लोग भी हैरान हुए कि यह क्या पागलपन की बात है। ख्याल उसको भी आया बोल जाने के बाद, तब पछताया कि यह तो भूल हो गई। पछताया तो और दबाया अपने मन को। बाहर निकल कर क्षमा मांगने लगा कि क्षमा कर दो, बड़ी गलती हो गई। मित्र ने कहा, मैं तो हैरान हुआ कि तुमसे निकल कैसे गया? उसने कहा कि कुछ नहीं, सिर्फ जबान की चूक हो गई। हालांकि जबान की चूक कभी भी नहीं होती है। भीतर कुछ चलता होता है, तो कभी-कभी बेमौके जबान से निकल जाता है। चूक कभी नहीं होती है। माफ कर दो, भूल हो गई। कैसे यह ख्याल आ गया, कुछ समझ में नहीं आता। हालांकि पूरी तरह समझ में आ रहा था कि ख्याल कैसे आया है!

दूसरे मित्र के घर गए। अब वह तय करता रहा रास्ते में कि अब चाहे कुछ भी हो जाए, यह नहीं कहना है कि कपड़े मेरे हैं, पक्का कर लेना है अपने मन को। घर के द्वार पर उसने जाकर बिल्कुल दृढ़ संकल्प कर लिया कि यह बात नहीं उठानी है कि कपड़े मेरे हैं।

लेकिन उस पागल को पता नहीं कि जितना वह दृढ़ संकल्प कर रहा है इस बात का, वह दृढ़ संकल्प बता रहा है इस बात को कि उतने ही जोर से उसके भीतर यह भावना घर कर रही है कि ये कपड़े मेरे हैं। आखिर दृढ़ संकल्प किया क्यों जाता है?

एक आदमी कहता है कि मैं ब्रह्मचर्य का दृढ़ व्रत लेता हूं! उसका मतलब है कि उसके भीतर कामुकता दृढ़ता से धक्के मार रही है। नहीं तो और कारण क्या है? एक आदमी कहता है कि मैं कसम खाता हूं कि आज से कम खाना खाऊंगा! उसका मतलब यह है कि कसम खानी पड़ रही है, ज्यादा खाने का मन है उसका। और तब अनिवार्यरूपेण द्वंद्व पैदा होता है। जिससे हम लड़ना चाहते हैं, वही हमारी कमजोरी है। और तब द्वंद्व पैदा हो जाना स्वाभाविक है।

वह लड़ता हुआ दरवाजे के भीतर गया, सम्हल-सम्हल कर बोला कि मेरे मित्र हैं। लेकिन जब वह बोल रहा है, तब उसको कोई नहीं देख रहा है, उसके मित्र को ही उस घर के लोग देख रहे हैं। तब फिर उसे ख्याल आया..कि मेरा कोट, मेरी पगड़ी। उसने कहा कि दृढ़ता से कसम खाई है, इसकी बात नहीं उठानी है। मेरा क्या है कपड़ा-लत्ता! कपड़े-लत्ते किसी के

होते हैं! यह तो सब संसार है, यह तो सब माया है! लेकिन यह सब समझा रहा है। लेकिन असलियत तो बाहर से भीतर, भीतर से बाहर हो रही है। समझाया कि मेरे मित्र हैं, बचपन के दोस्त हैं, बहुत प्यारे आदमी हैं; रह गए कपड़े, कपड़े उन्हीं के हैं, मेरे नहीं हैं। पर घर के लोगों को ख्याल आया कि कपड़े उन्हीं के हैं, मेरे नहीं हैं..आज तक ऐसा परिचय कभी देखा नहीं गया था।

बाहर निकल कर क्षमा मांगने लगा कि बड़ी भूल हुई जा रही है, मैं क्या करूं, क्या न करूं, यह क्या हो गया है मुझे। आज तक मेरी जिंदगी में कपड़ों ने इस तरह से मुझे नहीं पकड़ा था। किसी को नहीं पकड़ा है, लेकिन अगर तरकीब उपयोग में करें तो कपड़े पकड़ ले सकते हैं। मित्र ने कहा, मैं जाता नहीं तुम्हारे साथ। पर वह हाथ जोड़ने लगा कि नहीं, ऐसा मत करो। जीवन भर के लिए दुख रह जाएगा कि मैंने क्या दुर्व्यवहार किया। अब मैं कसम खाकर कहता हूं कि कपड़ों की बात ही नहीं उठानी है, मैं बिल्कुल भगवान की कसम खाता हूं कि कपड़ों की बात नहीं उठानी है।

और कसम खाने वालों से हमेशा सावधान रहना जरुरी है; क्योंकि जो भी कसम खाता है, उसके भीतर उस कसम से भी मजबूत कोई बैठा है, जिसके खिलाफ वह कसम खा रहा है। और वह जो भीतर बैठा है वह ज्यादा भीतर है, कसम ऊपर है और बाहर है। कसम चेतन मन से खाई गई है। और जो भीतर बैठा है, वह अचेतन की परतों तक समाया हुआ है। अगर मन के दस हिस्से कर दें, तो कसम एक हिस्से ने खाई है, नौ हिस्सा उलटा भीतर खड़ा हुआ है। ब्रह्मचर्य की कसमें एक हिस्सा खा रहा है मन का और नौ हिस्सा परमात्मा की दुहाई दे रहा है, वह जो परमात्मा ने बनाया है वह उसके लिए ही कहे चला जा रहा है।

गए तीसरे मित्र के घर। अब उसने बिल्कुल ही अपनी सांसों तक पर संयम कर रखा है।

संयमी आदमी बड़े खतरनाक होते हैं; क्योंकि उनके भीतर ज्वालामुखी उबल रहा है, और ऊपर से वे संयम साधे हुए हैं। और इस बात को स्मरण रखना कि जिस चीज को साधना पड़ता है..साधने में इतना श्रम लग जाता है कि साधना पूरे वक्त हो नहीं सकती। फिर शिथिल होना पड़ेगा, विश्राम करना पड़ेगा। अगर मैं जोर से मुट्ठी बांध लूं, तो कितनी देर बांधे रख सकता हूं? चैबीस घंटे? जितनी जोर से बांधूंगा, उतनी ही जल्दी थक जाऊंगा और मुट्ठी खुल जाएगी।

जिस चीज में भी श्रम करना पड़ता है, जितना ज्यादा श्रम करना पड़ता है, उतनी जल्दी थकान आ जाती है, शक्ति खतम हो जाती है और उलटा होना शुरू हो जाता है। मुट्ठी बांधी जितनी जोर से, उतनी ही जल्दी मुट्ठी खुल जाएगी। मुट्ठी खुली रखी जा सकती है चैबीस घंटे, लेकिन बांध कर नहीं रखी जा सकती है। जिस काम में श्रम पड़ता है, उस काम को आप जीवन नहीं बना सकते, कभी सहज नहीं हो सकता वह काम। श्रम पड़ेगा, फिर विश्राम का वक्त आएगा ही।

इसलिए जितना सधा हुआ संत होता है उतना ही खतरनाक आदमी होता है; क्योंकि उसका विश्राम का वक्त आएगा, चैबीस घंटे में घंटे भर को उसे शिथिल होना पड़ेगा। उसी बीच दुनिया भर के पाप उसके भीतर खड़े हो जाएंगे। नरक सामने आ जाएगा।

तो उसने बिल्कुल ही अपने को सांस-सांस रोक लिया और कहा कि अब कसम खाता हूं कि इन कपड़ों की बात ही नहीं उठानी है।

लेकिन आप सोच लें उसकी हालत! अगर आप थोड़े-बहुत भी धार्मिक आदमी होंगे, तो आपको अपने अनुभव से भी पता चल सकता है कि उसकी क्या हालत हुई होगी। अगर आपने कसम खाई हो, व्रत लिए हों, संकल्प साधे हों, तो आपको भलीभांति पता होगा कि भीतर क्या हालत हो जाती है।

भीतर गया। उसके माथे से पसीना चू रहा है। इतना श्रम पड़ रहा है। मित्र डरा हुआ है उसके पसीने को देख कर कि वह उसकी सब नसें खिंची हुई हैं। वह बोल रहा है एक-एक शब्द..कि मेरे मित्र हैं, बड़े पुराने दोस्त हैं, बहुत अच्छे आदमी हैं। और एक क्षण को वह रुका। जैसे भीतर से कोई जोर का धक्का आया हो और सब बह गया, बाढ़ आ गई और सब बह गया हो। और उसने कहा कि रह गई कपड़ों की बात, तो मैंने कसम खा ली है कि कपड़ों की बात ही नहीं करनी है।

यह जो इस आदमी के साथ हुआ, वह पूरी मनुष्य-जाति के साथ सेक्स के संबंध में हो गया है। सेक्स को आब्सेशन बना दिया, सेक्स को रोग बना दिया, घाव बना दिया और सब विषाक्त कर दिया। सब विषाक्त कर दिया। छोटे-छोटे बच्चों को समझाया जा रहा है कि सेक्स पाप है। लड़कियों को समझाया जा रहा है, लड़कों को समझाया जा रहा है कि सेक्स पाप है। फिर यह लड़की जवान होगी, यह लड़का जवान होगा; इनकी शादियां होंगी और सेक्स की दुनिया शुरू होगी। और इन दोनों के भीतर यह भाव है कि यह पाप है। और फिर कहा जाएगा स्त्री को कि पति को परमात्मा मान। जो पाप में ले जा रहा है उसको परमात्मा कैसे माना जा सकता है? यह कैसे संभव है कि जो पाप में घसीट रहा है वह परमात्मा हो? और उस लड़के को कहा जाएगा, उस युवक को कहा जाएगा कि तेरी पत्नी है, तेरी साथिनी है, तेरी संगी है। लेकिन जो नरक में ले जा रही है! शास्त्रों में लिखा है कि स्त्री नरक का द्वार है। यह नरक का द्वार संगी और साथिनी? यह मेरा आधा अंग..यह नरक की तरफ जाता हुआ आधा अंग मेरा यह..इसके साथ कौन सा सामंजस्य बन सकता है?

सारी दुनिया का दांपत्य जीवन नष्ट किया है इस शिक्षा ने। और जब दंपति का जीवन नष्ट हो जाए तो प्रेम की कोई संभावना नहीं रही। क्योंकि जब पति और पत्नी प्रेम न कर सकें एक-दूसरे को, जो कि अत्यंत सहज और नैसर्गिक प्रेम है, तो फिर कौन और किसको प्रेम कर सकेगा? इस प्रेम को बढ़ाया जा सकता है कि पत्नी और पति का प्रेम इतना विकसित हो, इतना उदात्त हो, इतना ऊंचा बने कि धीरे-धीरे बांध तोड़ दे और दूसरों तक फैल जाए। यह हो सकता है। लेकिन इसको समाप्त ही कर दिया जाए, तोड़ ही दिया जाए, विषाक्त कर दिया जाए, तो फैलेगा क्या? बढ़ेगा क्या?

रामानुज एक गांव में ठहरे थे और एक आदमी ने आकर कहा कि मुझे परमात्मा को पाना है। तो उन्होंने कहा कि तूने कभी किसी को प्रेम किया है? उस आदमी ने कहा, इस झंझट में मैं कभी पड़ा ही नहीं। प्रेम वगैरह की झंझट में नहीं पड़ा। मुझे तो परमात्मा को खोजना है।

रामानुज ने कहा, तूने कभी झंझट ही नहीं की प्रेम की?

उसने कहा, मैं बिल्कुल सच कहता हूं आपसे।

और बेचारा ठीक ही कह रहा था। क्योंकि धर्म की दुनिया में प्रेम एक डिस-क्वालिफिकेशन है, एक अयोग्यता है। तो उसने सोचा कि अगर मैं कहूं किसी को प्रेम किया है, तो वे कहेंगे, अभी प्रेम-व्रेम छोड़, यह राग-वाग छोड़, पहले इन सबको छोड़ कर आ, तब इधर आना। तो उस बेचारे ने किया भी हो तो वह कहता गया कि मैंने नहीं किया है, नहीं किया है। ऐसा कौन आदमी होगा जिसने थोड़ा-बहुत प्रेम नहीं किया हो?

रामानुज ने तीसरी बार पूछा कि तू कुछ तो बता, थोड़ा-बहुत भी कभी भी किसी को?

उसने कहा, माफ करिए, आप क्यों बार-बार वही बात पूछे चले जा रहे हैं? मैंने प्रेम की तरफ आंख उठा कर नहीं देखा। मुझे तो परमात्मा को खोजना है।

तो रामानुज ने कहा, मुझे क्षमा कर, तू कहीं और खोज। क्योंकि मेरा अनुभव यह है कि अगर तूने किसी को प्रेम किया हो तो उस प्रेम को फिर इतना बड़ा जरूर किया जा सकता है कि वह परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन अगर तूने प्रेम ही नहीं किया है तो तेरे पास कुछ है ही नहीं जिसको बड़ा किया जा सके। बीज ही नहीं है तेरे पास जो वृक्ष बन सके। तो तू जा, कहीं और पूछ।

और जब पति और पत्नी में प्रेम न हो, जिस पत्नी ने अपने पति को प्रेम न किया हो और जिस पति ने अपनी पत्नी को प्रेम न किया हो, वे बेटों को, बच्चों को प्रेम कर सकते हैं, तो आप गलती में हैं। पत्नी उसी मात्रा में बेटे को प्रेम करेगी जिस मात्रा में उसने अपने पति को प्रेम किया है। क्योंकि यह बेटा पति का ही फल है; उसका ही प्रतिफलन है, उसका ही रिफ्लेक्शन है। यह इस बेटे के प्रति जो प्रेम होने वाला है, वह उतना ही होगा, जितना उसने पति को चाहा और प्रेम किया हो। यह पति की ही मूर्ति है जो फिर नई होकर वापस लौट आई है। अगर पति के प्रति प्रेम नहीं है, तो बेटे के प्रति प्रेम

सच्चा कभी भी नहीं हो सकता। और अगर बेटे को प्रेम नहीं किया गया..पालना, पोसना और बड़ा कर देना प्रेम नहीं है..तो बेटा मां को कैसे प्रेम कर सकता है? बाप को कैसे प्रेम कर सकता है?

वह जो यूनिट है जीवन का, परिवार, वह विषाक्त हो गया है..सेक्स को दूषित कहने से, कंडेम करने से, निंदित करने से। और परिवार ही फैल कर पूरा जगत है, पूरा विश्व है। और फिर हम कहते हैं कि प्रेम! प्रेम बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ता! प्रेम कैसे दिखाई पड़ेगा? हालांकि हर आदमी कहता है कि मैं प्रेम करता हूं। मां कहती है, पत्नी कहती है, बाप कहता है, भाई कहता है, बहन कहती है, मित्र कहते हैं कि हम प्रेम करते हैं। सारी दुनिया में हर आदमी कहता है कि हम प्रेम करते हैं। और दुनिया में इकट्ठा देखो तो प्रेम कहीं दिखाई ही नहीं पड़ता! इतने लोग अगर प्रेम करते हैं तो दुनिया में तो प्रेम की वर्षा हो जानी चाहिए थी; प्रेम के फूल ही फूल खिल जाने चाहिए थे; प्रेम के दीये ही दीये जल जाते, घर-घर प्रेम का दीया होता, तो दुनिया में इकट्ठी इतनी रोशनी होती प्रेम की।

लेकिन वहां तो घृणा की रोशनी दिखाई पड़ती है, क्रोध की रोशनी दिखाई पड़ती है, युद्धों की रोशनी दिखाई पड़ती है। प्रेम का तो कोई पता नहीं चलता। झूठी है यह बात! और यह झूठ जब तक हम मानते चले जाएंगे तब तक सत्य की दिशा में खोज भी नहीं हो सकती। कोई किसी को प्रेम नहीं कर रहा है। और जब तक काम के निसर्ग को परिपूर्ण आत्मा से स्वीकृति नहीं मिलती है, तब तक कोई किसी को प्रेम कर भी नहीं सकता है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि काम दिव्य है, डिवाइन है। सेक्स की शक्ति परमात्मा की शक्ति है, ईश्वर की शक्ति है। और इसीलिए तो उससे ऊर्जा पैदा होती है और नया जीवन विकसित होता है। वही तो सबसे रहस्यपूर्ण शक्ति है, वही तो सबसे ज्यादा मिस्टीरियस फोर्स है। उससे दुश्मनी छोड़ दें। अगर आप चाहते हैं कि कभी आपके जीवन में प्रेम की वर्षा हो जाए, उससे दुश्मनी छोड़ दें। उसे आनंद से स्वीकार करें। उसकी पवित्रता को स्वीकार करें, उसकी धन्यता को स्वीकार करें। और खोजें उसमें और गहरे, और गहरे..तो आप हैरान हो जाएंगे! जितनी पवित्रता से काम की स्वीकृति होगी, उतना ही काम पवित्र होता चला जाता है; और जितनी अपवित्रता और पाप की दृष्टि से काम से विरोध होगा, काम उतना ही पापपूर्ण और कुरुप होता चला जाता है।

जब कोई अपनी पत्नी के पास ऐसे जाए जैसे कोई मंदिर के पास जाता है, जब कोई पत्नी अपने पति के पास ऐसे जाए जैसे सच में कोई परमात्मा के पास जाता है। क्योंकि जब दो प्रेमी काम से निकट आते हैं, जब वे संभोग से गुजरते हैं, तब सच में ही वे परमात्मा के मंदिर के निकट से गुजर रहे हैं। वहीं परमात्मा काम कर रहा है, उनकी उस निकटता में। वहीं परमात्मा की सृजन शक्ति काम कर रही है।

और मेरी अपनी दृष्टि यह है कि मनुष्य को समाधि का, ध्यान का जो पहला अनुभव मिला हो कभी भी मनुष्य के इतिहास में, तो वह संभोग के क्षण में मिला है और कभी नहीं। संभोग के क्षण में ही पहली बार यह स्मरण आया है आदमी को कि इतने आनंद की वर्षा हो सकती है। और जिन्होंने सोचा, जिन्होंने मेडिटेट किया, जिन लोगों ने काम के संबंध पर और मैथुन पर चिंतन किया और ध्यान किया, उन्हें यह दिखाई पड़ा कि काम के क्षण में, मैथुन के क्षण में, संभोग के क्षण में मन विचारों से शून्य हो जाता है। एक क्षण को मन के सारे विचार रुक जाते हैं। और वह विचारों का रुक जाना और वह मन का ठहर जाना ही आनंद की वर्षा का कारण होता है।

तब उन्हें सीक्रेट मिल गया, राज मिल गया कि अगर मन को विचारों से मुक्त किया जा सके किसी और विधि से भी, तो भी इतना ही आनंद मिल सकता है। और तब समाधि और योग की सारी व्यवस्थाएं विकसित हुईं, जिनमें ध्यान और सामायिक और मेडिटेशन और प्रेयर, इनकी सारी व्यवस्थाएं विकसित हुईं। इन सबके मूल में संभोग का अनुभव है। और फिर मनुष्य को अनुभव हुआ कि बिना संभोग में जाए भी चित्त शून्य हो सकता है। और जो रस की अनुभूति संभोग में हुई थी, वह बिना संभोग के भी बरस सकती है। फिर संभोग क्षणिक हो सकता है, क्योंकि शक्ति और ऊर्जा का वह निकास और बहाव है। लेकिन ध्यान सतत हो सकता है। तो मैं आपसे कहना चाहता हूं कि एक युगल संभोग के क्षण में जिस आनंद को

अनुभव करता है, एक योगी चैबीस घंटे उस आनंद को अनुभव करने लगता है। लेकिन इन दोनों आनंदों में बुनियादी विरोध नहीं है। और इसलिए जिन्होंने कहा कि विषयानंद और ब्रह्मानंद भाई-भाई हैं, उन्होंने जरूर सत्य कहा है। वे सहोदर हैं, एक ही उदर से पैदा हुए हैं, एक ही अनुभव से विकसित हुए हैं। उन्होंने निश्चित ही सत्य कहा है।

तो पहला सूत्र आपसे कहना चाहता हूं: अगर चाहते हैं कि पता चले कि प्रेम-तत्व क्या है, तो पहला सूत्र है..काम की पवित्रता, दिव्यता, उसकी ईश्वरीय अनुभूति की स्वीकृति, उसको परम हृदय से, पूर्ण हृदय से अंगीकार। और आप हैरान हो जाएंगे, जितने परिपूर्ण हृदय से काम की स्वीकृति होगी, उतने ही आप काम से मुक्त होते चले जाएंगे। जितना अस्वीकार होता है, उतने ही हम बंधते हैं। जैसा वह फकीर कपड़ों से बंध गया। जितना स्वीकार होता है, उतने हम मुक्त होते हैं।

अगर परिपूर्ण स्वीकार है, टोटल एक्सेप्टबिलिटी है जीवन का जो निसर्ग है उसकी, तो आप पाएंगे कि वह परिपूर्ण स्वीकृति को मैं आस्तिकता कहता हूं, वही आस्तिकता व्यक्ति को मुक्त करती है।

नास्तिक मैं उनको कहता हूं जो जीवन के निसर्ग का अस्वीकार करते हैं, निषेध करते हैं..यह बुरा है, यह पाप है, यह विष है, यह छोड़ो, यह छोड़ो, यह छोड़ो। जो छोड़ने की बातें कर रहे हैं, वे ही नास्तिक हैं।

जीवन जैसा है, उसे स्वीकार करो और जीओ उसकी परिपूर्णता में। वही परिपूर्णता रोज-रोज सीढ़ियां-सीढ़ियां ऊपर उठाती जाती है। वही स्वीकृति मनुष्य को ऊपर ले जाती है। और एक दिन उसके दर्शन होते हैं, जिसका काम में पता भी नहीं चलता था। काम अगर कोयला था तो एक दिन हीरा भी प्रकट होता है प्रेम का। तो पहला सूत्र यह है।

दूसरा सूत्र आपसे कहना चाहता हूं। और वह दूसरा सूत्र भी संस्कृति ने और आज तक की सभ्यता ने और धर्मों ने हमारे भीतर मजबूत किया है। दूसरा सूत्र भी स्मरणीय है। क्योंकि पहला सूत्र तो काम की ऊर्जा को प्रेम बना देगा और दूसरा सूत्र द्वार की तरह रोके हुए है उस ऊर्जा को बहने से, वह बह नहीं पाएगी। वह दूसरा सूत्र है मनुष्य का यह भाव कि मैं हूं; ईगो, उसका अहंकार, कि मैं हूं। बुरे लोग तो कहते ही हैं कि मैं हूं। अच्छे लोग और जोर से कहते हैं कि मैं हूं..और मुझे स्वर्ग जाना है, और मोक्ष जाना है, और मुझे यह करना है, और मुझे वह करना है। लेकिन मैं..वह मैं खड़ा हुआ है वहां भीतर।

और जिस आदमी का मैं जितना मजबूत है, उतना ही उस आदमी की सामथ्र्य दूसरे से संयुक्त हो जाने की कम हो जाती है। क्योंकि मैं एक दीवाल है, एक घोषणा है कि मैं हूं। मैं की घोषणा कह देती है: तुम तुम हो, मैं मैं हूं। दोनों के बीच फासला है। फिर मैं कितना ही प्रेम करूं और आपको अपनी छाती से लगा लूं, लेकिन फिर भी हम दो हैं। छातियां कितनी ही निकट आ जाएं, फिर भी बीच में फासला है..मैं मैं हूं, तुम तुम हो। इसीलिए निकटतम अनुभव भी निकट नहीं ला पाते। शरीर पास बैठ जाते हैं, आदमी दूर-दूर बने रह जाते हैं। जब तक भीतर मैं बैठा हुआ है, तब तक दूसरे का भाव नष्ट नहीं होता।

सात्र ने कहीं एक अदभुत वचन कहा है। कहा है कि दि अदर इ.ज हेल। वह जो दूसरा है, वही नरक है। लेकिन सात्र ने यह नहीं कहा कि व्हाय दि अदर इ.ज अदर? वह दूसरा दूसरा क्यों है? वह दूसरा दूसरा इसलिए है कि मैं मैं हूं। और जब तक मैं मैं हूं, तब तक दुनिया में हर चीज दूसरी है, अन्य है, भिन्न है। और जब तक भिन्नता है, तब तक प्रेम का अनुभव नहीं हो सकता।

प्रेम है एकात्म का अनुभव।

प्रेम है इस बात का अनुभव कि गिर गई दीवाल और दो ऊर्जाएं मिल गईं और संयुक्त हो गईं।

प्रेम है इस बात का अनुभव कि एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति की सारी दीवालें गिर गईं और प्राण संयुक्त हुए, मिले और एक हो गए।

जब यही अनुभव एक व्यक्ति और समस्त के बीच फलित होता है, तो उस अनुभव को मैं कहता हूं..परमात्मा। और जब दो व्यक्तियों के बीच फलित होता है, तो उसे मैं कहता हूं..प्रेम।

अगर मेरे और किसी दूसरे व्यक्ति के बीच यह अनुभव फलित हो जाए कि हमारी दीवालें गिर जाएं, हम किसी भीतर के तल पर एक हो जाएं, एक संगीत, एक धारा, एक प्राण, तो यह अनुभव है प्रेम। और अगर ऐसा ही अनुभव मेरे और समस्त के बीच घटित हो जाए कि मैं विलीन हो जाऊं और सब और मैं एक हो जाऊं, तो यह अनुभव है परमात्मा।

इसलिए मैं कहता हूं: प्रेम है सीढ़ी और परमात्मा है उस यात्रा की अंतिम मंजिल। यह कैसे संभव है कि दूसरा मिट जाए? जब तक मैं न मिटूं तब तक दूसरा कैसे मिट सकता है? वह दूसरा पैदा किया है मेरे मैं की प्रतिध्वनि ने। जितने जोर से मैं चिल्लाता हूं कि मैं, उतने ही जोर से वह दूसरा पैदा हो जाता है। वह दूसरी प्रतिध्वनि है, उस तरफ इको हो रही है मेरे मैं की। और यह अहंकार, यह ईगो द्वार पर दीवाल बन कर खड़ी है।

और मैं है क्या? कभी सोचा आपने कि यह मैं है क्या? आपका हाथ है मैं? आपका पैर है? आपका मस्तिष्क है? आपका हृदय है? क्या है आपका मैं?

अगर आप एक क्षण भी शांत होकर भीतर खोजने जाएंगे कि कहां है मैं, कौन सी चीज है मैं? तो आप एकदम हैरान रह जाएंगे..भीतर कोई मैं खोजे से मिलने को नहीं है। जितना गहरा खोजेंगे, उतना ही पाएंगे..भीतर एक सन्नाटा और शून्य है, वहां कोई आई नहीं, वहां कोई मैं नहीं, वहां कोई ईगो नहीं।

एक भिक्षु नागसेन को एक सम्राट मिलिंद ने निमंत्रण दिया था कि तुम आओ दरबार में। तो जो राजदूत गया था निमंत्रण देने, उसने नागसेन को कहा कि भिक्षु नागसेन, आपको बुलाया है सम्राट मिलिंद ने। मैं निमंत्रण देने आया हूं। तो वह नागसेन कहने लगा, मैं चलूंगा जरूर; लेकिन एक बात विनय कर दूं, पहले ही कह दूं कि भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं। यह केवल एक नाम है, कामचलाऊ नाम है। आप कहते हैं तो मैं चलूंगा जरूर, लेकिन ऐसा कोई आदमी कहीं है नहीं।

राजदूत ने जाकर सम्राट को कह दिया कि बड़ा अजीब आदमी है वह। वह कहने लगा कि मैं चलूंगा जरूर, लेकिन ध्यान रहे कि भिक्षु नागसेन जैसा कहीं कोई है नहीं, यह केवल एक कामचलाऊ नाम है। सम्राट ने कहा, अजीब सी बात है, जब वह कहता है, मैं चलूंगा। आएगा वह!

वह आया भी रथ पर बैठ कर। सम्राट ने द्वार पर स्वागत किया और कहा, भिक्षु नागसेन, हम स्वागत करते हैं आपका। वह हंसने लगा। उसने कहा कि स्वागत स्वीकार करता हूं, लेकिन स्मरण रहे, भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं।

सम्राट कहने लगा, बड़ी पहेली की बातें करते हैं आप। अगर आप नहीं हैं तो कौन है? कौन आया है यहां? कौन स्वीकार कर रहा है स्वागत? कौन दे रहा है उत्तर?

नागसेन मुड़ा और उसने कहा कि देखते हैं, सम्राट मिलिंद, यह रथ खड़ा है जिस पर मैं आया। सम्राट ने कहा, हां, यह रथ है। तो भिक्षु नागसेन पूछने लगा, घोड़ों को निकाल कर अलग कर लिया जाए। घोड़े अलग कर लिए गए। और उसने पूछा सम्राट से, ये घोड़े रथ हैं?

सम्राट ने कहा, घोड़े कैसे रथ हो सकते हैं? घोड़े अलग कर दिए गए। सामने के डंडे जिनसे घोड़े बंधे थे, खिंचवा लिए गए। और उसने पूछा कि ये रथ हैं?

सिर्फ दो डंडे कैसे रथ हो सकते हैं? डंडे अलग कर दिए गए। चाक निकलवा लिए और कहा, ये रथ हैं?

सम्राट ने कहा, ये चाक हैं, ये रथ नहीं हैं।

और एक-एक अंग रथ का निकलता चला गया। और एक-एक अंग पर सम्राट को कहना पड़ा कि नहीं, ये रथ नहीं हैं। फिर आखिर पीछे शून्य बच गया, वहां कुछ भी न बचा। भिक्षु नागसेन पूछने लगा, रथ कहां है अब? रथ कहां है अब? और जितनी चीजें मैंने निकालीं, तुमने कहा, ये भी रथ नहीं! ये भी रथ नहीं! ये भी रथ नहीं! अब रथ कहां है?

तो सम्राट चैंक कर खड़ा रह गया..रथ पीछे बचा भी नहीं था और जो चीजें निकल गई थीं उनमें कोई रथ था भी नहीं।

तो वह भिक्षु कहने लगा, समझे आप? रथ एक जोड़ था। रथ कुछ चीजों का संग्रह मात्र था। रथ का अपना होना नहीं है कोई, ईगो नहीं है कोई। रथ एक जोड़ है।

आप खोजें..कहां है आपका मैं? और आप पाएंगे कि अनंत शक्तियों के एक जोड़ हैं; मैं कहीं भी नहीं है। और एक-एक अंग आप सोचते चले जाएं तो एक-एक अंग समाप्त होता चला जाता है, फिर पीछे शून्य रह जाता है।

उसी शून्य से प्रेम का जन्म होता है, क्योंकि वह शून्य आप नहीं हैं, वह शून्य परमात्मा है।

एक गांव में एक आदमी ने मछलियों की एक दुकान खोली थी। बड़ी दुकान थी, उस गांव में पहली दुकान थी। तो उसने एक बहुत खूबसूरत तख्ती बनवाई और उस पर लिखाया..फ्रेश फिश सोल्ड हियर..यहां ताजी मछलियां बेची जाती हैं।

पहले ही दिन दुकान खुली और एक आदमी आया और कहने लगा, फ्रेश फिश सोल्ड हियर? ताजी मछलियां? कहीं बासी मछलियां भी बेची जाती हैं? ताजी लिखने की क्या जरूरत?

दुकानदार ने सोचा कि बात तो ठीक है। इससे और व्यर्थ बासे का भी ख्याल पैदा होता है। उसने फ्रेश अलग कर दिया, ताजा अलग कर दिया। तख्ती रह गई..फिश सोल्ड हियर..मछलियां यहां बेची जाती हैं।

दूसरे दिन एक बूढ़ी औरत आई और उसने कहा कि मछलियां यहां बेची जाती हैं..सोल्ड हियर? कहीं और कहीं भी बेचते हो?

उस आदमी ने कहा कि यह हियर बिल्कुल फिजूल है। उसने तख्ती पर एक शब्द और अलग कर दिया, रह गया..फिश सोल्ड।

तीसरे दिन एक आदमी आया और वह कहने लगा, फिश सोल्ड? मछलियां बेची जाती हैं? मुफ्त भी देते हो क्या?

उस आदमी ने कहा, यह सोल्ड भी बेकार है। उस सोल्ड को भी अलग कर दिया। अब रह गई वहां तख्ती..फिश।

एक बुड्ढा आया और कहने लगा, फिश? अंधे को भी मील भर दूर से बास मिल जाती है। यह तख्ती काहे के लिए लटकाई हुई है यहां?

फिश भी चली गई। खाली तख्ती रह गई वहां।

और एक आदमी आया और उसने कहा, यह तख्ती किसलिए लगाई है? इससे दुकान पर आड़ पड़ती है।

वह तख्ती भी चली गई, वहां कुछ भी नहीं रह गया। इलीमिनेशन होता गया। एक-एक चीज हटती चली गई। पीछे जो शेष रह गया..शून्य।

उस शून्य से प्रेम का जन्म होता है, क्योंकि उस शून्य में दूसरे के शून्य से मिलने की क्षमता है। सिर्फ शून्य ही शून्य से मिल सकता है, और कोई नहीं। दो शून्य मिल सकते हैं, दो व्यक्ति नहीं। दो इंडिविजुअल नहीं मिल सकते; दो वैक्यूम, दो एंप्टीनेस मिल सकते हैं, क्योंकि बाधा अब कोई भी नहीं है। शून्य की कोई दीवाल नहीं होती, और हर चीज की दीवाल होती है।

तो दूसरी बात स्मरणीय है: व्यक्ति जब मिटता है, नहीं रह जाता; पाता है कि हूं ही नहीं; जो है वह मैं नहीं हूं, जो है वह सब है; तब द्वार गिरता है, दीवाल टूटती है। और तब वह गंगा बहती है जो भीतर छिपी है और तैयार है। वह शून्य की प्रतीक्षा कर रही है कि कोई शून्य हो जाए तो उससे बह उठूं।

हम एक कुआं खोदते हैं। पानी भीतर है; पानी कहीं से लाना नहीं होता। लेकिन बीच में मिट्टी-पत्थर पड़े हैं, उनको निकाल कर बाहर कर देते हैं। करते क्या हैं हम? करते हैं हम..एक शून्य बनाते हैं, एक खाली जगह बनाते हैं, एक एंप्टीनेस बनाते हैं। कुआं खोदने का मतलब है खाली जगह बनाना। ताकि खाली जगह में, जो भीतर छिपा हुआ पानी है, वह प्रकट होने के लिए जगह पा जाए, स्पेस पा जाए। वह भीतर है, उसको जगह चाहिए प्रकट होने को। जगह नहीं मिल रही है; भरा हुआ है कुआं मिट्टी-पत्थर से। मिट्टी-पत्थर हमने अलग कर दिए, वह पानी उबल कर बाहर आ गया।

आदमी के भीतर प्रेम भरा हुआ है। स्पेस चाहिए, जगह चाहिए, जहां वह प्रकट हो जाए।

और हम भरे हुए हैं अपने मैं से। हर आदमी चिल्लाए चला जा रहा है..मैं। और स्मरण रखें, जब तक आपकी आत्मा चिल्लाती है मैं, तब तक आप मिट्टी-पत्थर से भरे हुए कुएं हैं। आपके कुएं में प्रेम के झरने नहीं फूटेंगे, नहीं फूट सकते हैं।

मैंने सुना है, एक बहुत पुराना वृक्ष था। आकाश में सम्राट की तरह उसके हाथ फैले हुए थे। उस पर फूल आते थे तो दूर-दूर से पक्षी सुगंध लेने आते। उस पर फल लगते थे तो तितलियां उड़तीं। उसकी छाया, उसके फैले हाथ, हवाओं में उसका वह खड़ा रुप आकाश में बड़ा सुंदर था। एक छोटा बच्चा उसकी छाया में रोज खेलने आता था। और उस बड़े वृक्ष को उस छोटे बच्चे से प्रेम हो गया। बड़ों को छोटों से प्रेम हो सकता है, अगर बड़ों को पता न हो कि हम बड़े हैं। वृक्ष को कोई पता नहीं था कि मैं बड़ा हूं..यह पता सिर्फ आदमी को होता है..इसलिए उसका प्रेम हो गया।

अहंकार हमेशा अपने से बड़ों को प्रेम करने की कोशिश करता है। अहंकार हमेशा अपने से बड़ों से संबंध जोड़ता है। प्रेम के लिए कोई बड़ा-छोटा नहीं। जो आ जाए, उसी से संबंध जुड़ जाता है।

वह एक छोटा सा बच्चा खेलता आता था उस वृक्ष के पास; उस वृक्ष का उससे प्रेम हो गया। लेकिन वृक्ष की शाखाएं ऊपर थीं, बच्चा छोटा था, तो वृक्ष अपनी शाखाएं उसके लिए नीचे झुकाता, ताकि वह फल तोड़ सके, फूल तोड़ सके।

प्रेम हमेशा झुकने को राजी है, अहंकार कभी भी झुकने को राजी नहीं है। अहंकार के पास जाएंगे तो अहंकार के हाथ और ऊपर उठ जाएंगे, ताकि आप उन्हें छू न सकें। क्योंकि जिसे छू लिया जाए वह छोटा आदमी है; जिसे न छुआ जा सके, दूर सिंहासन पर दिल्ली में हो, वह आदमी बड़ा आदमी है।

वह वृक्ष की शाखाएं नीचे झुक आतीं जब वह बच्चा खेलता हुआ आता! और जब बच्चा उसके फूल तोड़ लेता, तो वह वृक्ष बहुत खुश होता। उसके प्राण आनंद से भर जाते।

प्रेम जब भी कुछ दे पाता है, तब खुश हो जाता है।

अहंकार जब भी कुछ ले पाता है, तभी खुश होता है।

फिर वह बच्चा बड़ा होने लगा। वह कभी उसकी छाया में सोता, कभी उसके फल खाता, कभी उसके फूलों का ताज बना कर पहनता और जंगल का सम्राट हो जाता।

प्रेम के फूल जिसके पास भी बरसते हैं, वही सम्राट हो जाता है। और जहां भी अहंकार घिरता है, वहीं सब अंधकार हो जाता है, आदमी दीन और दरिद्र हो जाता है।

वह लड़का फूलों का ताज पहनता और नाचता, और वृक्ष बहुत खुश होता, उसके प्राण आनंद से भर जाते। हवाएं सनसनातीं और वह गीत गाता।

फिर लड़का और बड़ा हुआ। वह वृक्ष के ऊपर भी चढ़ने लगा, उसकी शाखाओं से झूलने भी लगा। वह उसकी शाखाओं पर विश्राम भी करता, और वृक्ष बहुत आनंदित होता।

प्रेम आनंदित होता है, जब प्रेम किसी के लिए छाया बन जाता है।

अहंकार आनंदित होता है, जब किसी की छाया छीन लेता है।

लेकिन लड़का बड़ा होता चला गया, दिन बढ़ते चले गए। जब लड़का बड़ा हो गया तो उसे और दूसरे काम भी दुनिया में आ गए, महत्वाकांक्षाएं आ गईं। उसे परीक्षाएं पास करनी थीं, उसे मित्रों को जीतना था। वह फिर कभी-कभी आता, कभी नहीं भी आता, लेकिन वृक्ष उसकी प्रतीक्षा करता कि वह आए, वह आए। उसके सारे प्राण पुकारते कि आओ, आओ!

प्रेम निरंतर प्रतीक्षा करता है कि आओ, आओ! प्रेम एक प्रतीक्षा है, एक अवेटिंग है।

लेकिन वह कभी आता, कभी नहीं आता, तो वृक्ष उदास हो जाता।

प्रेम की एक ही उदासी है..जब वह बांट नहीं पाता, तो उदास हो जाता है। जब वह दे नहीं पाता, तो उदास हो जाता है। और प्रेम की एक ही धन्यता है कि जब वह बांट देता है, लुटा देता है, तो वह आनंदित हो जाता है।

फिर लड़का और बड़ा होता चला गया और वृक्ष के पास आने के दिन कम होते चले गए। जो आदमी जितना बड़ा होता चला जाता है महत्वाकांक्षा के जगत में, प्रेम के निकट आने की सुविधा उतनी ही कम होती चली जाती है। उस लड़के की एंबीशन, महत्वाकांक्षा बढ़ रही थी। कहां वृक्ष! कहां जाना!

फिर एक दिन वहां से निकलता था तो वृक्ष ने उसे कहा, सुनो! हवाओं में उसकी आवाज गूंजी कि सुनो, तुम आते नहीं, मैं प्रतीक्षा करता हूं! मैं तुम्हारे लिए प्रतीक्षा करता हूं, राह देखता हूं, बाट जोहता हूं!

उस लड़के ने कहा, क्या है तुम्हारे पास जो मैं आऊं? मुझे रुपये चाहिए!

हमेशा अहंकार पूछता है कि क्या है तुम्हारे पास जो मैं आऊं? अहंकार मांगता है कि कुछ हो तो मैं आऊं। न कुछ हो तो आने की कोई जरूरत नहीं। अहंकार एक प्रयोजन है, एक परप.ज है। प्रयोजन पूरा होता हो तो मैं आऊं! अगर कोई प्रयोजन न हो तो आने की जरूरत क्या है!

और प्रेम निष्प्रयोजन है। प्रेम का कोई प्रयोजन नहीं। प्रेम अपने में ही अपना प्रयोजन है, वह बिल्कुल परप.जलेस है।

वृक्ष तो चैंक गया। उसने कहा कि तुम तभी आओगे जब मैं कुछ तुम्हें दे सकूं? मैं तुम्हें सब दे सकता हूं। क्योंकि प्रेम कुछ भी रोकना नहीं चाहता। जो रोक ले वह प्रेम नहीं है। अहंकार रोकता है। प्रेम तो बेशर्त दे देता है। लेकिन रुपये मेरे पास नहीं हैं। ये रुपये तो सिर्फ आदमी की ईजाद है, वृक्षों ने यह बीमारी नहीं पाली है।

उस वृक्ष ने कहा, इसीलिए तो हम इतने आनंदित होते हैं, इतने फूल खिलते हैं, इतने फल लगते हैं, इतनी बड़ी छाया होती है; हम इतना नाचते हैं आकाश में, हम इतने गीत गाते हैं; पक्षी हम पर आते हैं और संगीत का कलरव करते हैं; क्योंकि हमारे पास रुपये नहीं हैं। जिस दिन हमारे पास भी रुपये हो जाएंगे, हम भी आदमी जैसे दीन-हीन मंदिरों में बैठ कर सुनेंगे कि शांति कैसे पाई जाए, प्रेम कैसे पाया जाए। नहीं-नहीं, हमारे पास रुपये नहीं हैं।

तो उसने कहा, फिर मैं क्या आऊं तुम्हारे पास! जहां रुपये हैं, मुझे वहां जाना पड़ेगा। मुझे रुपयों की जरूरत है।

अहंकार रुपया मांगता है, क्योंकि रुपया शक्ति है। अहंकार शक्ति मांगता है।

उस वृक्ष ने बहुत सोचा, फिर उसे ख्याल आया..तो तुम एक काम करो, मेरे सारे फलों को तोड़ कर ले जाओ और बेच दो तो शायद रुपये मिल जाएं।

और उस लड़के को भी ख्याल आया। वह चढ़ा और उसने सारे फल तोड़ डाले। कच्चे भी गिरा डाले। शाखाएं भी टूटीं, पत्ते भी टूटे। लेकिन वृक्ष बहुत खुश हुआ, बहुत आनंदित हुआ।

टूट कर भी प्रेम आनंदित होता है।

अहंकार पाकर भी आनंदित नहीं होता, पाकर भी दुखी होता है।

और उस लड़के ने तो धन्यवाद भी नहीं दिया पीछे लौट कर।

लेकिन उस वृक्ष को पता भी नहीं चला। उसे तो धन्यवाद मिल गया इसी में कि उसने उसके प्रेम को स्वीकार किया और उसके फलों को ले गया और बाजार में बेचा।

लेकिन फिर वह बहुत दिनों तक नहीं आया। उसके पास रुपये थे और रुपयों से रुपये पैदा करने की वह कोशिश में लग गया था। वह भूल गया। वर्ष बीत गए। और वृक्ष उदास है और उसके प्राणों में रस बह रहा है कि वह आए उसका प्रेमी और उसके रस को ले जाए। जैसे किसी मां के स्तन में दूध भरा हो और उसका बेटा खो गया हो, और उसके सारे प्राण तड़प रहे हों कि उसका बेटा कहां है जिसे वह खोजे, जो उसे हलका कर दे, निर्भार कर दे। ऐसे उस वृक्ष के प्राण पीड़ित होने लगे कि वह आए, आए, आए! उसकी सारी आवाज यही गूंजने लगी कि आओ!

बहुत दिनों के बाद वह आया। अब वह लड़का तो प्रौढ़ हो गया था। वृक्ष ने उससे कहा कि आओ मेरे पास! मेरे आलिंगन में आओ!

उसने कहा, छोड़ो यह बकवास। ये बचपन की बातें हैं।

अहंकार प्रेम को पागलपन समझता है, बचपन की बातें समझता है।

उस वृक्ष ने कहा, आओ, मेरी डालियों से झूलो! नाचो!

उसने कहा, छोड़ो ये फिजूल की बातें। मुझे एक मकान बनाना है। मकान दे सकते हो तुम?

वृक्ष ने कहा, मकान? हम तो बिना मकान के ही रहते हैं। मकान में तो सिर्फ आदमी रहता है। दुनिया में और कोई मकान में नहीं रहता, सिर्फ आदमी रहता है। सो देखते हो आदमी की हालत..मकान में रहने वाले आदमी की हालत? उसके मकान जितने बड़े होते जाते हैं, आदमी उतना छोटा होता चला जाता है। हम तो बिना मकान के रहते हैं। लेकिन एक बात हो सकती है कि तुम मेरी शाखाओं को काट कर ले जाओ तो शायद तुम मकान बना लो।

और वह प्रौढ़ कुल्हाड़ी लेकर आ गया और उसने उस वृक्ष की शाखाएं काट डालीं! वृक्ष एक ठूंठ रह गया, नंगा। लेकिन वृक्ष बहुत आनंदित था।

प्रेम सदा आनंदित है, चाहे उसके अंग भी कट जाएं। लेकिन कोई ले जाए, कोई ले जाए, कोई बांट ले, कोई सम्मिलित हो जाए, साझीदार हो जाए।

और उस लड़के ने तो पीछे लौट कर भी नहीं देखा! उसने मकान बना लिया।

और वक्त गुजरता गया। वह ठूंठ राह देखता, वह चिल्लाना चाहता, लेकिन अब उसके पास पत्ते भी नहीं थे, शाखाएं भी नहीं थीं। हवाएं आतीं और वह बोल भी न पाता, बुला भी न पाता। लेकिन उसके प्राणों में तो एक ही गूंज थी..कि आओ! आओ!

और बहुत दिन बीत गए। तब वह बूढ़ा आदमी हो गया था वह बच्चा। वह निकल रहा था पास से। वृक्ष के पास आकर खड़ा हो गया। तो वृक्ष ने पूछा..क्या कर सकता हूं और मैं तुम्हारे लिए? तुम बहुत दिनों बाद आए!

उसने कहा, तुम क्या कर सकोगे? मुझे दूर देश जाना है धन कमाने के लिए। मुझे एक नाव की जरूरत है!

तो उसने कहा, तुम मुझे और काट लो तो मेरी इस पींड़ से नाव बन जाएगी। और मैं बहुत धन्य होऊंगा कि मैं तुम्हारी नाव बन सकूं और तुम्हें दूर देश ले जा सकूं। लेकिन तुम जल्दी लौट आना और सकुशल लौट आना। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा।

और उसने आरे से उस वृक्ष को काट डाला। तब वह एक छोटा सा ठूंठ रह गया। और वह दूर यात्रा पर निकल गया। और वह ठूंठ भी प्रतीक्षा करता रहा कि वह आए, आए। लेकिन अब उसके पास कुछ भी नहीं है देने को। शायद वह नहीं आएगा, क्योंकि अहंकार वहीं आता है जहां कुछ पाने को है, अहंकार वहां नहीं जाता जहां कुछ पाने को नहीं है।

मैं उस ठूंठ के पास एक रात मेहमान हुआ था, तो वह ठूंठ मुझसे बोला कि वह मेरा मित्र अब तक नहीं आया! और मुझे बड़ी पीड़ा होती है कि कहीं नाव डूब न गई हो, कहीं वह भटक न गया हो, कहीं किसी दूर किनारे पर विदेश में कहीं भूल न गया हो, कहीं वह डूब न गया हो, कहीं वह समाप्त न हो गया हो! एक खबर भर कोई मुझे ला दे..अब मैं मरने के करीब हूं..एक खबर भर आ जाए कि वह सकुशल है, फिर कोई बात नहीं! फिर सब ठीक है! अब तो मेरे पास देने को कुछ भी नहीं है, इसलिए बुलाऊं भी तो शायद वह नहीं आएगा, क्योंकि वह लेने की ही भाषा समझता है।

अहंकार लेने की भाषा समझता है।

प्रेम देने की भाषा है।

इससे ज्यादा और कुछ मैं नहीं कहूंगा।

जीवन एक ऐसा वृक्ष बन जाए और उस वृक्ष की शाखाएं अनंत तक फैल जाएं, सब उसकी छाया में हों और सब तक उसकी बांहें फैल जाएं, तो पता चल सकता है कि प्रेम क्या है।

प्रेम का कोई शास्त्र नहीं है, न कोई परिभाषा है, न प्रेम का कोई सिद्धांत है।

तो मैं बहुत हैरानी में था कि क्या कहूंगा आपसे कि प्रेम क्या है। वह तो बताना मुश्किल है। आकर बैठ सकता हूं..अगर मेरी आंखों में दिखाई पड़ जाए तो दिखाई पड़ सकता है, अगर मेरे हाथों में दिखाई पड़ जाए तो दिखाई पड़ सकता है। मैं कह सकता हूं..यह है प्रेम।

लेकिन प्रेम क्या है, अगर मेरी आंख में न दिखाई पड़े, मेरे हाथ में न दिखाई पड़े, तो शब्दों से बिल्कुल भी दिखाई नहीं पड़ सकता है कि प्रेम क्या है!

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

भय या प्रेम

प्रेम है द्वार पभु का-1

मेरे प्रिय आत्मन्!

मनुष्य-जाति भय से, चिंता से, दुख और पीड़ा से आक्रांत है, और पांच हजार वर्षों से..आज ही नहीं। जब आज ऐसी बात कही जाती है कि मनुष्यता आज भय से, चिंता से, तनाव से, अशांति से भर गई है तो ऐसा भ्रम पैदा होता है जैसे पहले लोग शांत थे, आनंदित थे।

यह बात शत-प्रतिशत असत्य है कि पहले लोग शांत थे और चिंता-रहित थे। आदमी जैसा आज है वैसा हमेशा था। ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध लोगों को समझा रहे थे, शांत होने के लिए। अगर लोग शांत थे, तो शांति की बात समझानी फिजूल थी? पांच हजार वर्ष पहले उपनिषदों के ऋषि भी लोगों को समझा रहे थे आनंदित होने के लिए; लोगों को समझा रहे थे दुख से मुक्त होने के लिए; लोगों को समझा रहे थे प्रेम करने के लिए। अगर लोग प्रेमपूर्ण थे और शांत थे तो उपनिषद के ऋषि पागल रहे होंगे। किसको समझा रहे थे?

दुनिया में अब तक एक भी ऐसी पुरानी से पुरानी किताब नहीं है जो यह न कहती हो कि आजकल के लोग अशांत हो गए हैं। मैं छह हजार वर्ष पुरानी चीन की एक किताब की भूमिका पढ़ रहा था, उस भूमिका में लिखा है कि आजकल के लोग अशांत है, नास्तिक हैं, बहुत बुरे हो गए हैं, पहले के लोग अच्छे थे। छह हजार साल पहले की किताब कहती है, पहले के लोग अच्छे थे। ये पहले के लोग कब थे? ये पहले के लोगों की बात एक मिथ, एक कल्पना और सपने से ज्यादा नहीं है। आदमी हमेशा से अशांत रहा है। और इसलिए अगर हम यह समझ लें कि आज अशांत है, आज भय से आक्रांत है, आज चिंतित और दुखी है, तो हम जो भी निदान खोजेंगे, जो भी मार्ग खोजेंगे, वह गलत होगा। क्योंकि मार्ग खोजना है..।

आज तक की पूरी मनुष्यता किन्हीं अर्थों में गलत रही है, भ्रांत रही है। आज का आदमी ही नहीं, आज तक की पूरी मनुष्यता ही कुछ गलत रही है। और उसने अपनी गलती को सुधारने के लिए जो कुछ भी किया है उससे गलती मिटी नहीं, उससे और बढ़ती चली गई।

मनुष्य हमेशा से भयभीत है। और भय, फियर के आधार पर ही उसका सारा जीवन खड़ा हुआ है। जब वह मंदिरों में प्रार्थना करता है तब भी भय के कारण। उसने जो भगवान गढ़ रखे हैं वे भी भय से ही उत्पन्न हुए हैं। जब वह राजधानियों में पदों की यात्रा करता है, बड़े पदों पर पहुंचना चाहता है, तब भी भय के ही कारण। क्योंकि जितने बड़े पद पर कोई होता है उतनी सत्ता और शक्ति उसके हाथ में होती है, उतना भय कम मालूम होगा। इस आशा में आदमी दौड़ता है, दौड़ता है। चंगीज और तैमूर और नेपोलियन और सिकंदर और हिटलर और स्टैलिन सभी भयभीत लोग हैं। सभी घबड़ाए हुए लोग हैं। सभी डरे हुए लोग हैं। उस भय से बचने के लिए बड़ी ताकत हाथ में हो, इसकी चेष्टा में लगे हुए हैं। धन की जो खोज कर रहा है वह भी भयभीत आदमी है। धन से एक सुरक्षा, एक सिक्युरिटी मिल सकेगी, इस आशा में वह धन को इकट्ठा करता चला जा रहा है।

मंदिरों में प्रार्थना करने वाला, राजधानियों की यात्रा करने वाला, धन की तिजोरियों को इक्ट्ठा कर लेना वाला, ये सभी के सभी भय के आधार पर ही जी रहे हैं। वे जिन्हें आप संन्यासी समझते हैं, जिन्हें आप समझते हैं कि ये परमात्मा के मार्ग पर चले गए लोग हैं, शायद आपको पता न हो कि वे भी किसी आंतरिक भय के कारण ही उस यात्रा में संलग्न हो गए हैं।

जीसस क्राइस्ट एक गांव से निकलते थे। उन्होंने गांव की एक सड़क पर कोई पंद्रह बीस लोगों को रोते हुए, छाती पीटते हुए, उदास बैठे हुए देखा। उन्होंने पूछा तुम्हें यह क्या हो गया है? किसने तुम्हारी यह हालत की है? उन पंद्रह बीस

लोगों ने चेहरे ऊपर उठाए। उनके मुरझाए हुए चेहरे..जैसे मौत उनके सामने खड़ी हो। उन्होंने कहा: नरक की बात सुन कर हम इतने भयभीत हो गए हैं। नरक की बात सुन कर हम भयभीत हो गए हैं।

इस दुनिया में जितने धार्मिक लोग दिखाई पड़ते हैं इनमें कोई भी मुश्किल से धार्मिक होगा। इनमें से सौ में से निन्यानबे लोग नरक के भय के कारण परेशान हैं या स्वर्ग का प्रलोभन, दोनों एक ही बातें हैं। लोभ और भय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। भयभीत आदमी लोभी होता है क्योंकि सोचता है इतना मिल जाए, इतना मिल जाए..धन मिल जाए, पद मिल जाए, भगवान मिल जाए, स्वर्ग मिल जाए, तो मैं दुख से बच जाऊं, चिंता से बच जाऊं, पीड़ा से बच जाऊं।

मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि हमने आज तक जो भी किया है उसके केंद्र में भय है। हमारे राष्ट्र, हमारी देश-भक्ति, हमारी राजनीति, हमारी फौजें, सब हमारे भय पर खड़ी हुई हैं। हमारे देश, हमारी कौमें सब भय पर खड़ी हुई हैं। आकाश में लहराते हुए हमारे झंडे, सब भय पर खड़े हुए हैं। हम सब एक-दूसरे से भयभीत हैं। जिस दिन दुनिया में भय नहीं होगा उस दिन दुनिया में कोई जातियां नहीं रह जाएंगी, कोई देश नहीं रह जाएगा। उस दिन दुनिया में राजनीति का उतना ही मूल्य होगा जितना और सारी संस्थाओं का होता है। राजनीति इतनी मूल्यवान नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ की इतनी प्रतिष्ठा नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ की प्रतिष्ठा फियर के कारण है, भय के कारण है।

एडोल्फ हिटलर ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है, अगर किसी को किसी कौम की बागडोर अपने हाथ में लेनी हो तो पहला काम यह है कि उस कौम को भयभीत कर दो। उसे घबड़ा दो। चीन का खतरा है। पाकिस्तान का खतरा है। ऐसा कोई भय पैदा कर दो। वह भयभीत हो जाए तो फिर अपनी बागडोर आपके हाथ में दे देगी। सारी दुनिया की नेतागिरी, सारी लीडरशिप मनुष्य को भयभीत करने के ऊपर आधारित है। सारी गुरुडम..यह हिंदुओं, मुसलमानों, ईसाइयों के पोप, पादरी, शंकराचार्य..यह सारी गुरुडम भय पर आधारित है। आदमी को भयभीत कर दो फिर वह पैर पकड़ लेगा और चरण पकड़ लेगा और कहेगा, मुझे मार्ग बताओ, मुझे बचाओ।

आज तक मनुष्य के जीवन को भय के केंद्र पर ही खड़ा रखा गया है। और दुनिया का कोई शोषण चाहे वह शोषक राजनीति का हो, चाहे वह शोषण धर्मनीति का हो, चाहे वह शोषण धन का हो, चाहे वह शोषण शरीर का हो और चाहे मन का हो, दुनिया का कोई शोषक नहीं चाहता कि आदमी भय से मुक्त हो जाए। क्योंकि जिस दिन भय नहीं उस दिन शोषण की संभावना भी समाप्त हो जाती है। आज तक मनुष्य-जाति को अभय करने का कोई उपाय नहीं किया गया, उसे फियरलेसनेस में खड़े करने के लिए कोई चेष्टा नहीं की गई है। लेकिन हम कहेंगे कि नहीं, चेष्टाएं तो की गई हैं, निर्भय लोग पैदा किए गए हैं। हम फौज में सैनिकों को निर्भय बनाते हैं। हम उन्हें हिम्मतवर बनाते हैं, शहीद हुए हैं, सिपाही हुए हैं, सैनिक हुए हैं, बड़े-बड़े बहादुर लोग हुए हैं। लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं कि निर्भयता में और अभय में बुनियादी फर्क है। फियरलेसनेस में और भय की स्थिति में भी जान को लगा देने में बुनियादी फर्क है।

एक सैनिक अभय को उपलब्ध नहीं होता है, सिर्फ उसकी बुद्धि को जड़ किया जाता है। उसे स्टुपिडिटी सिखाई जाती है। उसकी संवेदना कम की जाती है ताकि उसे भय का बोध न हो। इडियट्स भयभीत नहीं होते। जड़बुद्धि लोग भयभीत नहीं होते। भय का अनुभव न हो इसके लिए बुद्धि की क्षमता को कम किया जाता है। इसलिए सैनिक को हम वर्षों तक लेफ्ट-राइट; आगे घूमो, पीछे घूमो, बाएं घूमो, दाएं घूमो, इस तरह की व्यर्थ अर्थहीन क्रियाओं में संलग्न रखते हैं। इन क्रियाओं का एक ही मूल्य है कि निरंतर पुनरुक्ति से मनुष्य की बुद्धि क्षीण होती है। उसकी संवेदना क्षीण होती है। उसकी सेंसिटिविटी कम होती है। अगर एक आदमी को तीन वर्ष तक सुबह चार घंटे, सांझ चार घंटे बाएं घूमो, दाएं घूमो, बाएं घूमो, दाएं घूमो करवाया जाए, तो उसकी बुद्धि की चिंतन की अनुभव करने की क्षमता क्षीण होती है। वह स्टुपिड होता है। और तब उसे बदूंक के सामने भी खड़ा कर दिया जाए तो उसे ख्याल नहीं आता है कि कोई खतरा है।

वह अभय को उपलब्ध नहीं हो गया है सिर्फ भय को अनुभव करने की तीव्रता और क्षमता उसकी क्षीण हो गई है।

पुनरुक्ति के द्वारा, रिपिटिशन के द्वारा मनुष्य की चेतना को डल, शिथिल करने की कोशिश की जाती है। कोई भी चीज बार-बार पुनरुक्त की जाए तो मनुष्य की चेतना क्षीण होती है। एक मां को अपने बेटे को सुलाना होता है तो रात को कहती है कि राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, वह समझती है गीत गा रही है, लोरी गा रही है। बेटा उसका सो जाता है तो शायद वह सोचती है कि बहुत मधुर आवाज के कारण सो गया है। बेटा सिर्फ बोर्डम की वजह से सो गया है। ऊब पैदा हो जाती है, अगर कोई पास बैठ कर कहे चला जाए..राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। पुनरुक्ति की जा रही है, रिपीट की जा रही है एक ही बात, तो चित्त ऊबता है, बोर्डम पैदा होती है। ऊब से उदासी पैदा होती है। उदासी से नींद पैदा होती है। चेतना शिथिल हो जाती है और सो जाती है। लेफ्ट-राइट, लेफ्ट-राइट, लेफ्ट-राइट। राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा या राम-राम, हरे-हरे, इन सारी बातों की पुनरुक्ति से मनुष्य का भय कम नहीं होता, केवल बुद्धि कम होती है।

एक आदमी भयभीत होता है अंधेरी गली में, तो कहने लगता है, जय राम, जय राम, जय राम। एक आदमी ठंडे पानी में स्नान करता है, तो कहने लगता है, हर-हर महादेव, हर-हर महादेव। जहां भी भय मालूम होता है वहां आदमी शब्दों की पुनरुक्ति करने लगता है। शब्दों की पुनरुक्ति से अनुभव की क्षमता क्षीण होती है। सैनिक और संन्यासी, भक्त और लड़ाके अभय को उपलब्ध नहीं होते, केवल बुद्धिहीनता को उपलब्ध होते हैं।

मनुष्य-जाति अब तक दो तरह के काम करती रही है। एक तो भय को पैदा करती रही है, ताकि शोषण किया जा सके और फिर जब भय पैदा हो जाता है तो उस भय से बचाने के लिए जड़ता पैदा करती रही है ताकि आदमी भय में कहीं मर ही न जाए। यह पांच हजार वर्ष की मनुष्य की आंतरिक शिक्षा की कथा है। और आज हम जो इतने भयभीत मालूम हो रहे हैं, हर आदमी कंप रहा है अपने भीतर।

जितना सभ्य देश है उतना ही ज्यादा भयभीत मनुष्य है। प्राण कंप रहे हैं, सोते जागते कोई चैन नहीं है। एकदम भय पकड़े हुए है। यह पांच हजार वर्षों की शिक्षा की क्लाइमेक्स है। यह कोई इस युग की भूल नहीं है। यह जो चल रहा है हजारों वर्षों से उसका अंतिम परिणाम है। भयभीत, भयकातर, कंपे हुए।

पति पत्नी से भयभीत है। पत्नी पति से भयभीत है। बेटे बाप से भयभीत है। बाप बेटों से भयभीत है। पड़ोसी पड़ोसी से भयभीत है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से भयभीत है। हिंदू मुसलमान से भयभीत है। सब सबसे भयभीत हैं। ये इतने भय से कंपा हुआ जगत अगर रोज-रोज युद्धों में से गुजर जाता है तो कोई आश्चर्य नहीं है। जो भयभीत है वह अंततः युद्ध में जाएगा। भय युद्ध में ले जाने का मार्ग है। क्योंकि भय जब बढ़ता जाएगा तो हम क्या करेंगे? हम तैयारी करेंगे अपनी रक्षा की। पड़ोसी भी तैयारी करेगा अपनी रक्षा की। एक-दूसरे की तैयारी देख कर फिर एक विसियस-सर्कल पैदा होगा और हम तैयारी करते चले जाएंगे।

एक फकीर, एक मुल्ला नसरुद्दीन नाम का फकीर एक रात एक रास्ते से गुजरता था। अंधेरा रास्ता था, और उस तरफ से एक बारात आती थी। घोड़ों पर सवार लोग थे, बंदूकें दागते हुए लोग थे। फकीर नसरुद्दीन ने समझा कि कोई डाकू आ रहे हैं। अंधेरे में डाकू किसी को भी दिखाई पड़ने शुरु हो जाते हैं। उजाले में भी दिखाई पड़ते हैं, लेकिन आदमी जरा बल पकड़े रहता है। उजाले में यह है कि ठीक-ठीक दिखाई पड़ता है। और लोग भी देख रहे हैं। अंधेरे में डाकू आ रहे हैं। नसरुद्दीन ने कहा, कैसे बचूं, क्या करूं, अकेला हूं? बंदूकें लिए मालूम होते हैं, घोड़ों पर सवार हैं। पास में ही एक कब्रिस्तान था। दीवाल से छलांग लगा कर वह एक नई खोदी गई कब्र में लेट कर सो गया, ताकि वे निकल जाएं। लेकिन वही नहीं डरा था बारात के लोगों को देख कर, बारात के लोग भी रात अंधेरे रास्ते पर अकेले एक आदमी को दीवाल पर चढ़ते देख कर डर गए। पता नहीं कौन है? कोई हत्यारा है? बारात रुक गई दीवाल के पास। उन्होंने अपनी लालटेनें और बत्तियां ऊपर उठाईं। दीवाल पर सारी बारात चढ़ गई उस आदमी की खोज में। नसरुद्दीन के तो प्राण सूख गए। उसने देखा, निश्चित ही डाकू हैं, मेरे पीछे ही चले आ रहे हैं। दीवाल पर चढ़ गए हैं। उसने आंखें बंद कर लीं। और जब उन्होंने उस आदमी

को कब्र में जिंदा आंख बंद किए लेटे देखा, तो वे और हैरान हो गए। उन्होंने अपनी बंदूकें भर लीं। वे नीचे आए और उससे कहा कि बोलो, तुम कौन हो? यहां किसलिए आए हो? क्या कर रहे हो? नसरुद्दीन ने कहा: मेरे दोस्तो, यही मैं तुमसे पूछना चाहता हूं कि आप यहां क्या कर रहे हैं और किसलिए आए हैं? उन लोगों ने कहा: हम किसलिए आए हैं? हम तुम्हारी वजह से यहां आए हैं। नसरुद्दीन उठ कर खड़ा हो गया और उसने कहा कि मैं क्या कहूं, यू आर हियर बिकॉज ऑाफ मी एण्ड आई एम हियर बिकॉज ऑाफ यू। आप मेरी वजह से यहां हैं और मैं आपकी वजह से यहां हूं।

सारी दुनिया भयभीत है। और अगर पूछने जाइए, किससे भयभीत हैं, तो आप पाएंगे कि मैं आपके कारण भयभीत हूं और आप मेरे कारण भयभीत हैं। रूस अमरीका के कारण भयभीत है, अमरीका रूस के कारण भयभीत है। पति पत्नी के कारण भयभीत है, पत्नी पति के कारण भयभीत है। और सच्चाई यह है कि हमारे चित्त का केंद्र भय बन गया है। हम शायद किसी के कारण भयभीत नहीं हैं, हम सिर्फ भयभीत हैं..अकारण। और अपने भय को हम रेशनेलाइज करते हैं कि हम इसके कारण भयभीत हैं। मैं उसके कारण भयभीत हूं, मैं इस बात से भयभीत हूं, मैं मौत के कारण भयभीत हूं, मैं बीमारियों के कारण भयभीत हूं, मैं इस बात से, उस बात से...।

हम सिर्फ भयभीत हैं। हमारी आत्मा ही भय से भर गई है। क्यों भर गई है? क्या रास्ता है? भजन-कीर्तन करें, मंदिरों में जाएं, पूजा-प्रार्थना करें? बहुत हो चुके भजन-कीर्तन। बहुत हो चुकी पूजा-प्रार्थनाएं। आज तक मनुष्यता भय से दूर नहीं हुई। जो चीज भय से ही पैदा होती है उससे भय दूर नहीं हो सकता। वह भजन-कीर्तन, वह पूजा-पाठ भय से ही पैदा हो रहा है। बंदूकें बनाए, एटम बम बनाए, हाइड्रोजन बम बनाए, उससे भय दूर होगा? उससे भय दूर नहीं हुआ। भय बढ़ता चला गया। बम भय से ही पैदा हुए हैं। इसलिए बमों के कारण भय दूर नहीं हो सकता है। बंदूकों के कारण भय दूर नहीं हो सकता, क्योंकि बंदूक भय के कारण ही पैदा हुई है।

वह आपने घरों में तस्वीरें देखी होंगी, बहादुर लोगों की, तलवारें हाथों में लिए हुए। जो भी आदमी हाथ में तलवार लिए हुए है वह बहादुर नहीं है। वह भयभीत है। चाहे बंबई की सड़कों पर मूर्तियां बनी हों, चाहे घरों में फोटो लटकी हों। जिस आदमी के हाथ में तलवार है वह आदमी भयभीत है, वह बहादुर नहीं हो सकता। हाथ में तलवार सबूत भय का है, फियर का है। इतनी बात है कि भयभीत आदमी अपने से कमजोर आदमी को भयभीत करने की कोशिश करता है। इस भांति उसे यह विश्वास आ जाता है कि मैं भयभीत नहीं हूं, दूसरा भयभीत है।

इसलिए दुनिया में हर आदमी कोशिश करता है कि दूसरे को भयभीत कर दे। किसलिए? इसलिए ताकि वह यह विश्वास कर ले कि तुम कंप रहे हो, मैं नहीं कंप रहा हूं। तुम भयभीत हो, मैं भयभीत नहीं हूं। वह अपने भय को भुलाने के कंसोलेशंस खोजता है, ताकि दूसरा आदमी भयभीत हो। इसलिए पति मालिक बन कर पत्नी को भयभीत किए रहता है। पति खुद भयभीत है। वह पत्नी को जब डरा लेता है, रुला लेता है, पत्नी को जब पैरों में गिरा लेता है तब वह आश्वस्त होता है कि मैं भयभीत नहीं हूं, मैं बहादुर आदमी हूं। यह औरत भयभीत है। दफ्तर में वह जाता है, उसका बॉस उसको कंपा देता है और थर्रा देता है, उसी हालत में पहुंचा देता है जिस हालत में उसने अपनी पत्नी को पहुंचा दिया था। उसका मालिक सोचता है कि मैं भयभीत नहीं हूं, मैं कोई साधारण आदमी नहीं हूं। सौ आदमी मेरे नीचे काम करते हैं, ये भयभीत हैं।

और सीढ़ी दर सीढ़ी हर आदमी दूसरे को भयभीत करके कुछ और नहीं कर रहा है, इतना ही कर रहा है कि अपने लिए विश्वास पैदा कर रहा है, सेल्फ-कांफिडेंस जुटा रहा है, आत्म-विश्वास जुटा रहा है।

ये हिटलर और स्टैलिन बड़े भयभीत लोग हैं। ये सारी दुनिया को कंपा देते हैं। ये विश्वास लाना चाहते हैं कि तुम सब कांप रहे हो, मैं नहीं कांप रहा हूं। लेकिन हिटलर रात को अपना दरवाजा बंद करके सोता है। वह रात भर चैंकता रहता है कि कहीं कोई आ तो नहीं गया। स्टैलिन अपनी पत्नी के साथ भी उसी कमरे में रात नहीं सोता है। स्टैलिन बड़ी-बड़ी सभाओं में स्वयं नहीं जाता। अपनी शक्ल-सूरत का आदमी रख छोड़ा है, डबल रख छोड़ा है, वह जाता है सभाओं में। मिलिटरी की

परेड की सलामी स्टैलिन खुद नहीं लेता है, दूसरा आदमी लेता है जो उसकी शक्ल-सूरत का है, क्योंकि खतरा है कोई गोली न मार दे।

नादिर जिस नगर में गया, दस हजार बच्चों के सिर कटवा लेता, भालों में छिदवा देता और फिर जुलूस निकलता उसका, उसकी शोभायात्रा निकलती, वह पीछे घोड़े पर सवार है। हजारों बच्चों के सिर छिदे हुए हैं भालों में। लोग उससे पूछते कि नादिर तुम यह क्या कर रहे हो? तो वह कहता, ताकि लोग याद रखें कि नादिर इस नगर में आया था। लेकिन सच्चाई यह थी कि नादिर रात भर नहीं सो सकता था। जरा सी खटखटाहट हो कि वह तलवार निकाल कर खड़ा हो जाता था, क्या है? कौन है? और नादिर की मौत इसी तरह हुई। एक घोड़ा छूट गया उसके कैंप का रात को भूल से और नादिर के तंबू के पास से निकल गया। घोड़े की आवाज सुन कर नादिर उठा। उसने समझा कि कोई दुश्मन आ गया घोड़े पर सवार होकर। अंधेरे में बाहर निकल कर भागने की कोशिश की, पैर में रस्सी फंस गई तंबू की और वह गिर पड़ा और मर गया। यह आदमी राजधानियां कत्ल करता रहा, मकानों में आग लगवाता रहा। किसलिए?

ये दुनिया भर के राजनीतिज्ञ क्या चाहते हैं? ये सब भयभीत लोग हैं। ये दूसरे को भयभीत करके यह विश्वास जुटा लेना चाहते हैं कि नहीं-नहीं कौन कहता हूं, मैं भयभीत नहीं हूं, भयभीत सारी दुनिया होगी। ये सिंहासनों की यात्रा करने वाले सारे फियर कांप्लेक्स से परेशान और पीड़ित लोग हैं। दुनिया के बड़े नेता, दुनिया के बड़े सेनापति, दुनिया के बड़े विजेता, ये सारे लोग भय से पीड़ित लोग हैं। और इन्हीं भयभीत लोगों के हाथ में दुनिया है, और वे सब एक-दूसरे से भयभीत हैं, इसलिए रोज युद्ध पैदा हो जाता है।

जब तक भय है तब तक दुनिया से युद्ध समाप्त नहीं हो सकता। यह तो हो सकता है कि युद्ध के कारण भय समाप्त हो जाएं, क्योंकि आदमी ही समाप्त हो जाए, लेकिन यह नहीं हो सकता कि भय जब तक है तब तक युद्ध समाप्त हो जाएं। अब तो हम उस जगह पहुंच गए हैं कि हमारे भय ने अंतिम उपाय ईजाद कर लिए हैं, जब कि हम पूरी मनुष्यता को समाप्त करने में समर्थ हो गए हैं। समर्थ पूरी तरह हो गए हैं, शायद जरूरत से ज्यादा हो गए हैं। मैं सुनता हूं कि वैज्ञानिकों ने इतना इंतजाम कर रखा है कि अगर एक-एक आदमी को सात-सात बार मारना पड़े, तो हमने व्यवस्था कर ली है, सरप्लस किलिंग की व्यवस्था कर ली है। हो सकता है भूल-चूक हो जाए। कोई आदमी एक दफा मारने में बच जाए तो दुबारा मार सकें। दुबारा भी बच जाए तो तीसरी बार मार सकें। सात-सात बार, हालांकि एक आदमी एक ही बार में मर जाता है, दुबारा मारने की कभी कोई जरूरत आज तक नहीं पड़ी। लेकिन भूल-चूक न हो जाए इसलिए इंतजाम पूरा कर लेना उचित है।

तीन साढ़े तीन अरब आदमी हैं। पच्चीस अरब आदमियों को मारने की सारी दुनिया में व्यवस्था है। अब की बार हम आदमी को बचने नहीं देंगे, क्योंकि अब की बार भय चरम स्थिति में हमारे प्राणों को आंदोलित कर रहा है। क्या करें इस भय के लिए? क्या उपाय खोजें?

एक बात आपसे कहना चाहता हूं, इसके पहले कि भय के संबंध में हम क्या करें, उस बात को समझ लेना जरूरी है। अगर इस भवन में अंधकार भरा हो और हम किसी से पूछने जाएं कि अंधकार को निकालने के लिए हम क्या करें? और वह हमसे कहे कि धक्के दे-दे कर हम अंधकार को बाहर निकाल दें और हम सब लौट आएं और अंधकार को धक्के देकर निकालने की कोशिश करें, तो क्या परिणाम होगा? अंधकार निकल सकेगा? या कि अंधकार को निकालने की कोशिश में हम खुद ही समाप्त होने के करीब पहुंच जाएंगे। भय के साथ भी यही हुआ है।

भय को निकालने की हम पांच हजार साल से कोशिश कर रहे हैं। भय को निकालने के लिए हम भगवान को जप रहे हैं। स्वर्ग, नरक, मोक्ष की कल्पना कर रहे हैं। भय को निकालने के लिए हम बंदूकें, बम, अणु-अस्त्र तैयार कर रहे हैं। भय से बचने के लिए हम किले की मजबूत दीवाल उठा रहे हैं। धन की दीवाल उठा रहे हैं। पद-प्रतिष्ठा के किले खड़े कर रहे हैं। लेकिन बिना यह पूछे कि क्या भय को निकाला जा सकता है सीधा? मेरी दृष्टि में भय अंधकार की तरह नकारात्मक है।

अंधकार को सीधा नहीं निकाला जा सकता। हां, प्रकाश जला लिया जाए तो अंधकार जरूर निकल जाता है। लेकिन अंधकार को कभी कोई नहीं निकाल सकता। अंधकार वस्तुतः कुछ नहीं है केवल प्रकाश की अनुपस्थिति है, एब्सेंस है, प्रकाश का न होना है। प्रकाश के आते ही अंधकार नहीं पाया जाता है। कहना गलत है कि निकल जाता है, क्योंकि निकलने को कुछ भी नहीं है। कोई चीज निकल कर बाहर नहीं चली जाती है। जब आप दीया जलाते हैं, कुछ बाहर नहीं जाता, कुछ मिटता नहीं। अंधकार अनुपस्थिति थी, एब्सेंस थी प्रकाश की, प्रकाश आ गया, अनुपस्थिति समाप्त हो गई।

शायद आपने सुना हो, एक बहुत पुरानी घटना है, भगवान के पास अंधकार ने जाकर एक बार शिकायत कर दी थी और कहा था कि यह सूरज तुम्हारा मेरे पीछे बहुत बुरी तरह पड़ा हुआ है। मैं बहुत परेशान हो गया हूं। सुबह से मेरा पीछा करता है। सांझ तक मुझे थका डालता है। दौड़, दौड़ो, बचो, बचो। जहां जाता हूं वहीं हाजिर है। फिर जब मैं बहुत थक जाता हूं तब रात थोड़ी देर सो पाता हूं, सुबह से फिर मौजूद हो जाता है। रात भर विश्राम भी नहीं हो पाता है कि सूरज फिर तैयार है। यह करोडों वर्षों से चल रहा है। मेरा क्या कसूर है? मैंने सूरज का क्या बिगाड़ा है? भगवान ने कहा: यह तो बड़ा अन्याय चल रहा है। मैं सूरज को बुला कर पूछ लूं। उसने सूरज को बुलाया और कहा कि तुम अंधकार के पीछे क्यों पड़े हो? क्यों उसे परेशान किए जा रहे हो? उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? सूरज ने कहा: अंधकार? यह नाम मैंने कभी सुना नहीं! यह व्यक्ति मैंने कभी देखा नहीं। अब तक मेरी कोई मुलाकात नहीं हुई। मैं क्यों पीछे पडूंगा? जिससे मेरी पहचान भी नहीं, उससे मेरी शत्रुता कैसे होगी? आप अंधकार को मेरे सामने बुला दें तो मैं पहचान भी लूं और क्षमा भी मांग लूं।

इस बात को हुए करोड़ों वर्ष हो गए, वह मुकदमा फाइल में ही पड़ा हुआ है। अब तक भगवान सूरज के सामने अंधकार को नहीं ला सके। ला भी नहीं सकेंगे, क्योंकि सूरज का, सूरज का अस्तित्व है। प्रकाश पाजिटिव, विधायक है। अंधकार नकारात्मक, निगेटिव है। सूरज के सामने अंधकार नहीं लाया जा सकता, क्योंकि अंधकार सूरज की अनुपस्थिति है, गैर-मौजूदगी है। अब जहां सूरज मौजूद है वहां उसकी ही गैर-मौजूदगी कैसे लाई जा सकती है? मैं यहां मौजूद हूं, तो मेरी गैर-मौजूदगी मेरे साथ ही यहां कैसे मौजूद हो सकती है? या तो मैं हो सकता हूं या मेरा न होना हो सकता है। यहां दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकती हैं।

लेकिन मनुष्य के भय के संबंध में यही भूल चलती रही है। हम भय को दूर करने की कोशिश करते हैं। भय निगेटिव क्वालिटी है, भय का कोई अस्तित्व नहीं है। भय किसी चीज की अनुपस्थित है, किसी चीज की एब्सेंस है, किसी पाजिटिव क्वालिटी का अभाव है, किसी विधायक गुण का अभाव है।

शायद आपको ख्याल में भी न हो कि भय प्रेम का अभाव है। जिस हृदय में प्रेम नहीं है वह हृदय भयभीत रहेगा ही। आमतौर से इसका ख्याल नहीं आता, क्योंकि हम भय के साथ घृणा को सोचते हैं। घृणा भय का विरोध है। घृणा प्रेम का विरोध है। भय प्रेम का अभाव है, दोनों को एकसाथ। जिस हृदय में प्रेम नहीं वह भयभीत होगा। और अगर अपने जीवन में कभी भी थोड़ा सा प्रेम अनुभव किया हो तो जो क्षण प्रेम का है वही क्षण अभय का भी है। जिसके प्रति आपको प्रेम है उसके प्रति आपका भय समाप्त हो जाता है।

एक नवयुवक का विवाह हुआ था। वह अपनी नई-नई विवाहिता पत्नी को लेकर जहाज की यात्रा पर निकला है। पुराना जहाज है, पुराने दिनों की बात है। तूफान आ गया है और जहाज कंपने लगा है, अब डूबा, तब डूबा होने लगा है। लेकिन वह युवक मौज से बैठा हुआ है। उसकी पत्नी घबड़ा गई है, कांप रही है और उससे कहने लगी है कि तुम इतने शांत बैठे हो और जहाज डूबने को है। मौत करीब मालूम होती है। तुम इतने निशिं्चत मालूम होते हो? वह युवक हंस रहा है। उसने अपनी म्यान से तलवार बाहर निकाल ली और उस युवती के कंधे पर रख दी है, गले पर, अपनी पत्नी के, पर वह पत्नी हंस रही है। वह युवक कहने लगा: मेरे हाथ में तलवार है, तुम्हारी गर्दन पर नंगी तलवार रखे हूं, फिर भी तुम हंस रही हो? उस पत्नी ने कहा: मुझे तुमसे प्रेम है तो तुम्हारी तलवार से भय नहीं मालूम होता है। उस युवक ने कहा: मुझे परमात्मा से प्रेम है इसलिए उसके तूफान से भय नहीं मालूम होता है।

जहां प्रेम है वहां भय की कोई संभावना नहीं। अगर हम भय को निकालने की कोशिश करेंगे, तो हम ज्यादा से ज्यादा जड़ता को उपलब्ध हो सकते हैं, अभय को नहीं। अगर हम प्रेम को जन्माने की कोशिश करें, तो भय प्रेम के जन्म के साथ ही वैसे ही नष्ट हो जाता है जैसे प्रकाश के जन्म के साथ अंधेरा नष्ट हो जाता है।

लेकिन मनुष्य-जाति को प्रेम की कोई शिक्षा नहीं दी गई है। शिक्षा भय की दी गई है। इसीलिए तो हर आदमी थोथा-थोथा मालूम होता है। क्योंकि व्यक्तित्व का केंद्र अगर निगेटिव है, तो आदमी का पूरा व्यक्तित्व इंपोटेंट होगा। व्यक्तित्व का केंद्र अगर नकारात्मक है, तो व्यक्तित्व में बल नहीं हो सकता, थोथा, पोचा, इंपोटेंट होगा। इसलिए सारी मनुष्य-जाति नपुंसक हो गई है। कोई बल नहीं है। कोई जीवंत प्रेरणा नहीं है। कोई भाव भरा हुआ, कोई आनंद से भरा हुआ हृदय नहीं है। कोई प्रेम से भरी हुई आंखें नहीं हैं। सब भयभीत, भयकातर, घबड़ाए हुए, ट्रेंबिं्लग, डरे हुए हैं। मनुष्य के व्यक्तित्व के केंद्र पर पांच हजार वर्षों से भय को रखा गया है। नकारात्मक है भय, इसलिए व्यक्तित्व नकारात्मक हो गया है। एक ही गुण है पाजिटिव, वह है प्रेम और एक ही गुण है नकारात्मक, और वह है फियर, भय। और दो ही महत्वपूर्ण बातें हैं जीवन में..या भय या प्रेम।

जहां भय है वहां अपने आप घृणा पैदा हो जाएगी। जिससे हम भयभीत होते हैं उससे हम कभी भी प्रेम नहीं कर सकते हैं। इसीलिए तो परमात्मा की इतनी शिक्षा दी गई दुनिया में, लेकिन परमात्मा का प्रेम नहीं पैदा हो सका, क्योंकि परमात्मा से भयभीत किए गए आदमी को समझाया गया गॉड-फियरिंग होने के लिए, ईश्वर से भयभीत होने के लिए। दुनिया के धर्म यही समझाते रहे हैं कि ईश्वर से डरो। जिससे डरा जाता है उससे कभी प्रेम नहीं किया जा सकता है। यह मनुष्य-जाति जो नास्तिक हो गई है वह गॉड-फियरिंग की शिक्षा से ही गई है, नास्तिकों के कारण नहीं हो गई है मनुष्य-जाति नास्तिक। अगर दुनिया में अब भी कोई आस्तिक पैदा हो जाते हैं तो नास्तिकों के बीच से, लेकिन आस्तिकों के बीच से कभी कोई आस्तिक पैदा नहीं होता। आस्तिकों के बीच से आस्तिक पैदा हो ही नहीं सकता। क्योंकि आस्तिक है ईश्वर से डरा हुआ, और जहां डर है वहां प्रेम असंभव है। जहां भय है वहां प्रेम असंभव है। जिससे हम भयभीत होते हैं उससे हम घृणा करते हैं। गहरे में घृणा करते हैं, ऊपर से हाथ जोड़ सकते हैं, लेकिन भीतर मन होता है गला घोट दें।

धर्म-गुरुओं ने ईश्वर का गला घुटवा दिया। उन्होंने सिखाया कि ईश्वर से डरो। आदमी इतना डर गया कि उसने कहा कि जिससे डरते हैं इसकी हत्या ही कर दो। ह्युमिनिटी किल्ड गॉड। फिर आदमी ने कहा, अब इसका फैसला ही कर दो जिससे इतना भय खाना पड़ता है। इसलिए नीत्शे कह सका: गॉड इ.ज डेड। इसलिए नीत्शे कह सका कि ईश्वर मर गया है। पूछा किसने किसी ने मार डाला है ईश्वर को? नीत्शे ने कहा: आदमी के हाथ देखो, ईश्वर के खून से रंगे हुए हैं। आदमी ने गर्दन दबा दी उसकी जिससे इतना भयभीत होना पड़ता था।

ईश्वर के प्रति भय पैदा करके धर्म नष्ट हो गया, क्योंकि भय कोई विधायक रचनात्मक क्रिएटिव फोर्स नहीं है। भय डिस्ट्रक्टिव फोर्स है, निगेटिव फोर्स है, विध्वंस की ताकत है वह। और हम सब तरह के भय पैदा करते रहे हैं। बाप बेटे में भय पैदा करता है ॲाथेरिटी का, मैं बाप हूं, और उसे पता नहीं कि वह बेटे को तैयार कर रहा है कि बाप की हत्या कर दे। और बेटे मिल कर बाप की हत्या कर रहे हैं सारी दुनिया में। यह हत्या जारी रहेगी जब तक बाप बेटे को भयभीत करता है। जब तक वह कहता है कि मैं जो कहता हूं वह ठीक है क्योंकि मेरे हाथ में ताकत है। मैं तुझे घर के बाहर कर दूं, मैं तेरी गर्दन दबा दूं। जब तक पत्नी कहेगी पति से कि मेरे हाथ में ताकत है, जब तक पति कहेगा पत्नी से कि मेरे हाथ में ताकत है जब तक हम परिवार में एक दूसरे को भयभीत करने की कोशिश करेंगे, तब तक अच्छे मनुष्य का जन्म नहीं हो सकता है।

और हम सब एक-दूसरे को डरा रहे हैं, हम सब एक-दूसरे को डरा रहे हैं। हमारी सारी रिलेशनशिप फियर की रिलेशनशिप है। हमारा सारा संबंध भय का संबंध है। विद्यार्थी गुरु के चरण छूता है भय के कारण और गुरु चरण छुवाता है ताकत के कारण..बाप, पति, पत्नी, सारे संबंध हमारे! हम भयभीत कर रहे हैं किसी को, हम डरा रहे हैं किसी को, हम घबड़ा रहे हैं किसी को, और वह घबड़ाहट में पैर छू रहा है और हम प्रसन्न हो रहे हैं। और हमें पता नहीं कि हम सिर्फ अपने प्रति

घृणा पैदा कर रहे हैं। इस घृणा का बदला लिया जाएगा। बेटे बड़े हो जाते हैं, बाप बूढ़ा हो जाता है, ताकत की स्थिति बदल जाती है, बेटों के हाथ में ताकत आ जाती है, बाप कमजोर हो जाता है, पासा पलट जाता है, बदला शुरू हो जाता है, और बेटे बाप को सताना शुरू कर देते हैं। यह प्रतिक्रिया है, यह रिएक्शन है। बाप ने बेटे को बचपन में सताया है, अब पासा पलट गया है। तब बाप ताकतवर था, तब वह छोटे से बच्चे को डरा सकता था, वह डंडा उठा सकता था, द्वार बंद कर सकता था, घर के बाहर निकाल सकता था। वह जो भयभीत किया था बेटे को, वह भय के कीटाणु भीतर रह गए हैं, वे बदला मांगते हैं। क्योंकि भय विध्वंसात्मक है, वह बदला चाहता है। भय से घृणा पैदा होती है, विरोध पैदा होता है, विद्रोह पैदा होता है। बच्चा प्रतीक्षा करेगा ताकत आ जाए हाथ में, कल जवान हो जाएगा, ताकत हाथ में हो जाएगी, बाप बूढ़ा हो जाएगा, कमजोर हो जाएगा, फिर सताने की प्रक्रिया उलट जाएगी, बेटा बाप को सताएगा।

हम सब एक-दूसरे को भयभीत कर रहे हैं। हमारा सारा व्यक्तित्व भय पर खड़ा हो गया है। हम ईश्वर को भी समझाते हैं, हम धर्म को भी समझाते हैं। हम किसी को यह भी कहते हैं कि सत्य बोलो, तो साथ में यह भी कहते हैं कि सत्य नहीं बोलोगे तो नरक जाओगे। हत्या कर दी सत्य की। सत्य के साथ भय जोड़ा जा सकता है? सत्य के साथ भय का कोई संबंध हो सकता है? सत्य पाजिटिव क्वालिटी है, भय निगेटिव क्वालिटी है। सत्य का प्रेम से संबंध हो सकता है, भय से संबंध नहीं हो सकता। नीति का प्रेम से संबंध हो सकता है, भय से संबंध नहीं हो सकता।

लेकिन पांच हजार वर्षों से निगेटिव क्वालिटीज को पाजिटिव क्वालिटीज के साथ जोड़ा जा रहा है, इसलिए मनुष्यता नष्ट हो रही है। यह भोजन के साथ जहर डाला जा रहा है। एक बूंद जहर पूरे भोजन को नष्ट कर देती है। एक बूंद नकारात्मक गुण पूरे विधायक गुण को नष्ट कर देता है। बच्चे से हम कह रहे हैं कि सत्य बोलो, नहीं तो मारेंगे। हम सोच ही नहीं रहे हैं कि हम कौन सी दो चीजें जोड़ रहे हैं। हम कह रहे हैं कि नीति का आचरण करो नहीं तो नरक जाना पड़ेगा। वहां कड़ाहे हैं, आग जलती है, तेल उबलता है और उसमें डाले जाओगे। भगवान को भी बड़ा मजा आता होगा इन कामों में मालूम होता है। बेचारे गरीब आदमी को, कमजोर आदमी को कड़ाहों में डाल कर बहुत मजा आता होगा।

एक पादरी एक चर्च में समझा रहा था। भयभीत कर रहा था लोगों को। लोग कांप रहे थे, औरतें बेहोश होकर गिर पड़ी थीं। आपको पता होगा, क्रिश्चिएंस के दो संप्रदायों का नाम ही पड़ गया, क्वेकर्स। क्वेकर्स का मतलब है: कंपने वाले लोग। और एक संप्रदाय था, शेकर्स, वे भी कंपने वाले लोग। पादरियों ने इतना कंपा दिया कि लोग बिल्कुल कंपने लगे। एक संप्रदाय ही क्वेकर्स का खड़ा हो गया। वह पादरी कंपा रहा था, लोगों को डरा रहा था। और जितने लोग डरते जा रहे थे उतनी उसकी कविता नरक के चित्रण में गहरी होती चली जा रही थी। लोग कंप रहे थे तो बहुत मजा आ रहा था। किसी को कंपाने से ज्यादा मजा और किसी चीज में नहीं है।

खलील जिब्रान कहता था कि मैं एक खेत के पास से निकलता, एक झूठा आदमी खेत में खड़ा हुआ था, जैसा किसान बना कर खड़े कर देते हैं: एक हंडी बांध देते हैं, एक कुर्ता लटका देते हैं। एक झूठा आदमी खेत में खड़ा हुआ था। वर्षा आए, धूप आए, सर्दी आए, लेकिन झूठा आदमी खेत में शान से खड़ा रहता था। जिब्रान ने कहा, मैंने उस झूठे आदमी से पूछा: दोस्त बहुत थक जाते होंगे, बड़े ऊब जाते होंगे अकेले में खड़े-खड़े। बर्षा आती है, धूप आती है, तुम यहीं खड़े रहते हो, इसी तरह तने खड़े रहते हो। उसने कहा: बिल्कुल नहीं घबड़ाता हूं, बिल्कुल ऊब नहीं आती है, पशु-पक्षियों को डराने में इतना मजा आता है जिसका कोई हिसाब नहीं। जिब्रान ने कहा: यह तो तुम बात बड़ी ठीक कहते हो। आदमियों को डराने में तो मुझको भी मजा आता है। वह झूठा आदमी हंसने लगा और उसने कहा, तब तुम भी एक झूठे आदमी हो।

जिसको दूसरे को डराने में मजा आता है, वह झूठा आदमी है, वह सूडो ह्यूमन बीइंग है। क्योंकि उसके व्यक्तित्व का केंद्र नकारात्मक है, भय है। वास्तविक मनुष्य वास्तविक केंद्र पर पैदा होता है, वह केंद्र प्रेम है।

तो मैं जिस पादरी की बात कर रहा था, वह कंपा रहा है लोगों को। वे घबड़ा रहे हैं। और तभी उसने कहा, मालूम है तुम्हें, नरक में क्या होगा? इतनी सर्दी पड़ेगी कि दांत किटकिटाएंगे। एक आदमी खड़ा हो गया, उसने कहा, क्षमा करें, मेरे

दांत टूट गए हैं, मेरा क्या होगा? पादरी को बहुत गुस्सा आया, जैसा धर्मगुरुओं को गुस्सा आता है गलत-सही प्रश्न पूछने पर। एक क्षण तो वह रुक गया, गुस्से में फिर उसने कहा कि ऐसे फिजूल के प्रश्न पूछते हो? फॉल्स टीथ विल बी प्रोवाइडिड। झूठे दांत दे दिए जाएंगे उसके पहले, उनको लगा लेना और फिर कांपना। लेकिन कांपना जरूर पड़ेगा। इतनी सर्दी पड़ती है नरक में।

आदमी को, आदमी को हमने सब श्रेष्ठ चीजों के साथ भय को जोड़ दिया। यह पांच हजार वर्ष की सारी मनुष्य-जाति की शिक्षा व्यर्थ हो गई है, अनर्थ हो गई है। यह जो नकारात्मक भय है, इस केंद्र से मनुष्य को हटा लेने की जरूरत है। अगर एक ऐसी दुनिया चाहिए हो जहां लोगों के जीवन में सौंदर्य हो, संगीत हो, आनंद हो, व्यत्तित्व हो, गरिमा हो व्यक्तित्व की, एक बिखरती हुई किरणें हों जीवन की, एक स्वतंत्रता हो, एक-एक व्यक्ति का अपना अनूठापन हो, जहां संबंध हों प्रेम के, जहां युद्ध न हो, जहां शांति हो, तो मनुष्य के व्यक्तित्व के केंद्र को बदल देना जरूरी है। भय की जगह प्रेम। जीवन की समस्त शिक्षाओं से भय को अलग कर देना जरूरी है, एक-एक इंच से। लेकिन वह अलग नहीं होगा। जैसा मैंने कहा, अंधेरे को अलग नहीं किया जा सकता है। तब क्या किया जा सकता है? दीये को जलाया जा सकता है। प्रेम को जलाया जा सकता है। प्रेम को प्रकट किया जा सकता है।

और आदमी के भीतर प्रेम इतना छिपा है जिसका कोई हिसाब नहीं। यह दुनिया छोटी है। अगर एक आदमी के भीतर का प्रेम पूरा बहना शुरु हो जाए, तो यह जगत छोटा है। जैसे हमें कल तक पता नहीं था कि एक अणु में कितनी ऊर्जा हो सकती है। एक छोटे से अणु में कितनी शक्ति हो सकती है कि एक अणु का विस्फोट अनंत शक्ति को जन्म दे-दे। कल तक हमें पता नहीं था कि एक रेत के छोटे से कण से एक बड़ा महानगर नष्ट हो सकता है, कि हाइड्रोजन के एक छोटे से कण से बंबई की महानगरी इसी क्षण राख हो सकती है। कभी हमें पता नहीं था कि पानी की एक बूंद के एक छोटे से कण में इतनी ताकत हो सकती है।

आदमी के भीतर कितनी ताकत हो सकती है प्रेम के कण में, इसका भी हमें कोई पता नहीं। कभी-कभी थोड़ी झलक मिली है, कभी किसी बुद्ध में, कभी किसी क्राइस्ट में, कभी किसी सुकरात में छोटी सी झलक मिली है। लेकिन उस झलक को देखते ही हम एकदम टूट पड़ते हैं और उसे बुझा देते हैं। सुकरात दिखाई पड़ा कि हमने मारा। जीसस दिखाई पड़े कि सूली पर लटकाया। गांधी दिखाई पड़ा कि गोली मारो। हम इतने जोर से टूटते हैं इस झलक पर। क्यों? क्योंकि वह झलक हम सबका अपमान बन जाती है। बहुत इंस्लटिंग है वह झलक। क्योंकि वह झलक यह खबर देती है कि हम सबके घर अंधेरे में पड़े हैं और इस घर में दीया जल गया। बुझा दो इस दीये को! बजाय इसके कि अपना दीया जलाएं, इसको बुझा दो! हम निशिं्चत हो जाएं, एट इ.ज हो जाएं कि सब जगह अंधेरा है। ठीक है हम भी अंधेरे में हैं।

आज तक दुनिया में जब भी प्रेम की झलक किसी आदमी में आई है, तो हमने उसे बुझाने की कोशिश की है, ताकि हम निशिं्चत हो जाएं, ताकि हमारा सेल्फ-कंडेमनेशन न हो, आत्मग्लानि पैदा न हो, गिल्ट पैदा न हो कि मैं कैसा आदमी हूं। जब बुद्ध हो सकता है, जब महावीर हो सकता है, जब क्राइस्ट हो सकता है, जब मंसूर हो सकता है, तो मेरे भीतर क्यों नहीं हो सकती यह घटना? एक-एक आदमी के भीतर वही छिपा है जो सब आदमियों के भीतर छिपा है। आदमियत का बीज एक सा ही बीज है। आम के एक बीज से आम का वृक्ष पैदा होता है। आम के दूसरे बीज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आम के तीसरे बीज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आदमियत के पास भी एक ही बीज है। जिससे एक ही वृक्ष पैदा हो सकता है। लेकिन हम उसे पैदा नहीं होने देते। कोई वृक्ष हो जाता है तो काट डालते हैं, ताकि हमको यह ग्लानि न आए कि हम कुछ गलत हैं।

प्रेम की बड़ी संभावना मनुष्य के भीतर है, लेकिन न उसकी शिक्षा है, न उसे जगाने का उपाय है, न उसे प्रकट होने देने की सुविधा है, बल्कि हम सब शत्रु हैं प्रेम के। हमने सब जगह ऐसी व्यवस्था कर ली है कि प्रेम कहीं पैदा न हो सके। हमने ऐसी चालाकियां की हैं कि प्रेम के लिए, हमने कोई मार्ग नहीं छोड़ा है। कहीं कोई मार्ग नहीं छोड़ा है। मनुष्य में प्रेम भर पैदा

न हो सके और सब पैदा हो जाए। और आश्चर्य और मजे की बात तो यह है कि प्रेम पैदा न हो तो जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह कुछ भी पैदा नहीं होता।

जैसा कि मैंने कहा, जहां भय है, वहां घृणा पैदा होगी। जहां भय है, वहां ईर्ष्या पैदा होगी। जहां भय है, वहां हिंसा पैदा होगी। जहां भय है, वहां क्रोध पैदा होगा। जहां भय है, वहां पूरा नरक पैदा होगा। क्योंकि भय के ये सब अनुषांगिक अंग हैं। ये सब भय की संतति हैं। ये सब भय के पुत्र हैं। जहां प्रेम है वहां आनंद पैदा होगा, वहां शांति पैदा होगी, वहां करुणा पैदा होगी, वहां दया पैदा होगी, वहां सौंदर्य पैदा होगा, वहां स्वर्ग के द्वार खुलेंगे, क्योंकि प्रेम की संतति हैं ये सब। भय के केंद्र पर जो व्यक्ति है वहां वह सब पैदा होगा। भय के केंद्र का अंतिम परिणाम विक्षिप्तता है, मैडनेस है। और प्रेम के अंतिम केंद्र का परिणाम विमुक्ति है, विमुक्तता है, मोक्ष है।

प्रेम कैसे जन्मे? प्रेम की बंद दीवालें कैसे टूटें? कोई राजनीतिज्ञ, दुनिया का कोई नेता विश्वशांति नहीं ला सकता है, क्योंकि राजनीति के सारे केंद्र भय के हैं। कोई धर्मगुरु दुनिया में शांति नहीं ला सकता है, क्योंकि तथाकथित धर्मगुरु का केंद्र ही भय है, जिसके आधार पर वह गुरु बना हुआ है और शोषण कर रहा है।

दुनिया में तो एक ही रास्ते से शांति आ सकती है, मनुष्य के व्यक्तित्व में और समस्त जीवन में, और वह रास्ता है: प्रेम का कैसे जन्म हो। कैसे प्रेम का जन्म हो? प्रेम क्या है? वह कैसे पैदा हो? वह सबके भीतर पड़ा हुआ बीज है, लेकिन बीज बीज ही रह जाता है, वह कभी अंकुरित नहीं हो पाता, उसे भूमि नहीं मिल पाती, उसे पानी नहीं मिल पाता, उसे सूरज की रोशनी नहीं मिल पाती। वह बीज बीज ही रह जाता है। और जो बीज बीज ही रह जाता है उसके भीतर एक कसक, एक दर्द, एक पीड़ा रह जाती है कि मैं जो हो सकता था वह नहीं हो पाया, नहीं हो पाया, नहीं हो पाया। एक फ्रस्ट्रेशन, एक विफलता उसके आस-पास छाई रह जाती है। मनुष्य में जो चिंता दिखाई पड़ती है वह प्रेम के बीज के प्रकट न होने की चिंता है, वह फ्रस्ट्रेशन है। मनुष्य में जो उदासी दिखाई पड़ती है वह उसके भीतर जो होने की संभावना थी, जो पोटेंशियली, वह होने को पैदा हुआ था, जो उसकी डेस्टिनी थी, जो उसकी नियति थी, जो उसे हो जाना चाहिए था। जब एक गुलाब के फूल पर, गुलाब के पौधे पर फूल खिलते हैं, जब एक चमेली खिल जाती है अपने फूलों में और अपनी सुगंध लुटा देती है, तो हवाओं में नाचते हुए उसके पत्तों को देखा है? हवाओं में नाचते हुए उस पौधे को देखा है जिसके फूल खिल गए हैं पूरे? उससे ज्यादा मौज में, उससे ज्यादा आनंद में कोई कभी दिखाई पड़ा है? लेकिन जिस पौधे पर फूल नहीं आ पाते हैं या जिसकी कलियां कलियां ही रह जाती हैं और कुम्हला जाती हैं, उसकी उदासी देखी है? उसकी चिंता देखी है? उसके लटके हुए, मुरझाए हुए पत्ते देखे हैं?

आदमी के भीतर भी जो फूल खिलने को हैं, अगर न खिल पाएं, तो वह भी उदास हो जाता है, चिंतित हो जाता है, लटक जाते हैं उसके पत्ते भी, उसका व्यक्तित्व भी मुरझा जाता है। ऐसे ही सारी मनुष्यता का व्यक्तित्व मुरझा गया है। क्या कभी आपने अपने से पूछा है कि मेरी सबसे गहरी प्यास क्या है..धन, पद, मोक्ष, परमात्मा? नहीं। अगर आप अपने से गहरे से गहरे में पूछेंगे, तो प्राण एक ही उत्तर देते हैं: प्रेम दे सकूं और पा सकूं। एक ही उत्तर है प्राणों के पास कि प्रेम मुझसे बह सके और मुझ तक आ सके। एक ऐसा जीवन जहां प्रेम की वीणा अपने पूरे संगीत को प्रकट कर सके, एक ऐसा जीवन जहां प्रेम का पूरा फूल खिल सके। एक-एक मनुष्य के केंद्र पर प्रेम के अतिरिक्त कोई पुकार नहीं है, कोई आह्वान नहीं है। और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जिस दिन यह प्रेम का फूल पूरा खिलता है उसी दिन परमात्मा भी उपलब्ध हो जाता है। प्रेम परमात्मा का द्वार है। लेकिन प्रेम का कोई ख्याल नहीं, कोई स्मरण नहीं। क्या करें? यह प्रेम कैसे फैले, कैसे विकसित हो, इसकी बंद दीवालें कहां से तोड़ी जाएं, यह झरना कहां से फोड़ा जाए कि यह खिल जाए? कुछ करना बहुत अपरिहार्य हो गया है, बहुत जरूरी हो गया है। अगर हम नहीं करते हैं, तो शायद प्रेम के अभाव में पूरी मनुष्यता नष्ट भी हो सकती है। कैसे? तो दो-तीन छोटे से सूत्र आपसे कहना चाहता हूं, जिससे यह प्रेम की सरिता बह उठे।

पहली बात, जिस व्यक्ति के जीवन में प्रेम के फूल को खिलाना हो उसे प्रेम मांगने का ख्याल छोड़ देना चाहिए। उसे प्रेम देने का ख्याल स्पष्ट कर लेना चाहिए। पहला सूत्र, जो लोग प्रेम मांगते हैं, उनके भीतर प्रेम का बीज कभी अंकुर नहीं हो पाएगा। जो लोग प्रेम देते हैं उनके भीतर प्रेम का बीज अंकुरित हो सकता है। क्योंकि अंकुरित होने के लिए दान चाहिए। एक बीज जब अंकुरित होता है तो क्या करता है? पत्ते निकलते हैं, शाखाएं निकलती हैं, फूल खिलता है, सुगंध बिखर जाती है, सब बंट जाता है। बंट जाना है तो भीतर का बीज खुलेगा। जो मांगता है वह सिकुड़ जाता है। भिखमंगे से ज्यादा सिकुड़ा हुआ हृदय किसी का भी नहीं होता है। जो मांगता है वह सिकुड़ता जाता है, क्लोजिंग होती जाती है। उसके भीतर कोई चीज बंद होती चली जाती है।

रवींद्रनाथ एक गीत लिखे हैं। एक गीत लिखे हैं, एक भिखारी सुबह ही सुबह घर के बाहर आया है। कोई पवित्र दिन है और आज बड़ा खुश है कि गांव में बहुत भीख मिल जाएगी। झोली टांग कर जल्दी ही गीत गुनगुनाता घर के बाहर हुआ है। झोली में उसने थोड़े से चावल के दाने डाल लिए हैं। सभी भिखारी इतना मनोविज्ञान तो समझते हैं, इतनी साइकोलॉजी समझते हैं कि झोली खाली हो तो कोई देने को राजी नहीं होता। थोड़ा झोली में पहले से कुछ पड़ा रहना चाहिए, क्योंकि झोली में कुछ पड़ा हो तो देने वाले को अपमानजनक लगता है कि किसी और ने दे दिया है मैं कैसे नाहीं करूं। फिर देने वाले को यह भी लगता है कि भिखारी साधारण नहीं है, प्रतिष्ठित है, उसे मिलता है। कुछ डाल कर दाने चावल के निकल पड़ा है भिखारी घर के बाहर। आज कोई पवित्र दिन है और गांव में कुछ मिलने की आशा है। रास्ते पर आया है कि दंग रह गया, आशा से भी ज्यादा आशा प्रकट हो गई है। राजा का रथ आ रहा है। सूरज की किरणों से उसका स्वर्ण-रथ चमकता है। भिखारी तो आनंद से नाच उठा। आज तक राजा के दर्शन नहीं हो सके थे। द्वार तक जाता था द्वारपाल ही लौटा देते थे। आज राजा ही राह पर मिल गया। आज झोली फैला कर खड़ा हो जाऊंगा। आज तो धन्य हो गए भाग्य, अब तो पीढ़ियों तक मांगने की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी। वह ऐसे सपने देखने लगा और खड़ा है।

रथ आकर रुक गया, इतना हतप्रभ हो गया है, चैंक कर रह गया है। राजा नीचे उतर आया और राजा ने अपनी झोली भिखारी के सामने फैला दी। राजा ने कहा: क्षमा करना, किसी ज्योतिषी ने कहा है कि राज्य पर बड़े संकट हैं, और अगर मैं भीख मांग लूं आज तो राज्य के संकट टल सकते हैं, तो मैं भीख मांगने निकला हूं। और उसने कहा कि जो पहला आदमी मिल जाए उसके सामने झोली फैला कर दीन-हीन हो जाना तो राष्ट्र बच सकता है। तो मुझे कुछ भीख दे दो, राष्ट्र का सवाल है।

भिखारी के तो प्राण कितने सिकुड़ गए होंगे कुछ पता है। सोचा था उसने, राजा सामने आ गया, मांग लूंगा आज। जीवन-जीवन धन्य हो जाएंगे, हमेशा के लिए मुक्त हो जाऊंगा। वह तो गया ही, वे सपने तो गिर गए, वे जो महल बनाए सपने के, राख हो गए, और उलटा देना पड़ेगा। उसने कभी सोचा ही नहीं था कि देना कैसा होता है। हमेशा पाया था। हमेशा मांगा था। हमेशा लिया था। देना? आज उसे पहली दफा पता चला कि दूसरों पर क्या गुजरती होगी जब उनके सामने झोली फैलाता हूंगा?

हाथ डालता है झोली में और वापस निकाल लेता है। मुट्ठी बांधने का मन नहीं होता। एक मुट्ठी चावल कम हो जाएंगे अपने घर के। आज पछताया, आज झोली खाली ही लेकर आता तो अच्छा था। लेकिन भूल हो गई, लौटने का कोई उपाय नहीं, और राजा सामने खड़ा है। और राजा कहने लगा कि क्या इनकार करोगे? क्या मना कर दोगे? राष्ट्र संकट में है। एक दाना भी दे दो, एक मुट्ठी ना सही?

लेकिन एक दाना भी भिखारी देने में घबड़ाने लगा। लेकिन मजबूरी थी, एक दाना निकाल कर राजा की झोली में डाल दिया। राजा रथ पर बैठ गया, धूल उड़ती रह गई।

भिखारी चिंतित और दुखी दिन भर भीख मांगी। लेकिन मन बड़ा उदास हुआ, एक दाना जो देना पड़ा था, वह बार-बार याद आने लगा। बहुत दाने मिले दिन में, लेकिन भिखारियों की आदत यही होती है; जो मिलता है उसका ख्याल नहीं आता, जो छूट जाता है उसका ख्याल आता है।

हम सबकी भी यही आदत है। बड़े जगत में हम सब भिखारी हैं, जो नहीं मिल पाता उसकी पीड़ा बनी रह जाती है, जो मिलता है उसके लिए कोई धन्यवाद नहीं होता।

दिन भर रोता रहा मन ही मन में कि एक दाना कम है आज झोली में। तिजोरी में जो होता है वह नहीं दिखाई पड़ता। तिजोरी जहां खाली होती है वही जगह दिखाई पड़ती है। तो उस भिखारी पर नाराज मत हो जाना। साधारण आदमी था, जैसे आदमी होते हैं, जैसे हम सब हैं।

उदास लौटा है सांझ। पवित्र था दिन, दिन भर में इतना मिला है कि आज जैसा कभी नहीं मिला था। सारी झोली भर गई है, लेकिन उदास थका-मांदा घर आ गया है। पत्नी देख कर हैरान हो गई कि झोली पूरी भरी है और तुम इतने उदास? उसने कहा: झोली और भी भरी हो सकती थी। पागल, तूझे कुछ पता नहीं, आज बड़ी मुश्किल हो गई। आज मुझको भी भीख देनी पड़ी है। उदास, उसने झोली उलटाई और उदासी छाती पीटने में बदल गई। फिर वह छाती पीट कर रोने लगा। क्योंकि झोली जब नीचे गिरी तो उसने देखा कि एक दाना सोने का हो गया है। सब दाने तो साधारण दाने थे, मिट्टी के, लेकिन एक दाना सोने का हो गया है। तब वह छाती पीट कर रोने लगा कि मैंने सब दाने क्यों न दे दिए उस राजा को? लेकिन अब बहुत देर हो गई थी, अब देने का कोई उपाय न था।

आदमी भी जिंदगी के अंत में पाता है कि जो उसने दिया था सोने का हो गया और जो मांगा था वह मिट्टी का भार हो गया। जो देते हैं हम उससे भीतर कुछ स्वर्ण का होता चला जाता है। जो हम मांगते हैं सब मिट्टी होता चला जाता है।

भयभीत आदमी मांगता है। भयभीत भिखमंगा होता है। भय ही अकेला भिखारीपन है, क्योंकि भय कहता है कि जो है उसे मत छोड़ो। जो मिल जाए उसे ले लो। भय भिखारी बनाता है। प्रेम सम्राट बना देता है। लेकिन सम्राट बनने की दिशा देना है, मांगना नहीं। प्रेम का पहला सूत्र है कि वह प्रेम जन्म नहीं पा सकेगा जब तक हम मांगते हैं। हम सब एक-दूसरे से मांगते हैं, मांगते हैं, मांगते हैं। मां बेटे से कहती है कि तु मुझे प्रेम नहीं करता। बेटा सोचता है मां मुझे प्रेम नहीं करती। पत्नी कहती है पति मुझे प्रेम नहीं करता। चैबीस घंटे एक ही शिकायत है पत्नी की कि तुम मुझे प्रेम नहीं करते और पति की भी वही शिकायत है कि मैं थका-मांदा घर आता हूं मुझे कोई प्रेम नहीं मिलता। दोनों मांग रहे हैं, दोनों भिखारी, एक-दूसरे के सामने झोली फैलाए खड़े हैं। और यह सोचते नहीं कि दूसरी तरफ भी मांगने वाला खड़ा है और इस तरफ भी मांगने वाला खड़ा है। जीवन में कलह और द्वंद्व और युद्ध नहीं होगा तो क्या होगा? जहां सभी भिखारी हैं वहां जीवन बरबाद नहीं होगा तो और क्या होगा?

प्रेम के जन्म का पहला सूत्र है: प्रेम दान है, भिक्षा नहीं। इसलिए जीवन में देने की तरफ दृष्टि जगनी चाहिए। यह मत कहें कि पति मुझे प्रेम नहीं देता; अगर पति पे्रम नहीं देता, इसका एक ही मतलब है कि आप प्रेम नहीं दे रही हैं। यह मत कहें पति कि पत्नी मुझे प्रेम नहीं देती; इसका एक ही मतलब है कि पति प्रेम नहीं दे रहा है। क्योंकि जहां प्रेम दिया जाता है वहां तो अनंत गुना होकर वापस लौटता है। एक-एक दाना सोने का होकर वापस लौटता है। वह तो शाश्वत जीवन का नियम है कि जो दिया जाता है वह अनंत गुणा होकर वापस लौटता है। गाली दी जाती है, तो गालियां अनंत गुनी होकर वापस लौट आती हैं और प्रेम दिया जाता है तो प्रेम अनंत गुना होकर वापस लौट आता है। जीवन एक ईको-पॉइंट से ज्यादा नहीं है। जहां हम जो ध्वनि करते हैं, वह वापस गंुज कर हम पर वापस आ जाती है। और हर व्यक्ति एक ईको-पॉइंट है। उसके पास जो हम करते हैं, वही वापस लौट आता है। वही दुगुना, अनंत गुना होकर वापस लौट आता है। प्रेम मिलता है उन्हें, जो देते हैं। प्रेम उन्हें कभी भी नहीं मिलता है जो मांगते हैं। जब मांगने से प्रेम नहीं मिलता तो और मांग बढ़ती चली जाती है, और मांग बढ़ती चली जाती है, और मांग बढ़ती चली जाती है। और मांग में प्रेम कभी मिलता नहीं है। प्रेम उनको

मिलता है जो देते हैं, जो बांटते हैं। लेकिन हमें हमेशा बचपन से यह सिखाया जा रहा है: मांगो, मांगो, मांगो! इस मांग ने हमारे भीतर प्रेम के बीज को सख्त कर दिया है।

इसलिए पहला सूत्र है: प्रेम दें। दूसरा सूत्रः देने में अगर अपेक्षा रखें, देने में अगर कोई एक्सपेक्टेशन है, देने में अगर कोई ख्याल है कि लौटना चाहिए, तो कभी नहीं लौटेगा। लौटेगा नहीं और भीतर जो पैदा हो सकता था वह पैदा नहीं होगा, क्योंकि दान कभी भी कंडीशनल नहीं हो सकता, सशर्त नहीं हो सकता। दान हमेशा बेशर्त है। दूसरा सूत्र है: प्रेम का जन्म होगा अगर बेशर्त दान हो। बेशर्त दान प्रेम की शिक्षा की दूसरी सीढ़ी है।

लेकिन हम हमेशा शर्तबंद हैं, हमारा देना। देने के पहले हमारी मांग खड़ी है। देने के वक्त हमारी अपेक्षा खड़ी है। दिया नहीं और हम तैयार हैं कि उत्तर वापस आना चाहिए। ऐसा जो मन है जो उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा है, पता ही नहीं है उसे कि उस उतर की प्रतीक्षा में देने के कारण उसके भीतर जो पैदा होता है, वह उसे दिखाई ही नहीं पड़ेगा। वह वंचित हो गया। देकर बिना उत्तर की मांग किए बिना रिस्पांस की फिकर किए। दो ही बातें हैं, जब मैं किसी को प्रेम दूं तो अगर मेरी कोई अपेक्षा है तो नजर उस पर लगी रहती है कि वह क्या करता है और अगर मेरी कोई अपेक्षा नहीं है तो देने के बाद नजर खुद पर आ जाती है, कि देने से क्या हुआ है। देने से भीतर जो फूल खिल सकता है, उसके लिए ध्यान चाहिए, उसके लिए मेडिटेशन चाहिए। तो उसका ध्यान तो उस पर कभी जाता ही नहीं जो भीतर हो रहा है। ध्यान उस पर जाता है जिसके साथ हमने किया है। चूक गए एक मौका। मैंने कहा कि जैसे बीज के लिए सूरज की किरणें चाहिए ऐसे ही भीतर प्रेम के बीज के लिए ध्यान की किरणें चाहिए। मेडिटेटिव कांशसनेस चाहिए कि मेरा ध्यान भीतर जाए। ध्यान की किरणें भीतर जाएं। भूमि चाहिए दान की, किरणें चाहिए ध्यान की। तो भीतर किरणें चाहिए, लेकिन मेरा ध्यान लगा हुआ है उस पर।

मैंने किसी को हाथ का सहारा देकर जमीन से उठा दिया, तो मैं देख रहा हूं कि आस-पास फोटोग्राफर है या नहीं। कोई अखबार वाला है कि नहीं। यह आदमी उठ कर धन्यवाद देता है कि नहीं। चूक गया मैं मौका। एक क्षण आया था जब मैं भीतर जा सकता था। और जो दान घटित हुआ था उस दान के पीछे जो भीतर फूल खिल सकता था उसे देखता। मेरे देखने के साथ ही वहां भीतर कोई कली खिल जाती, लेकिन मैं चूक गया। देखने का मौका भूल गया। मैं बाहर देखने लगा। मैं फोटोग्राफर खोजने लगा। मैं अखबार वाले को देखने लगा। मैं उस आदमी को देखने लगा कि बेईमान कुछ कहता है कि चुपचाप चला जाता है उठ कर? धन्यवाद देता है कि नहीं? चूक गया। एक क्षण, एक मोमेंट आया था, जब भीतर नजर जाती तो कोई चीज खिल जाती। आपको शायद पता न हो, आंख जहां चली जाती है वहीं चीजें खिल जाती हैं।

मनुष्य के पास जो सबसे बड़ी ताकत है वह आंख की ताकत है, देखने की ताकत है, और कोई बड़ी ताकत नहीं है। सबसे बड़ी, सबसे सूक्ष्म, सबसे डेलिकेट, सबसे मूल्यवान जो ताकत है वह देखने की है। किसी को जरा प्रेम से देखें, जैसे वहां कोई चीज खिल जाती है, कोई उदासी मिट गई, कोई रोशनी हो गई। किसी को जरा प्रेम से देखें, और वहां जैसे कोई फूल खिल गया, कोई सुगंध आ गई। ऐसे ही जब कोई भीतर, अपने भीतर दान के क्षण में प्रेम से देखता है, निहारता है, तो वहां भी कोई चीज खिल जाती है, वहां भी हृदय में कोई फूल खिल जाता है।

दूसरा सूत्र है: दान के क्षण में बेशर्त, बिना किसी अपेक्षा के चुपचाप, मौन, बिना किसी उत्तर के।

तीसरा सूत्र है: जो आपके प्रेम को स्वीकार कर ले उसके प्रति अनुग्रह, गेटिट्यूड कि उसने स्वीकार किया। हम तो यह चाहते हैं कि वह हमारा धन्यवाद करे कि हमने उसे प्रेम दिया। लेकिन प्रेम का बीज यह चाहता है कि हम अनुग्रह स्वीकार करें, उसका ग्रेटिट्यूड कि तुमने स्वीकार किया। तुम इनकार भी कर सकते थे। एक गिरा हुआ आदमी यह भी कह सकता था कि नहीं, मत उठाओ। फिर मेरी क्या सामर्थ्य थी कि मैं उसे उठाने का मौका पाता। लेकिन नहीं, उसने मुझे उठाने दिया। उसने एक अवसर दिया कि मेरे भीतर जो प्रेम है वह बह सके। उसने एक अॅापरच्युनिटी दी, उसके लिए मुझे धन्यवाद देना चाहिए। उसे नहीं कि वह मेरा धन्यवाद करे। मैं उसे धन्यवाद दूं कि मैं कृतज्ञ हुआ, मैं अनुगृहीत हुआ। तुमने कृपा की कि मेरे प्रेम को स्वीकार कर लिया। यह तीसरा सूत्र है, जो प्रेम को स्वीकार करे उसके प्रति अनुग्रह का भाव। इस अनुग्रह के भाव में

भीतर की कली और जोर से चटखेगी और खिलेगी। क्योंकि अनुग्रह के भाव में ही जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह खिलता है और विकसित होता है।

ग्रेटिट्यूड से बड़ा कोई भाव नहीं, कोई प्रार्थना नहीं, कोई प्रेयर नहीं। लेकिन हाथ जोड़े बैठे हैं, भगवान के सामने और कुछ शब्द दोहरा रहे हैं। यह सवाल नहीं है। जीवन के समक्ष अनुग्रह का भाव, तारों के समक्ष, सूरज के समक्ष, फूलों के समक्ष, लोगों के समक्ष, चारों तरफ यह जो विराट जीवन है, यह मेरे प्रेम को स्वीकार करता है। यह मेरे प्रेम को बहने का मौका देता है। यह मेरे फुलफिलमेंट में, यह मेरी आत्म-उपलब्धि में सहयोगी और मित्र बन गया है। इस सब का, अनुग्रह, इस सबका धन्यवाद जब मन में होगा तो भीतर के झरने फूट पड़ेंगे और बह जाएंगे, और जिस दिन प्रेम का झरना भीतर बहने लगता है उसी दिन पाया जाता है कि भय, फियर कहीं भी नहीं है। है ही नहीं। वह था ही नहीं, वह कभी था ही नहीं। वह प्रेम की अनुपस्थिति थी। वह गैर-मौजूदगी थी।

जब प्रेम से हृदय भर आता है तो इस जगत में कोई भय नहीं है। तब हाथ में तलवार उठाने की जरूरत नहीं। तब राम-राम जप कर मन को बोथला करने की कोई जरूरत नहीं है। तब तो सब तरफ राम ही दिखाई पड़ने लगता है। जपना किसको है, याद किसको करना है, वही है। तब तो सब तरफ उसी परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं। जब भीतर प्रेम होता है तो सारा जगत परमात्मा हो जाता है। और जब भीतर भय होता है तो सारा जगत शत्रु हो जाता है। भीतर जो है वही बाहर हो जाता है। भीतर भय है तो बाहर शत्रुता है। भीतर प्रेम है तो बाहर प्रभु है। वह प्रीतम, वह बिलॅविड है, और फिर सब तरफ वही है सब तरफ, हर इशारे में, हर घटना में, जीवन में, मौत में, कांटे में, फूल में, पत्थर में, सब में वही है।

एक छोटी सी घटना और फिर मैं अपनी बात पूरी करूं।

दो भिक्षु एक लंबी यात्रा से वापस लौटे हैं। वे आठ माह तक घूमते रहे गांव-गांव, गांव-गांव प्रेम की खबर पहंुचाते रहे, प्रभु का गीत गाते रहे। वे लौटे हैं। वर्षा आ गई है सिर पर और अपने गांव पहंुचे झोपड़े में। जब वे झोपड़े के पास पहंुचे हैं, तो बूढ़ा भिक्षु पीछे है, जवान भिक्षु आगे है। उस जवान ने देखा कि झोपड़ा तो टूटा हुआ पड़ा है। आधा छप्पर हवाओं में उड़ गया मालूम होता है। वर्षा आने को है, हवाएं तेज हैं। छप्पर टूटा पड़ा है, एक दीवाल टूटी पड़ी है। उसका मन क्रोध से भर आया। उसने लौट कर अपने बूढ़े साथी को कहा: देखते हो, ये तुम्हारे भगवान की कृपा है जिसके हम गीत गाते फिरते हैं, जिसके लिए हम गांव-गांव नाचते हैं, जिसकी प्रार्थना में हमने श्वास-श्वास गवां दी, उसकी यह कृपा है? वर्षा सिर पर है और झोपड़ा टूटा पड़ा है? आधा झोपड़ा उड़ गया, आधा छप्पर उड़ गया है? और पापियों के मकान नगर में अछूते खड़े हैं, उनमें कुछ ईंट नहीं गिरी। और हम, हम जो उसी का गीत गाते हैं और उसी के लिए जीते हैं, उसके साथ यह अन्याय! इसी बात से तो शक पैदा होता है, संदेह पैदा होता है कि भगवान-वगवान कुछ नहीं है, हम गलती में पड़े हुए हैं।

वह क्रोध से भरा है। लेकिन क्रोध से भरी आंखों में उसे दिखाई नहीं पड़ा कि बुढ़ा क्या कर रहा है। क्रोध उसका थोड़ा उतरा है। और बूढ़े से कोई उत्तर नहीं आया। क्रोध का जब भी उत्तर नहीं आता तो क्रोध जल्दी से उतर जाता है। उतर आता है तो बढ़ता है। जब कोई उत्तर नहीं आया, बूढ़ा मौन खड़ा है, तो उसने आंखें पोंछी और देखा कि बूढ़ा क्या कर रहा है। बुढ़े की आंखों से आंसू बहे जा रहे हैं, उसके हाथ जुड़े हैं आकाश की तरफ और वह कुछ बुदबुदा रहा है। वह कह रहा है, हे परमात्मा, आंधियों का क्या भरोसा, पूरा छप्पर भी उड़ा कर ले जा सकती थी। जरूर तुने बीच में बाधा दी होगी, इसलिए आधा बच गया है। धन्यवाद तेरा।

फिर वे दोनोें जाकर सो गए हैं। रात ऊपर घिरी है। अंधेरी रात, आकाश में बादल घिरे हैं। आज नहीं कल, कल नहीं परसों वर्षा होगी। आधा छप्पर टूटा पड़ा है। एक दीवाल गिर गई है। वे उसके भीतर सो रहे हैं। जो जवान भिक्षु क्रोध से भर गया था, वह रात भर सो नहीं सका। क्रोध के साथ नींद का क्या संबंध हो सकता है। नींद को केवल वही सोते हैं जो क्रोध में नहीं हैं। फिर वह भयभीत है। वर्षा सिर पर है, क्या होगा? भय का नींद से क्या संबंध हो सकता है? नींद तो परम

शांति है। केवल वे ही सोते हैं जो शांत हैं। और स्मरण रहे, जो सोते हैं केवले वे ही जागते भी हैं। जो ठीक से नहीं सो पाता वह ठीक से जाग भी हीं पाता।

रात भर वह करवटें बदलता रहा। रात भर उसे क्रोध, गुस्सा आता रहा है कि अब छोड़ दूंगा यह गीत और यह प्रार्थना। लेकिन बूढ़ा सो गया ऐसे परम अनुग्रह के भाव में। उसके चेहरे पर बुढ़ापे की जैसे रेखाएं मिट गईं, वह छोटा बच्चा हो गया है, वह ऐसे सोया है जैसे अपनी मां की गोद में सिर रख कर सोया हो, क्योंकि जिसके हृदय में अनुग्रह है, यह सारा जगत उसे मां की गोद हो जाता है। रात उसकी नींद खुली है, बुढ़े की, तो आकाश में तारे देख कर उसने फिर धन्यवाद दिया कि हे परमात्मा, अगर हमें यह पता होता कि आज इस छप्पर में इतना आनंद है फिर रात सोओ भी और कभी आंख खोलो तो तारे भी देख लो। हमें अगर पता होता कि आज इस छप्पर में ऐसा मजा है तो हम तेरी हवाओं को तकलीफ न देते हम, खुद ही आकर छप्पर गिरा देते। माफ करना, तेरी हवाओं को तकलीफ करनी पड़ी, लेकिन तू हमारी इतनी फिकर करता है। यह अनुग्रह का भाव है। यह गे्रटिट्यूड है।

प्रेम का जन्म, तीसरा सूत्र है। अनुग्रह का भाव जो भी स्वीकार कर ले..चारों तरफ सबके प्रति अनुग्रह का भाव, तो भीतर प्रेम का झरना फूटेगा। निश्चित फूटेगा, फूटता है। और जिस दिन प्रेम का झरना फूटता है उसी दिन भय का अंधकार विलीन हो जाता है।

जिस दिन हृदय इतने प्रेम से भर जाता है कि चारों ओर परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं, उसी दिन भय का अंधकार विलीन हो जाता है। और जहां भय नहीं है वहां प्रभु का मंदिर है। और जहां भय नहीं है वहां जीवन का सत्य है। और जहां भय नहीं है वहां जीवन का आनंद है। जहां भय नहीं है वहां जीवन का सौंदर्य है। और जहां भय नहीं है वहां जीवन का संगीत है। और हम सब विसंगीत में हैं, दुख में हैं, चिंता में हैं, भय में हैं, क्योंकि प्रेम का मंदिर हम नहीं बना पाए। आज तक की पूरी मनुष्यता गलत रही है। ठीक मनुष्यता का जन्म हो सकता है। लेकिन मनुष्य के प्राणों के भय को हटा कर प्रेम को स्थापित करना है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

प्रेम और विवाह

संभोग से समाधि की ओर-8

मनुष्य की आत्मा, मनुष्य के प्राण निरंतर ही परमात्मा को पाने के लिए आतुर हैं। लेकिन किस परमात्मा को? कैसे परमात्मा को? उसका कोई अनुभव, उसका कोई आकार, उसकी कोई दिशा मनुष्य को ज्ञात नहीं है। सिर्फ एक छोटा सा अनुभव है, जो मनुष्य को ज्ञात है और जो परमात्मा की झलक दे सकता है। वह अनुभव प्रेम का अनुभव है। जिसके जीवन में प्रेम की भी कोई झलक नहीं है, उसके जीवन में परमात्मा के आने की कोई संभावना नहीं है।

न तो प्रार्थनाएं परमात्मा तक पहुंचा सकती हैं, न धर्मशास्त्र पहुंचा सकते हैं, न मंदिर-मस्जिद पहुंचा सकते हैं, न कोई संगठन हिंदू और मुसलमानों के और ईसाइयों और पारसियों के पहुंचा सकते हैं। एक ही बात परमात्मा तक पहुंचा सकती है और वह यह है कि प्राणों में प्रेम की ज्योति का जन्म हो जाए।

मंदिर और मस्जिद तो प्रेम की ज्योति को बुझाने का काम करते रहे हैं। जिन्हें हम धर्मगुरु कहें, वे मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने के लिए जहर फैलाते रहे हैं। जिन्हें हम धर्मशास्त्र कहें, वे घृणा और हिंसा के आधार और माध्यम बन गए हैं।

और जो परमात्मा तक पहुंचा सकता था, वह प्रेम अत्यंत उपेक्षित, अत्यंत निग्लेक्टेड, जीवन के रास्ते के किनारे कहीं अंधेरे में पड़ा रह गया है। इसलिए पांच हजार वर्षों से आदमी प्रार्थनाएं कर रहा है, पांच हजार वर्षों से आदमी भजन-पूजन कर रहा है, पांच हजार वर्षों से मंदिरों और मस्जिदों की मूर्तियों के सामने सिर टेक रहा है, लेकिन परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी। परमात्मा की कोई किरण मनुष्य के भीतर अवतरित नहीं हो सकी। कोरी प्रार्थनाएं हाथ में रह गई हैं, और आदमी रोज-रोज नीचे गिरता गया है, रोज-रोज अंधेरे में भटकता गया है। आनंद के केवल सपने हाथ में रह गए हैं, सच्चाइयां अत्यंत दुखपूर्ण होती चली गई हैं। और आज तो आदमी करीब-करीब ऐसी जगह खड़ा हो गया है, जहां उसे यह खयाल भी लाना असंभव होता जा रहा है कि परमात्मा भी हो सकता है।

क्या आपने कभी सोचा कि यह घटना कैसे घट गई है? क्या नास्तिक इसके लिए जिम्मेवार हैं कि लोगों की आकांक्षा और अभीप्सा ने परमात्मा की दिशा की तरफ जाना बंद कर दिया है? क्या वे लोग इसके लिए जिम्मेवार हैं--वैज्ञानिक और भौतिकवादी और मैटीरियलिस्ट--उन्होंने परमात्मा के द्वार बंद कर दिए हैं?

नहीं, परमात्मा के द्वार इसलिए बंद हो गए हैं कि परमात्मा का एक ही द्वार था--प्रेम, और वह प्रेम की तरफ हमारा कोई ध्यान ही नहीं रहा है! और भी अजीब और कठिन और आश्चर्य की बात यह हो गई है कि तथाकथित धार्मिक लोगों ने ही मिल-जुल कर प्रेम की हत्या कर दी है। और मनुष्य के जीवन को इस भांति सुव्यवस्थित करने की कोशिश की गई है कि उसमें प्रेम की किरण की संभावना ही न रह जाए।

नारी समाज की इस बैठक में मैं इस प्रेम के संबंध में थोड़ी सी बात कहना चाहता हूं, क्योंकि इसके अतिरिक्त मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता है कि कोई प्रभु तक कैसे पहुंच सकता है। और इतने लोग जो वंचित हो गए हैं प्रभु तक पहुंचने से, वह इसीलिए कि वे प्रेम तक पहुंचने से ही वंचित हो गए हैं।

समाज की पूरी की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। परिवार का पूरा का पूरा केंद्र अप्रेम का केंद्र है। बच्चे के कंसेप्शन से लेकर, उसके गर्भाधारण से लेकर उसकी मृत्यु तक की सारी यात्रा अप्रेम की यात्रा है। और हम इसी समाज को, इसी परिवार को, इसी गृहस्थी को सम्मान किए जाते हैं, आदर दिए जाते हैं, शोरगुल मचाए चले जाते हैं कि यह बड़ा पवित्र परिवार है, बड़ी पवित्र समाज है, बड़ा पवित्र जीवन है। और यही परिवार और यही समाज और यही सभ्यता, जिसके गुणगान करते हम थकते नहीं, यही सभ्यता और यही समाज और यही परिवार मनुष्य को परमात्मा से रोकने का कारण बन रहा है।

इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी होगा।

मनुष्यता के विकास में कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई है। यह सवाल नहीं है कि एकाध आदमी ईश्वर को पा ले। कोई कृष्ण, कोई राम, कोई बुद्ध, कोई क्राइस्ट ईश्वर को उपलब्ध हो जाए, यह कोई सवाल नहीं है। अरबों-खरबों लोगों में अगर एक आदमी के जीवन में ज्योति उतर आती हो, तो यह कोई विचार करने की बात भी नहीं है, इस पर कोई हिसाब रखने की भी जरूरत नहीं है।

एक माली एक बगीचा लगाए, उसमें दस करोड़ पौधे लगाए और एक पौधे में एक छोटा सा फूल आ जाए, तो उस माली की प्रशंसा करने कौन जाएगा? कौन कहेगा कि माली, तू बहुत कुशल है! तूने जो बगीचा लगाया है, वह बहुत अदभुत है! देख, दस करोड़ वृक्षों में एक फूल खिल गया है!

हम कहेंगे कि यह माली की कुशलता का सबूत नहीं है--यह फूल खिल जाना। माली की भूल-चूक से खिल गया होगा। क्योंकि बाकी सारे पेड़ खबर दे रहे हैं कि माली कितना कुशल है। यह इंस्पाइट, यह माली के बावजूद खिल गया होगा फूल। माली ने कोशिश की होगी कि न खिल पाए, क्योंकि सारे पौधे तो खबर दे रहे हैं कि माली के फूल कैसे खिले हुए हैं!

अरबों लोगों के बीच कभी एकाध आदमी के जीवन में ज्योति जल जाती है और हम उसी का शोरगुल मचाते रहते हैं हजारों साल तक, उसी की पूजा करते रहते हैं, उसी के मंदिर बनाते रहते हैं, उसी का गुणगान करते रहते हैं। अब तक हम रामलीला कर रहे हैं। अब तक बुद्ध की जयंती मना रहे हैं। अब तक महावीर की पूजा कर रहे हैं। अब तक क्राइस्ट के सामने घुटने टेके बैठे हुए हैं।

यह किस बात का सबूत है? यह इस बात का सबूत है कि पांच हजार साल में पांच-छह आदमियों के अतिरिक्त आदमियत के जीवन में परमात्मा का कोई संपर्क नहीं हो सका है। नहीं तो कभी का हम भूल गए होते राम को, कभी का हम भूल गए होते बुद्ध को, कभी का हम भूल गए होते महावीर को। महावीर को हुए ढाई हजार साल हो गए। ढाई हजार साल में कोई आदमी नहीं हुआ कि महावीर को हम भूल सकते। महावीर को याद रखना पड़ा है। वह एक फूल खिला था, वह अब तक हमें याद रखना पड़ा है।

यह कोई गौरव की बात नहीं है कि हमको अब तक स्मृति है बुद्ध की, महावीर की, कृष्ण की, राम की, मोहम्मद की, क्राइस्ट की या जरथुस्त्र की। यह इस बात का सबूत है कि आदमी होते ही नहीं कि उनको हम भुला सकें। बस दो-चार इने-गिने नाम अटके रह गए हैं मनुष्य-जाति की स्मृति में।

और उन नामों के पास भी हमने क्या किया है सिवाय उपद्रव के, हिंसा के? और उनकी पूजा करने वाले लोगों ने क्या किया है--सिवाय आदमी के जीवन को नरक बनाने के और क्या किया है? मस्जिदों और मंदिरों के पुजारियों ने और पूजकों ने जमीन पर जितनी हत्या की है और जितना खून बहाया है और जीवन का जितना अहित किया है, उतना किसी ने भी नहीं किया है।

जरूर कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई है। नहीं तो इतने पौधे लगें और फूल न आएं, यह बड़े आश्चर्य की बात है! कहां भूल हो गई है?

मेरी दृष्टि में, मनुष्य के जीवन का केंद्र ही अब तक प्रेम नहीं बनाया जा सका, इसलिए भूल हो गई है। और वह प्रेम केंद्र बनेगा भी नहीं, क्योंकि जिन चीजों के कारण वह प्रेम जीवन का केंद्र नहीं बन रहा है, हम उन्हीं चीजों का शोरगुल मचा रहे हैं, आदर कर रहे हैं, सम्मान कर रहे हैं--तो कैसे होगा?

मनुष्य की जन्म से लेकर मृत्यु तक की यात्रा ही गलत हो गई है। इस पर पुनर्विचार करना जरूरी है। अन्यथा सिर्फ हम कामनाएं कर सकते हैं और कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकता है।

क्या गलत हो गया है? क्या आपको कभी यह बात खयाल में आई कि आपका परिवार प्रेम का शत्रु है? क्या आपको कभी यह बात खयाल में आई कि आपका समाज प्रेम का शत्रु है? क्या आपको यह बात कभी खयाल में आई कि मनु से लेकर आज तक के सभी नीतिकार प्रेम के विरोधी हैं?

जीवन का केंद्र है परिवार। और परिवार विवाह पर खड़ा किया गया है; जब कि परिवार प्रेम पर खड़ा होना चाहिए था। भूल हो गई, आदमी के सारे पारिवारिक विकास की बुनियादी भूल हो गई। परिवार निर्मित होना चाहिए प्रेम के केंद्र पर, और परिवार निर्मित किया जाता है विवाह के केंद्र पर! इससे ज्यादा झूठी और मिथ्या बात नहीं हो सकती।

प्रेम और विवाह का क्या संबंध है?

प्रेम से तो विवाह निकल सकता है, लेकिन विवाह से प्रेम नहीं निकलता और नहीं निकल सकता है। इस बात को थोड़ा समझ लें तो हम आगे बढ़ सकें।

प्रेम परमात्मा की व्यवस्था है और विवाह आदमी की व्यवस्था है।

विवाह सामाजिक संस्था है, प्रेम प्रकृति का दान है।

प्रेम तो प्राणों के किसी कोने में अनजाने, अपरिचित पैदा होता है।

और विवाह? विवाह समाज, कानून नियमित करता है, स्थिर करता है, बनाता है।

विवाह आदमी की ईजाद है।

और प्रेम? प्रेम परमात्मा का दान है।

हमने सारे परिवार को विवाह के केंद्र पर खड़ा कर दिया है, प्रेम के केंद्र पर नहीं। हमने यह मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया में उतर जाएंगे। अदभुत झूठी बात है! और पांच हजार वर्षों में भी हमको इसका खयाल नहीं आ सका, हम अदभुत अंधे हैं! दो आदमियों को साथ बांध देने से प्रेम के पैदा हो जाने की कोई जरूरत नहीं है, कोई अनिवार्यता नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि जो लोग बंधा हुआ अनुभव करते हैं, वे आपस में प्रेम कभी भी नहीं कर सकते।

प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता में। प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता की भूमि में--जहां कोई बंधन नहीं है, जहां कोई जबरदस्ती नहीं है, जहां कोई कानून नहीं है। प्रेम तो व्यक्ति का अपना आत्मदान है--बंधन नहीं, जबरदस्ती नहीं। उसके पीछे कोई कानून नहीं, कोई नियम नहीं।

लेकिन हमने आज तक की मनुष्यता की सभ्यता को--सारी दुनिया में--प्रेम से वंचित कर दिया। शुरु किरण जो प्रेम की पैदा होती है स्त्री या पुरुष के मन में, युवक और युवती के मन में, उस पहली किरण की ही हम गला घोंट कर हत्या कर देते हैं। हम कहते हैं, विवाह, प्रेम नहीं। और फिर हम कहते हैं, विवाह से प्रेम पैदा होना चाहिए।

फिर जो प्रेम पैदा होता है, वह बिलकुल पैदा किया होता है, कल्टीवेटेड होता है, कोशिश से लाया गया होता है। वह प्रेम वास्तविक नहीं होता। वह प्रेम स्पांटेनिअस नहीं होता। वह प्रेम प्राणों से सहज उठता नहीं, फैलता नहीं। और जिसे हम विवाह से उत्पन्न प्रेम कहते हैं, वह प्रेम केवल सहवास के कारण पैदा हुआ मोह होता है। प्राणों की ललक और प्राणों का आकर्षण और प्राणों की विद्युत वहां अनुपस्थित होती है।

फिर यह परिवार बनता है--यह विवाह से पैदा हुआ परिवार। और परिवार की पवित्रताओं की कथाओं का हिसाब नहीं है! और परिवार की प्रशंसाओं की, स्तुतियों की भी कोई गणना नहीं है! और परिवार सबसे कुरुप संस्था साबित हुई है पूरे मनुष्य को विकृत करने में, परवर्टेड करने में। प्रेम से शून्य परिवार मनुष्य को विकृत करने में, अधार्मिक करने में, हिंसक बनाने में सबसे बड़ी संस्था साबित हुई है। प्रेम से शून्य परिवार से ज्यादा अग्ली और कुरुप कुछ भी नहीं है, और वही अधर्म का अड्डा बना हुआ है।

क्यों? जब एक बार एक युवक और युवती को हम विवाह में बांध देते हैं--बिना प्रेम के, बिना आंतरिक परिचय के, बिना एक-दूसरे के प्राणों के संगीत के--जब हम केवल धागों में और पंडित के मंत्रों में और वेदी की पूजा में और थोथे

उपक्रम में उनको विवाह में बांध देते हैं, और फिर आशा करते हैं उनको साथ छोड़ कर कि उनके जीवन में प्रेम पैदा हो जाएगा! प्रेम पैदा नहीं होता, सिर्फ उनके संबंध कामुक होते हैं, सेक्सुअल होते हैं, और कोई संबंध नहीं होते। और जब उनका प्रेम पैदा नहीं हो पाता है...क्योंकि प्रेम पैदा किया नहीं जा सकता। प्रेम पैदा हो जाए तो दो व्यक्ति साथ जुड़ कर परिवार का निर्माण कर सकते हैं। लेकिन दो व्यक्तियों को परिवार के निर्माण के लिए जोड़ दिया जाए और फिर आशा की जाए कि प्रेम पैदा हो जाए, यह नहीं हो सकता। और जब प्रेम पैदा नहीं होता है तो क्या परिणाम घटित होते हैं, आपको पता है?

एक-एक परिवार कलह है। जिसको गृहस्थी हम कहते हैं, वह संघर्ष, कलह, द्वेष,र् ईष्या और चौबीस घंटे के उपद्रव का अड्डा बना हुआ है। लेकिन न मालूम हम कैसे अंधे हैं कि इसे हम देखते भी नहीं! बाहर जब हम निकलते हैं तो हम मुस्कुराते हुए निकलते हैं। सब घर के आंसू पोंछ कर बाहर आ जाते हैं। पत्नी भी हंसती हुई मालूम पड़ती है, पति भी हंसता हुआ मालूम पड़ता है।

ये चेहरे झूठे हैं। ये दूसरों को दिखाई पड़ने वाले चेहरे हैं। घरों के भीतर के चेहरे बहुत आंसुओं से भरे हुए हैं। चौबीस घंटे कलह और संघर्ष में जीवन बीत रहा है। फिर इस कलह और संघर्ष के परिणाम होंगे। दो परिणाम होंगे। एक तो परिणाम यह होगा कि प्रेम के अतिरिक्त किसी व्यक्ति के जीवन में फुलफिलमेंट, आत्मतृप्ति नहीं उपलब्ध होती। प्रेम जो है, वह व्यक्तित्व की तृप्ति का चरम बिंदु है। और जब प्रेम नहीं मिलता तो व्यक्तित्व हमेशा अनफुलफिल्ड, हमेशा अधूरा, बेचैन, तड़फता हुआ, मांग करता हुआ कि मुझे पूर्ति चाहिए, हमेशा बेचैन, तड़फता हुआ रह जाता है। यह तड़फता हुआ व्यक्तित्व समाज में अनाचार पैदा करता है। क्योंकि यह तड़फता हुआ व्यक्तित्व प्रेम को खोजने निकलता है। विवाह में प्रेम नहीं मिलता। वह विवाह के अतिरिक्त प्रेम को खोजने की कोशिश करता है।

वेश्याएं पैदा होती हैं विवाह के कारण। विवाह है रूट, विवाह है जड़ वेश्याओं के पैदा होने की। और अब तक तो स्त्री वेश्याएं थीं, अब तो सभ्य मुल्कों में पुरुष वेश्याएं, मेल प्रास्टीटयूट्स भी उपलब्ध हैं। वेश्या पैदा होगी। क्योंकि परिवार में जो प्रेम उपलब्ध होना चाहिए था वह नहीं उपलब्ध हुआ है, आदमी दूसरे घरों में झांक रहा है उस प्रेम के लिए। वेश्याएं होंगी। और अगर वेश्याएं रोक दी जाएंगी तो दूसरे परिवारों में पीछे के द्वारों से प्रेम के रास्ते निर्मित होंगे। इसीलिए तो सारे समाज ने यह तय कर लिया है कि कुछ वेश्याएं निश्चित कर दो, ताकि परिवारों का आचरण सुरक्षित रहे। कुछ स्त्रियों को पीड़ा में डाल दो, ताकि बाकी स्त्रियां पतिव्रता बनी रहें और सती-सावित्री बनी रहें।

लेकिन जो समाज ऐसे अनैतिक उपाय खोजता है...वेश्या जैसा अनैतिक उपाय और क्या हो सकता है? इससे ज्यादा और इम्मॉरल क्या हो सकता है? जिस समाज को वेश्याओं जैसी अनैतिक संस्थाएं ईजाद करनी पड़ती हैं, जान लेना चाहिए कि वह पूरा समाज बुनियादी रूप से अनैतिक होगा। अन्यथा यह अनैतिक ईजादों की आवश्यकता नहीं थी।

वेश्या पैदा होती है, अनाचार पैदा होता है, व्यभिचार पैदा होता है, तलाक पैदा होते हैं। नहीं तलाक होता, नहीं अनाचार होता, नहीं व्यभिचार होता, तो घर एक चौबीस घंटे का मानसिक तनाव और एंग्जाइटी बन जाता है।

सारी दुनिया में पागलों की संख्या बढ़ती गई है। ये पागल परिवार के भीतर पैदा होते हैं।

सारी दुनिया में स्त्रियां हिस्टेरिक होती चली जा रही हैं, न्यूरोटिक होती चली जा रही हैं, विक्षिप्त, उन्माद से भरती चली जा रही हैं। बेहोश होती हैं, गिरती हैं, चिल्लाती हैं, रोती हैं। पुरुष पागल होते चले जा रहे हैं। एक घंटे में जमीन पर एक हजार आत्महत्याएं हो जाती हैं! और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि यह समाज हमारा बहुत महान है, ऋषि-मुनियों ने इसे निर्मित किया है। और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि बहुत सोच-समझ कर इस समाज के आधार रखे गए हैं। कैसे ऋषि-मुनि और कैसे ये आधार? अभी एक घंटा मैं बोलूंगा, तो इस बीच एक हजार आदमी कहीं छुरा मार लेंगे, कोई ट्रेन के नीचे लेट जाएंगे, कोई जहर पी लेंगे! उन एक हजार लोगों की जिंदगी कैसी होगी जो हर घंटे मरने को तैयार हो जाते हैं?

और आप यह मत सोचना कि जो नहीं मरते हैं वे बहुत सुखमय हैं। कुल जमा कारण यह है कि वे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। सुख-दुख का कोई भी सवाल नहीं है। कावर्ड्स हैं, कायर हैं, मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं, तो जीए चले जाते हैं, धक्के खाए चले जाते हैं और जीए चले जाते हैं। सोचते हैं, आज गलत है, तो कल सब ठीक हो जाएगा, परसों सब ठीक हो जाएगा। लेकिन मस्तिष्क उनके रुग्ण होते चले जाते हैं।

प्रेम के अतिरिक्त कोई आदमी कभी स्वस्थ नहीं हो सकता। प्रेम जीवन में न हो तो मस्तिष्क होगा रुग्ण, चिंता से भरेगा, तनाव से भरेगा। आदमी शराब पीएगा, नशे करेगा, कहीं जाकर अपने को भूल जाना चाहेगा कि यह सब मैं भूल जाऊं। दुनिया में बढ़ती हुई शराब शराबियों के कारण नहीं है। परिवार उस हालत में ला दिया है लोगों को कि बिना बेहोश हुए थोड़ी देर के लिए भी राहत मिलना मुश्किल हो गई है। तो लोग शराब पीते चले जाएंगे, लोग बेहोश पड़े रहेंगे, लोग हत्या करेंगे, लोग पागल हो जाएंगे।

अमेरिका में प्रतिदिन तीस लाख आदमी अपना मानसिक इलाज करवा रहे हैं। और ये सरकारी आंकड़े हैं! और आप भलीभांति जानते हैं, सरकारी आंकड़े कभी भी सही नहीं होते। तीस लाख सरकार कहती है, तो कितने लोग इलाज करा रहे होंगे, यह कहना मुश्किल है। और जो अमेरिका की हालत है, वह सारी दुनिया की हालत है। आधुनिक युग के मनसविद यह कहते हैं कि करीब-करीब चार आदमियों में तीन आदमी एबनार्मल हो गए हैं। चार आदमियों में तीन आदमी रुग्ण हो गए हैं, स्वस्थ नहीं हैं।

तो जिस समाज में चार आदमियों में तीन आदमी मानसिक रूप से रुग्ण हो जाते हों, उस समाज की फाउंडेशंस को, उसकी बुनियादों को फिर से सोच लेना जरूरी है। नहीं तो कल चार आदमी ही रुग्ण हो जाएंगे और फिर सोचने वाले भी शेष नहीं रह जाएंगे। फिर बहुत मुश्किल हो जाएगी।

लेकिन होता ऐसा है कि जब एक ही बीमारी से सारे लोग ग्रसित होते हैं, तो उस बीमारी का पता नहीं चलता है। हम सब एक से रुग्ण, बीमार, परेशान, झूठी मुस्कुराहट से भरे हुए, तो हमें बिलकुल पता नहीं चलता। सभी ऐसे हैं, इसलिए एट ईज मालूम पड़ते हैं। जब सभी ऐसे हैं, तो ठीक है, ऐसे ही दुनिया चलती है, यही जीवन है। और जब इतनी पीड़ा दिखाई पड़ती है तो हम ऋषि-मुनियों के वचन दोहराते हैं कि वह तो ऋषि-मुनियों ने पहले ही कह दिया है कि जीवन दुख है।

यह जीवन दुख नहीं है, यह दुख हम बनाए हुए हैं।

वह तो पहले ही ऋषि-मुनियों ने कह दिया है कि जीवन तो असार है, इससे छुटकारा पाना चाहिए।

जीवन असार नहीं है, यह असार हमने बनाया हुआ है। और जीवन से छुटकारा पाने की बातें सब दो कौड़ी की हैं। क्योंकि जो आदमी जीवन से छुटकारा पाने की कोशिश करता है, वह प्रभु को कभी उपलब्ध नहीं हो सकता। क्योंकि जीवन प्रभु है, जीवन परमात्मा है। जीवन में परमात्मा ही तो प्रकट हो रहा है। उससे जो भागेगा दूर, वह परमात्मा से ही दूर चला जाएगा।

लेकिन जब एक ही बीमारी पकड़ती है, पता नहीं चलता।

एक गांव में ऐसा हुआ, एक जादूगर आया और उसने एक कुएं में एक पुड़िया डाल दी। और कहा कि इस कुएं का जो भी पानी पीएगा वह पागल हो जाएगा। उस गांव में दो ही कुएं थे। एक गांव का कुआं था और एक राजा के महल का कुआं था। शाम तक गांव के लोगों को पानी पीना पड़ा, वे सब पागल हो गए। सिर्फ राजा, उसकी रानी, उसके वजीर पागल नहीं हुए, क्योंकि उनका अपना अलग कुआं था। वजीर बहुत खुश थे, रानी बहुत नाचती थी, राजा बहुत प्रसन्न था कि हम बच गए, हमारा अलग कुआं है।

लेकिन सांझ होते-होते उन्हें पता चला कि बच कर बड़ी भूल हो गई। सारी राजधानी के लोगों ने महल घेर लिया। और वे चिल्लाने लगे कि राजा पागल हो गया! राजा को निकाल बाहर करो! गांव भर पागल हो गया था, उसको राजा पागल मालूम पड़ने लगा।

राजा बहुत घबड़ाया, उसने अपने वजीर को कहा, अब क्या होगा? उसके सिपाही भी पागल हो गए, उसके सैनिक भी पागल हो गए। उसके पहरेदार भी चिल्ला रहे हैं कि राजा पागल हो गया, इसको निकाल बाहर करो! हमको स्वस्थ राजा चाहिए।

वजीर ने कहा, अब एक ही रास्ता है कि हम जल्दी से भागें और पीछे के रास्ते से जाकर उस कुएं का पानी पी लें जिसका इन सब लोगों ने पानी पीया है।

राजा भागा और जाकर उस कुएं का पानी पी लिया।

उस रात उस गांव में बड़ा जलसा मनाया गया, एक शोभायात्रा निकली। सारे गांव के लोग आनंद से नाचने लगे कि राजा का दिमाग ठीक हो गया। वह राजा भी पागल हो गया था तो उनको पता चला कि इसका दिमाग ठीक हो गया।

जब एक सी बीमारी पकड़ती है तो किसी को पता नहीं चलता।

पूरी आदमियत जड़ से रुग्ण है, इसलिए पता नहीं चलता। फिर हम दूसरी तरकीबें खोजते हैं इलाज की। कॉजेलिटी जो है, बुनियादी कारण जो है, उसको सोचते नहीं; ऊपरी इलाज सोचते हैं। ऊपरी इलाज हम क्या सोचते हैं? एक आदमी शराब पीने लगता है जीवन से घबरा कर। एक आदमी जाकर नृत्य देखने लगता है, वेश्या के घर बैठ जाता है जीवन से घबरा कर। दूसरा आदमी सिनेमा में बैठ जाता है। तीसरा आदमी इलेक्शन लड़ने लगता है, ताकि भूल जाए सब। इस उपद्रव में लग जाए तो भूल जाए सब। चौथा आदमी जाकर मंदिर में बैठ कर भजन-कीर्तन करने लगता है। यह भजन-कीर्तन करने वाला भी खुद के जीवन को भूलने की कोशिश कर रहा है। यह कोई परमात्मा को पाने का रास्ता नहीं है।

परमात्मा तो जीवन में प्रवेश से उपलब्ध होता है, जीवन से भागने से नहीं। ये सब एस्केप हैं--कि एक आदमी मंदिर में भजन-कीर्तन कर रहा है, हिल-डुल रहा है। हम कह रहे हैं, भक्त जी बहुत आनंदित हो रहे हैं। भक्त जी आनंदित नहीं हो रहे हैं, भक्त जी किसी दुख से भागे हुए हैं, उसको भुलाने की कोशिश कर रहे हैं। शराब का ही यह दूसरा रूप है। यह स्प्रिचुअल इंटाक्सिकेशन है, यह अध्यात्म के नाम से नई शराबें हैं, जो सारी दुनिया में चलती हैं। इन लोगों ने जीवन से भाग-भाग कर जिंदगी को बदला नहीं है आज तक; जिंदगी वैसी की वैसी दुख से भरी हुई है। और जब भी कोई दुखी हो जाता है, वह भी इनके पीछे चला जाता है कि हमको भी गुरुमंत्र दे दें, हमारा कान भी फूंक दें कि हम भी इसी तरह सुखी हो जाएं जैसे आप हो गए हो! लेकिन यह जिंदगी क्यों दुख पैदा कर रही है, इसको देखने के लिए, इसके विज्ञान को खोजने के लिए कोई भी जाता नहीं है।

मेरी दृष्टि में, जहां से शुरुआत होती है जीवन की, वहीं कुछ गड़बड़ हो गई है। और वह गड़बड़ यह हो गई है कि हमने मनुष्य-जाति को प्रेम की जगह विवाह से थोप दिया है। फिर विवाह होगा और ये सारे रूप पैदा होंगे। और जब दो व्यक्ति एक-दूसरे से बंध जाते हैं और उनके जीवन में कोई शांति और तृप्ति नहीं मिलती, तो वे दोनों एक-दूसरे पर क्रुद्ध हो जाते हैं--कि तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल पा रही है! और वह कहता है, तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल पा रही है! वे एक-दूसरे को सताना शुरू करते हैं, परेशान करना शुरू करते हैं, हैरान करना शुरू करते हैं। और इसी हैरानी, इसी परेशानी, इसी कलह, इसी एंग्जाइटी के बीच बच्चों का जन्म होता है। ये बच्चे पैदाइश से ही परवर्टेड हो जाते हैं, विकृत हो जाते हैं।

मेरी समझ में, मेरी दृष्टि में, किसी दिन जब मनुष्य-जाति आदमी के पूरे विज्ञान पर...आदमी की तो पूरी साइंस भी खड़ी नहीं हो सकी है कि आदमी कैसा स्वस्थ और शांत हो! भजन-कीर्तन के विज्ञान विज्ञान नहीं हैं। जिस दिन आदमी पूरी तरह आदमी के विज्ञान को विकसित करेगा, तो शायद आपको पता लगे कि दुनिया में बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट जैसे लोग शायद इसीलिए पैदा हो सके कि उनके मां-बाप ने जिस क्षण में संभोग किया था, उनके मां-बाप अपूर्व प्रेम से संयुक्त हुए थे। वह प्रेम के क्षण में कंसेप्शन हुआ था। यह किसी दिन, जिस दिन जनन-विज्ञान पूरा विकसित होगा, उस दिन शायद यह हमको पता चलेगा कि जो दुनिया में थोड़े से अदभुत लोग हुए हैं--शांत, आनंदित, प्रभु को उपलब्ध--वे वे ही लोग हैं, जिनका पहला अणु प्रेम की दीक्षा से उत्पन्न हुआ था, जिनका पहला जीवन-अणु प्रेम में सराबोर पैदा हुआ था।

पति और पत्नी कलह से भरे हुए हैं--क्रोध से,र् ईष्या से, एक-दूसरे के प्रति संघर्ष से, अहंकार से। एक-दूसरे की छाती पर चढ़े हुए पज़ेस कर रहे हैं, एक-दूसरे के मालिक बनना चाह रहे हैं, एक-दूसरे को डॉमिनेट करना चाह रहे हैं। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे हैं। ये बच्चे किसी आध्यात्मिक जन्म में कैसे प्रवेश कर पाएंगे?

मैंने सुना है, एक घर में एक मां अपने छोटे बेटे और अपनी छोटी बेटी को--वे दोनों बेटे और बेटी बाहर मैदान में लड़ रहे थे, एक-दूसरे पर घूंसेबाजी कर रहे थे--उस मां ने उनसे कहा कि अरे, यह क्या करते हो? कितनी बार मैंने समझाया कि लड़ा मत करो, आपस में लड़ो मत!

उस लड़की ने कहा, मम्मी, वी आर नाट फाइटिंग, वी आर प्लेइंग मम्मी एंड डैडी। हम लड़ नहीं रहे हैं, हम तो मम्मी-डैडी का खेल कर रहे हैं। हम लड़ नहीं रहे हैं, हम तो मम्मी-डैडी का खेल दोहरा रहे हैं। जो घर में रोज हो रहा है, वह हम दोहरा रहे हैं।

यह खेल जन्म के क्षण से शुरु हो जाता है। इस संबंध में दो-चार बातें समझ लेनी बहुत जरूरी हैं।

पहली बात: मेरी दृष्टि में, जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम के आधार पर मिलते हैं--उनका संभोग होता, उनका मिलन होता--तो उस परिपूर्ण प्रेम के तल पर उनके शरीर ही नहीं मिलते हैं, उनका मनस भी मिलता है, उनकी आत्मा भी मिलती है। वे एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते हैं, वे दोनों विलीन हो जाते हैं और शायद परमात्मा ही शेष रह जाता है उस क्षण में। और उस क्षण जिस बच्चे का गर्भाधान होता है, वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है, क्योंकि प्रेम के क्षण का पहला कदम उसके जीवन में उठा लिया गया।

लेकिन जो मां-बाप, जो पति और पत्नी आपस में द्वेष से भरे हैं, घृणा से भरे हैं, क्रोध से भरे हैं, कलह से भरे हैं, वे भी मिलते हैं, लेकिन उनके शरीर ही मिलते हैं, उनकी आत्मा और प्राण नहीं मिलते। और उनके शरीर के ऊपरी मिलन से जो बच्चे पैदा होते हैं, वे अगर मैटीरियलिस्ट पैदा होते हों, शरीरवादी पैदा होते हों, सेक्सुअल पैदा होते हों, बीमार और रुग्ण पैदा होते हों, उनके जीवन में अगर कोई आत्मा की प्यास पैदा न होती हो, तो दोष मत देना उन बच्चों पर। बहुत दिया जा चुका यह दोष। दोष देना उन मां-बाप पर, जिनकी छवि लेकर वे जन्मते हैं, और जिनके सब अपराध और जिनकी सब बीमारियां लेकर जन्मते हैं, और जिनका सब क्रोध और घृणा लेकर जन्मते हैं। जन्म के साथ ही उनका पौधा विकृत हो जाता है, परवर्शन शुरु हो जाता है। फिर इनको पिलाओ गीता, इनको समझाओ कुरान, इनसे कहो कि प्रार्थना करो, सब झूठी हो जाती हैं! क्योंकि प्रेम का बीज ही शुरु नहीं हो सका तो प्रार्थना कैसे शुरु हो सकती है?

जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम और आनंद में मिलते हैं, तो वह मिलन एक स्प्रिचुअल एक्ट हो जाता है, एक आध्यात्मिक कृत्य हो जाता है। फिर उसका सेक्स से कोई संबंध नहीं है। वह मिलन फिर कामुक नहीं है, वह मिलन शारीरिक नहीं है। वह मिलन इतना अनूठा है, वह उतना ही महत्वपूर्ण है, जितनी किसी योगी की समाधि। उतना ही महत्वपूर्ण है वह मिलन, जब दो आत्माएं परिपूर्ण प्रेम से संयुक्त होती हैं। और उतना ही पवित्र है वह कृत्य, क्योंकि परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्म देता है और जीवन को गति देता है।

लेकिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने, तथाकथित झूठे समाज ने, तथाकथित झूठे परिवार ने अब तक यही समझाने की कोशिश की है कि सेक्स, काम, यौन अपवित्र है, घृणित है।

हद्द पागलपन की बातें हैं! अगर यौन घृणित है और अपवित्र है, तो सारा जीवन अपवित्र हो गया और घृणित हो गया। अगर सेक्स पाप है, तो सारा जीवन पाप हो गया, पूरा जीवन कंडेम्ड हो गया। और अगर जीवन ही पूरा कंडेम्ड हो जाएगा, तो कैसे प्रसन्न लोग उपलब्ध होंगे? कैसे प्रेम करने वाले लोग उपलब्ध होंगे? कैसे सच्चे लोग उपलब्ध होंगे? जब जीवन ही पूरा का पूरा पाप है, तो सारी रात अंधेरी हो गई। अब इसमें प्रकाश की किरण कहां से लानी पड़ेगी?

तो मैं आपको कहना चाहता हूं, एक नये मनुष्यता के जन्म के लिए सेक्स की पवित्रता, सेक्स की धार्मिकता स्वीकार करनी अत्यंत आवश्यक है; क्योंकि जीवन उससे जन्मता है, परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्माता है। और परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरुआत बनाया है, वह पाप नहीं हो सकता!

लेकिन आदमी ने उसे पाप कर दिया है। जो चीज प्रेम से रहित है वह पाप हो जाती है; जो चीज प्रेम से शून्य है वह पाप हो जाती है। आदमी की जिंदगी में प्रेम नहीं रहा, इसलिए सिर्फ सेक्सुअलिटी रह गई, सिर्फ यौन रह गया। वह यौन पाप हो गया है। वह यौन का पाप नहीं है, वह हमारे प्रेम के अभाव का पाप है। और उस पाप से सारा जीवन शुरू होता है। फिर ये बच्चे पैदा होते हैं, फिर ये बच्चे जन्मते हैं।

और स्मरण रहे, जो पत्नी अपने पति को प्रेम की है, उसके लिए पति परमात्मा हो जाता है। शास्त्रों के समझाने से नहीं होती यह बात। जो पति अपनी पत्नी को प्रेम किया है, उसके लिए पत्नी भी परमात्मा हो जाती है। क्योंकि प्रेम किसी को भी परमात्मा बना देता है। जिसकी तरफ मेरी आंखें प्रेम से उठती हैं, वही परमात्मा हो जाता है। परमात्मा का कोई और अर्थ नहीं है।

प्रेम की आंख सारे जगत में धीरे-धीरे परमात्मा को देखने लगती है।

लेकिन जो एक में ही नहीं देख पाता वह सारे जगत में देखने की बातें करता हो, तो वे बातें झूठी हैं, उन बातों का कोई आधार और अर्थ नहीं है।

रामानुज एक गांव में गए थे। और उस गांव में एक युवक उनके पास आया और कहने लगा, मुझे परमात्मा को पाना है।

रामानुज ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा और कहा, तूने कभी प्रेम किया है?

वह युवक कहने लगा, प्रेम! ऐसी सांसारिक बातों से मैं हमेशा दूर रहा हूं। मैंने कभी कोई प्रेम नहीं किया। मुझे तो परमात्मा को पाना है।

रामानुज ने कहा, थोड़ा सोच कर देख! कभी किसी को प्रेम किया हो। किसी को भी!

उसने कहा, आप क्यों प्रेम की बातें कर रहे हैं? मैंने कभी किसी को प्रेम नहीं किया। मुझे तो परमात्मा को पाने का रास्ता बताइए।

रामानुज की आंखों में आंसू आ गए और उन्होंने कहा, मेरे बेटे, तू किसी और के पास जा, मैं तुझे परमात्मा का रास्ता न बता सकूंगा। क्योंकि जिसने कभी एक को भी प्रेम नहीं किया, उसके जीवन में परमात्मा की कोई शुरुआत ही नहीं हो सकती। क्योंकि प्रेम के ही क्षण में पहली दफा कोई व्यक्ति परमात्मा हो जाता है; वह पहली झलक है प्रभु की। फिर उसी झलक को आदमी बढ़ाता है, बढ़ाता है, बढ़ाता है। एक दिन वह झलक पूरी हो जाती है, सारा जगत उसी रूप में रूपांतरित हो जाता है। लेकिन जिसने पानी की बूंद नहीं देखी, वह कहता है, मुझे सागर चाहिए! वह कहता है, पानी की बूंद से मुझको कोई मतलब नहीं। पानी की बूंद का मैं क्या करूंगा? मुझे तो सागर चाहिए! उससे हम कहेंगे कि तूने पानी की बूंद भी नहीं देखी, पानी की बूंद भी नहीं पा सका और सागर पाने चल पड़ा है, तो तू पागल है। क्योंकि सागर क्या है? पानी की अनंत बूंदों का जोड़ है। परमात्मा क्या है? प्रेम की अनंत बूंदों का जोड़ है। तो प्रेम की एक बूंद अगर निंदित है तो हो गया पूरा परमात्मा निंदित। फिर हमारे झूठे परमात्मा खड़े होंगे, मूर्तियां खड़ी होंगी, पूजा-पाठ होगा, सब बकवास होगी; लेकिन हमारे प्राणों का कोई अंतर्संबंध उससे नहीं हो सकता है।

और यह भी ध्यान में रख लेना जरूरी है कि जब कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को प्रेम करती है, और प्रेम के कारण उससे बंधती है, समाज के कारण नहीं; उनका विवाह, उनका सहवास प्रेम से निकलता है, तो ही वह मां बन पाती है ठीक अर्थों में।

बच्चे पैदा कर लेने से कोई मां नहीं बनता। मां बनने का अर्थ बच्चे पैदा करना नहीं है। बच्चे पैदा कर लेने से कोई मां नहीं बन जाता। मां तो कोई तभी बनती है स्त्री और पिता तभी कोई पुरुष बनता है, जब उन्होंने एक-दूसरे को प्रेम किया हो। जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को, तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते हैं। वे रि-बर्थ हैं उसके प्रेमी की, वे फिर वही शक्लें हैं, फिर वही रुप है, फिर वही निर्दोष आंखें हैं; जो उसके पति में छिपा था, वह फिर प्रकट हुआ है। उसने अगर अपने पति को प्रेम किया है तो ही वह अपने बच्चों को प्रेम करती है।

बच्चों को किया गया प्रेम, पति को किए गए प्रेम की प्रतिध्वनि है। नहीं तो कोई बच्चों को प्रेम नहीं कर सकता। मां बच्चों को प्रेम नहीं कर सकती, जब तक उसने अपने पति को न चाहा हो पूरे प्राणों से। क्योंकि वे बच्चे उसके पति की प्रतिकृतियां हैं, वे उसकी प्रतिध्वनियां हैं, वे उसकी ईकोज हैं। यह पति ही फिर वापस लौट आया है, फिर वापस लौट आया है। यह नया जन्म है उसके पति का। यह पति फिर पवित्र और नया होकर वापस लौट आया है। लेकिन पति के प्रति अगर प्रेम ही नहीं है तो ये बच्चों के प्रति प्रेम कैसे होगा? ये बच्चे उपेक्षित होंगे।

बाप भी तभी कोई बनता है, जब वह अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है कि पत्नी में उसे परमात्मा दिखाई पड़ने लगता है। तब बच्चे फिर उसकी पत्नी का ही लौटता हुआ रुप हैं। पत्नी को जब उसने पहली दफे देखा था, तब वह जैसी निर्दोष थी, तब जैसी शांत थी, तब जैसी सुंदर थी, तब जैसी उसकी आंखें झील की तरह थीं, इन बच्चों में फिर वे आंखें वापस लौट आई हैं। इन बच्चों में फिर वही चेहरा वापस लौट आया है। ये बच्चे फिर उसी छवि को नया करके आ गए हैं। जैसे पिछले बसंत में फूल खिले थे, पिछले बसंत में पत्ते आए थे पौधों पर। फिर साल बीत गया। पुराने पत्ते गिर गए हैं। फिर नई कोंपलें निकल आई हैं। फिर नये पत्तों से वृक्ष भर गए हैं। फिर लौट आया बसंत। फिर सब नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसंत को ही प्रेम नहीं किया था, वह इस बसंत को कैसे प्रेम कर सकेगा?

जीवन निरंतर लौट रहा है। निरंतर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता चला जाता है, पुराने पत्ते गिर जाते हैं, नये आ जाते हैं। जीवन की यह सतत सृजनात्मकता, यह क्रिएटिविटी ही तो परमात्मा है, यही तो प्रभु है। जो इसको पहचानेगा, वही तो उसे पहचानेगा।

लेकिन न मां बच्चों को प्रेम कर पाती है, न पिता बच्चों को प्रेम कर पाता है। और जब मां और बाप बच्चों को प्रेम नहीं कर पाते, तो बच्चे जन्म से ही पागल होने के रास्ते पर संलग्न हो जाते हैं। उनको दूध मिलता है, कपड़े मिलते हैं, मकान मिलते हैं, लेकिन प्रेम नहीं मिलता। और प्रेम के बिना उनको परमात्मा नहीं मिल सकता, और सब मिल सकता है।

अभी रूस का एक वैज्ञानिक बंदरों के ऊपर कुछ प्रयोग करता था। उसने कुछ नकली बंदरियां बनाईं, झूठी मदर्स बनाईं--नकली, बिजली के यंत्र, हाथ-पैर उनके बिजली के, तारों का उनका ढांचा। जो बंदर पैदा हुए, उनको नकली माताओं के पास...तो वे नकली माताओं से चिपक गए। वे पहले दिन के बच्चे, उनको कुछ पता नहीं कि कौन असली है, कौन नकली है। वे नकली मां के पास ले गए उनको पैदा होते से ही। वे जाकर उसकी छाती से चिपक गए। नकली दूध है, वह दूध उनके मुंह में जा रहा है। वे पी लेते हैं दूध, वे चिपके रहते हैं। वह बंदरिया नकली है, वह हिलती रहती है। बच्चे समझते हैं कि मां हिल-हिल कर उनको झुला रही है। ऐसे बीस बंदर के बच्चों को नकली मां के पास पाला गया। उनको अच्छा दूध दिया गया। मां ने उनको पूरी तरह हिलाया-डुलाया। मां कूदती है, फांदती है, सब करती है। वे बच्चे स्वस्थ दिखाई पड़ते थे। फिर वे बड़े भी हो गए। लेकिन वे सब बंदर पागल निकले। वे सब पागल हो गए, वे सब एबनार्मल साबित हुए! उनको दूध मिला, उनका शरीर ठीक हो गया, सब ठीक था; लेकिन उनका विक्षिप्त व्यवहार हो गया!

वैज्ञानिक बड़े हैरान हुए कि इनको क्या हुआ? इनको सब तो मिला, फिर ये विक्षिप्त कैसे हो गए?

एक चीज जो वैज्ञानिक की लेबोरेटरी में नहीं पकड़ी जा सकती, वह उनको नहीं मिली--प्रेम उनको नहीं मिला।

और जो उन बीस बंदरों की हालत हुई, वह साढ़े तीन करोड़ मनुष्यों की हो रही है। झूठी मां मिलती है, झूठा बाप मिलता है। नकली मां हिलाती रहती है, नकली बाप हिलाता रहता है। और ये बच्चे विक्षिप्त हो जाते हैं। फिर इनको हम

कहते हैं कि ये शांत नहीं होते, ये अशांत होते चले जा रहे हैं। ये छुरेबाजी करते हैं, ये लड़कियों पर एसिड फेंकते हैं, ये कालेज में आग लगाते हैं, ये बस पर पत्थर फेंकते हैं, ये मास्टर को मारते हैं।

मारेंगे! मारे बिना इनका कोई रास्ता नहीं। अभी थोड़ा-थोड़ा मारते हैं, कल और ज्यादा मारेंगे। और तुम्हारे कोई शिक्षक, और तुम्हारे कोई नेता, और तुम्हारे कोई धर्मगुरु इनको नहीं समझा सकेंगे। क्योंकि यह सवाल समझाने का नहीं है, यह आत्मा रुग्ण पैदा हो रही है। यह रुग्ण आत्मा केऑस पैदा करेगी, यह चीजों को तोड़ेगी, फोड़ेगी, मिटाएगी। तीन हजार साल से जो चलती थी बात, वह अब क्लाइमेक्स पर पहुंच रही है।

सौ डिग्री तक हम पानी को गरम करते हैं, पानी भाप बन कर उड़ जाता है। निन्यानबे डिग्री तक नहीं उड़ता। निन्यानबे डिग्री तक पानी बना रहता है, फिर सौ डिग्री पर भाप बनने लगता है। सौ डिग्री पर पहुंच गया है आदमियत का पागलपन। अब वह भाप बन कर उड़ना शुरु हो रहा है। मत चिल्लाइए, मत परेशान होइए। बनने दीजिए भाप! और आप उपदेश देते रहिए और आपके साधु-संत समझाते रहें अच्छी-अच्छी बातें और गीता की टीकाएं करते रहें और कुरान पर प्रवचन करते रहें। करते रहो प्रवचन और टीकाएं गीता पर, और दोहराते रहो पुराने शब्दों को। यह भाप बननी बंद नहीं होगी। यह भाप बननी तब बंद होगी, जब जीवन की पूरी प्रक्रिया को हम समझेंगे कि कहीं कोई भूल हो रही है, कहीं कोई बुनियादी भूल हो रही है। और वह कोई आज की भूल नहीं है। चार हजार, पांच हजार साल की भूल है; क्लाइमेक्स पर पहुंच गई है, इसलिए मुश्किल खड़ी हुई जा रही है आज।

ये प्रेम से रिक्त बच्चे जन्मते हैं और प्रेम से रिक्त हवा में पाले जाते हैं। फिर यही नाटक ये दोहराएंगे--दे विल प्ले मम्मी एंड डैडी। वे फिर बड़े हो जाएंगे, फिर वे यही नाटक दोहराएंगे। वे भी विवाह में बांधे जाएंगे; क्योंकि समाज प्रेम को आज्ञा नहीं देता। न मां पसंद करती है कि उसकी लड़की किसी को प्रेम करे। न बाप पसंद करता है कि उसका बेटा किसी को प्रेम करे। न समाज पसंद करता है कि कोई किसी को प्रेम करे। प्रेम तो होना ही नहीं चाहिए। प्रेम तो पाप है। प्रेम तो होना ही नहीं चाहिए। वह तो बिलकुल ही बात योग्य नहीं है। विवाह होना चाहिए। फिर प्रेम नहीं होगा; फिर विवाह होगा। फिर वही पहिया पूरा का पूरा घूम जाएगा।

आप कहेंगे कि जहां प्रेम होता है, वहां भी कोई बहुत अच्छी हालत तो नहीं मालूम होती।

नहीं मालूम होगी! क्योंकि प्रेम, जिस भांति आप देते हैं मौका, प्रेम एक चोरी की तरह होता है, प्रेम एक सीक्रेसी की तरह होता है, प्रेम एक अपराध की तरह होता है। प्रेम करने वाले डरते हुए प्रेम करते हैं, घबराए हुए प्रेम करते हैं, चोर की तरह प्रेम करते हैं, अपराधी की तरह प्रेम करते हैं। और सारा समाज उनके विरोध में है, सारे समाज की आंख उन पर लगी हुई है। सारे समाज के विद्रोह में वे प्रेम करते हैं। यह प्रेम भी स्वस्थ नहीं है। प्रेम के लिए स्वस्थ हवा नहीं है। इसके परिणाम भी अच्छे नहीं हो सकते।

प्रेम के लिए समाज को हवा पैदा करनी चाहिए, मौका पैदा करना चाहिए, अवसर पैदा करना चाहिए। प्रेम की शिक्षा दी जानी चाहिए, प्रेम की दीक्षा दी जानी चाहिए। प्रेम की तरफ बच्चों को विकसित किया जाना चाहिए। क्योंकि वही उनके जीवन का आधार बनेगा, वही उनके पूरे जीवन का केंद्र बनेगा, उसी केंद्र से उनका जीवन विकसित होगा। उसकी कोई बात नहीं, उससे हम दूर खड़े रहते हैं, आंख बंद किए खड़े रहते हैं। न मां बच्चों से प्रेम की बात करती है, न बाप। न कोई उन्हें सिखाता है कि प्रेम जीवन का आधार है। न उन्हें कोई निर्भय बनाता है कि तुम प्रेम के जगत में निर्भय होना। न कोई उनसे कहता है कि जब तक तुम्हारा किसी से प्रेम न हो, तब तक तुम विवाह मत करना। क्योंकि वह विवाह गलत होगा, झूठा होगा, पाप होगा। वह सारी कुरुपता की जड़ होगा और सारी मनुष्यता को पागल करने का कारण होगा।

तो एक बात आपसे कहना चाहता हूं: अगर मनुष्य-जाति को परमात्मा के निकट लाना है तो पहला काम--परमात्मा की बात मत करिए, मनुष्य-जाति को प्रेम के निकट ले आइए।

जरूर जोखिम के काम हैं। न मालूम कितने खतरे हो सकते हैं। समाज की बनी-बनाई व्यवस्था में न मालूम कितने परिवर्तन करने पड़ सकते हैं। लेकिन मत करिए परिवर्तन, तो यह समाज अपने ही हाथ मौत के किनारे पहुंच गया है, यह मर जाएगा। यह बच नहीं सकता। प्रेम से रिक्त लोग ही युद्धों को पैदा करते हैं। प्रेम से रिक्त लोग ही अपराधी बनते हैं। प्रेम से रिक्तता ही क्रिमिनलिटी की जड़ है और सारी दुनिया में अपराधी फैलते चले जाते हैं।

जैसा मैंने आपसे कहा, जैसे मैंने यह कहा कि अगर किसी दिन जनन-विज्ञान पूरा विकसित होगा, तो हम शायद पता लगा पाएं कि कृष्ण का जन्म किन स्थितियों में हुआ। किस हार्मनी में कृष्ण के मां-बाप ने, किस प्रेम के क्षण में कंसेप्शन लिया इस बच्चे को। किस प्रेम के क्षण में यह बच्चा अवतरित हुआ। तो शायद हमें दूसरी तरफ यह भी पता चल जाए कि हिटलर किस अप्रेम के क्षण में पैदा हुआ होगा। मुसोलिनी किस क्षण में पैदा हुआ होगा। तैमूरलंग, चंगीज खां किस अवसर पर पैदा हुए होंगे।

हो सकता है यह पता चले कि चंगीज खां दो संघर्ष, घृणा और क्रोध से भरे मां-बाप से पैदा हुआ हो। जिंदगी भर फिर वह क्रोध से भरा हुआ है। वह जो ओरिजिनल मोमेंटम है क्रोध का, वह उसको जिंदगी भर दौड़ाए चला जा रहा है। चंगीज खां जिस गांव में गया, लाखों लोगों को कटवा दिया।

तैमूरलंग जिस राजधानी में गया, दस-दस हजार बच्चों की गर्दनें कटवा देता, भालों में छिदवा देता। जुलूस निकलता तो दस हजार बच्चों की गर्दनें लटकी हुई हैं भालों के ऊपर, पीछे तैमूरलंग जा रहा है। लोग पूछते, यह तुम क्या करते हो? तो तैमूरलंग कहता, ताकि लोग याद रखें कि तैमूर कभी इस नगरी में आया था। इस पागल को याद रखवाने की और कोई बात समझ नहीं पड़ती थी!

हिटलर ने जर्मनी में साठ लाख यहूदियों की हत्या की! पांच सौ यहूदी रोज मारता रहा, रोज मारता रहा! स्टैलिन ने रूस में साठ लाख लोगों की हत्या की!

जरूर इनके जन्म के साथ कोई गड़बड़ हो गई। जरूर ये जन्म के साथ ही पागल पैदा हुए। न्यूरोसिस इनके जन्म के साथ इनके खून में आई और फिर वह इनको फैलाती चली गई। और पागलों में बड़ी ताकत होती है! और पागल कब्जा कर लेते हैं, और पागल दौड़ कर हावी हो जाते हैं--धन पर, पद पर, यश पर, और सारी दुनिया को विकृत करते हैं। पागल ताकतवर होता है।

यह जो पागलों ने दुनिया बनाई है, यह दुनिया तीसरे महायुद्ध के करीब आ गई है। सारी दुनिया मरेगी। पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोगों की हत्या की गई, दूसरे महायुद्ध में साढ़े सात करोड़ लोगों की हत्या की गई, अब तीसरे में कितनी की जाएगी?

मैंने सुना है, आइंस्टीन जब मर कर भगवान के घर पहुंच गया तो भगवान ने आइंस्टीन से पूछा कि मैं बहुत घबराया हुआ हूं, तीसरे महायुद्ध के संबंध में कुछ बताओ? क्या होगा? आइंस्टीन ने कहा, तीसरे के बाबत कहना मुश्किल है, मैं चौथे के संबंध में कुछ जरूर बता सकता हूं। भगवान ने कहा, तीसरे के बाबत नहीं बता सकते तो चौथे के बाबत कैसे बताओगे? आइंस्टीन ने कहा, एक बात बता सकता हूं चौथे के बाबत, कि चौथा महायुद्ध कभी नहीं होगा; क्योंकि तीसरे में सब आदमी समाप्त हो जाएंगे। चौथे के होने की कोई संभावना नहीं है। और तीसरे के बाबत कुछ भी कहना मुश्किल है। साढ़े तीन अरब पागल आदमी क्या करेंगे तीसरे महायुद्ध में, कुछ नहीं कहा जा सकता कि क्या स्थिति होगी!

प्रेम से वियुक्त मनुष्य एकमात्र दुर्घटना है। तो मैं अंत में यह बात निवेदन करना चाहता हूं। मेरी बातें बड़ी अजीब लगी होंगी; क्योंकि ऋषि-मुनि इस तरह की बातें करते ही नहीं। मेरी बात बहुत अजीब लगी होगी। क्योंकि आपने सोचा होगा कि मैं भजन-कीर्तन का कोई नुस्खा बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई माला फेरने की तरकीब बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई आपको ताबीज दे दूंगा, जिसको बांध कर आप परमात्मा से मिल जाएं। ऐसी कोई बात मैं आपको नहीं बता सकता हूं। ऐसे बताने वाले सब बेईमान, धोखेबाज हैं। समाज को उन्हीं ने बर्बाद किया है।

समाज की जिंदगी को समझने के लिए उसके मनुष्य के पूरे विज्ञान को समझना जरूरी है। परिवार को, दंपति को, समाज को, उसकी पूरी व्यवस्था को समझना जरूरी है कि कहां क्या गड़बड़ हो रहा है। वह गड़बड़ के बाबत एक ही बात मैंने आपसे कही, जान कर मैंने कही, क्योंकि यह स्त्रियों की सभा थी; जान कर मैंने यह कही, क्योंकि स्त्रियां परिवार का, समाज का केंद्र हैं। उनके हाथ में बड़ी ताकत है। उनके हाथ में पूरी जिंदगी है। वे पत्नियां भी हैं, वे मां भी हैं, वे बहन भी हैं। एक बहुत बड़े घेरे पर उनके प्रेम का प्रभाव पड़ेगा। अगर सारी दुनिया की स्त्रियां यह तय कर लें कि हम पृथ्वी को एक प्रेम का घर बनाएंगे, झूठे विवाह का नहीं--हां, प्रेम से विवाह निकले, वह सच्चा विवाह होगा--हम सारी दुनिया को प्रेम का एक घर बनाएंगे। कितनी ही कठिनाई होगी, मुश्किलें होंगी, अव्यवस्था होगी, उसको सम्हालने का हम कोई उपाय खोजेंगे, विचार करेंगे। लेकिन दुनिया से हम, यह अप्रेम का जो जाल है, इसको तोड़ देंगे और प्रेम की एक दुनिया बनाएंगे, तो शायद पूरी मनुष्य-जाति बच सकती है और स्वस्थ हो सकती है।

और मैं आपको यह कहता हूं कि अगर सारे जगत में प्रेम के केंद्र पर परिवार बन जाए, तो सुपरमैन की जो कल्पना हजारों वर्षों से रही है आदमी को, महामानव की--वह नीत्शे कल्पना करता है और अरविंद कल्पना करते हैं--वह कल्पना पूरी हो सकती है। लेकिन न तो अरविंद की प्रार्थनाओं से और न नीत्शे के द्वारा पैदा किए गए फासिज्म से। वह सपना पूरा हो सकता है, अगर पृथ्वी पर हम प्रेम की प्रतिष्ठा को वापस लौटा लाएं, अगर प्रेम जीवन में वापस लौट आए, सम्मानित हो जाए, आदर से भर जाए। अगर प्रेम एक आध्यात्मिक मूल्य ले ले, तो नये मनुष्य का निर्माण हो सकता है--नई संतति का, नई पीढ़ियों का, नये आदमी का। और वह आदमी, वह बच्चा, वह भ्रूण, जिसका पहला अणु प्रेम से जन्मेगा, विश्वास किया जा सकता है, आश्वासन किया जा सकता है कि उसकी अंतिम श्वास परमात्मा में निकलेगी। प्रेम है प्रारंभ। परमात्मा है अंत। वह अंतिम सीढ़ी है।

जो प्रेम को ही नहीं पाता है, वह परमात्मा को तो पा ही नहीं सकता। यह इंपासिबिलिटी है, यह असंभावना है। लेकिन जो प्रेम में दीक्षित हो जाता है और प्रेम में विकसित होता है और प्रेम की श्वासों में पलता है और प्रेम के फूल जिसकी श्वास-श्वास बन जाते हैं और प्रेम जिसका अणु-अणु बन जाता है और जो प्रेम में बढ़ता जाता है, बढ़ता जाता है, एक दिन वह पाता है कि प्रेम की जिस गंगा में चला था, वह गंगा अब किनारे छोड़ रही है और सागर बन रही है। एक दिन वह पाता है कि गंगा के किनारे मिटते जाते हैं और अनंत सागर आ गया सामने। छोटी सी गंगा की धार थी गंगोत्री में--बड़ी छोटी सी प्रेम की धार होती है शुरू में--फिर वह बढ़ती है, फिर वह बड़ी होती है, फिर वह पहाड़ों और मैदानों को पार करती है, फिर एक वक्त आता है कि किनारे छूटने लगते हैं। जिस दिन प्रेम के किनारे छूट जाते हैं, उसी दिन प्रेम परमात्मा बन जाता है। जब तक प्रेम के किनारे होते हैं, तब तक वह परमात्मा नहीं होता। गंगा नदी होती है, जब तक कि वह इस जमीन के किनारों से बंधी होती है। फिर किनारे छूटते हैं और सागर से मिल जाती है। फिर वह परमात्मा से मिल जाती है। प्रेम की सरिता और परमात्मा का सागर है।

लेकिन हम प्रेम की सरिता ही नहीं हैं, हम प्रेम की नदियां ही नहीं हैं। और हम बैठे हैं हाथ-पैर जोड़े और प्रार्थना कर रहे हैं कि हमको भगवान चाहिए। जो सरिता नहीं है, वह सागर को कैसे पाएगा?

सारी मनुष्य-जाति के लिए एक पूरा आंदोलन चाहिए। पूरी मनुष्य-जाति के आमूल परिवर्तन की जरूरत है। पूरा परिवार बदलने की जरूरत है। बहुत कुरूप है हमारा परिवार। वह बहुत सुंदर हो सकता है, लेकिन प्रेम के केंद्र पर। पूरे समाज को बदलने की जरूरत है। और तब एक धार्मिक मनुष्यता जरूर पैदा हो सकती है। प्रेम प्रथम, परमात्मा अंतिम।

और क्यों प्रेम परमात्मा पर पहुंच जाता है? क्योंकि प्रेम है बीज और परमात्मा है वृक्ष। प्रेम का बीज ही फिर फूटता है और वृक्ष बन जाता है।

सारी दुनिया की स्त्रियों से मेरा कहने का यह मन होता है--और खासकर स्त्रियों से--क्योंकि पुरुष के लिए प्रेम और बहुत सी जीवन की दिशाओं में एक दिशा है। स्त्री के लिए प्रेम अकेली दिशा है। पुरुष के लिए प्रेम और बहुत से जीवन

आयामों में एक आयाम है, एक डायमेंशन है। उसके और डायमेंशन भी हैं व्यक्तित्व के। लेकिन स्त्री का एक ही डायमेंशन है, एक ही दिशा है--वह प्रेम है। स्त्री पूरी प्रेम है। पुरुष प्रेम भी है, और दूसरी चीजें भी है।

तो अगर स्त्री का प्रेम विकसित हो और वह समझे प्रेम की कीमिया, प्रेम की केमिस्ट्री, और बच्चों को दीक्षा दे प्रेम की शिक्षा में और प्रेम के आकाश में उठने के लिए उनके पंखों को मजबूत करे...। अभी तो हम काट देते हैं पंख--जमीन पर सरको विवाह की, प्रेम के आकाश में मत उड़ना!

जरूर आकाश में उड़ना जोखिम का होता है, जमीन पर चलना जोखिम का नहीं होता। लेकिन जो जोखिम नहीं उठाते हैं, वे जमीन पर रेंगने वाले कीड़े हो जाते हैं। और जो जोखिम उठाते हैं, वे दूर अनंत आकाश में उड़ने वाले बाज पक्षी सिद्ध होते हैं। आदमी रेंगता हुआ कीड़ा हो गया है। कोई भी जोखिम मत उठाना, कोई रिस्क नहीं, कोई डेंजर नहीं, कोई खतरा मत उठाना। अपने घर का दरवाजा बंद करो और जमीन पर सरको। आकाश में मत उड़ना।

प्रेम की जोखिम सिखाएं, प्रेम का खतरा सिखाएं, प्रेम का अभय सिखाएं और प्रेम के आकाश में उड़ने के लिए उनके पंखों को मजबूत करें छोटे बच्चों के। और चारों तरफ जहां भी प्रेम पर हमला होता हो, उसके खिलाफ खड़े हो जाएं। प्रेम को मजबूत करें, ताकत दें।

प्रेम के जितने दुश्मन खड़े हैं दुनिया में--नीतिशास्त्री खड़े हुए हैं। थोथे हैं वे नीतिशास्त्री, क्योंकि प्रेम के विरोध में जो हो वह क्या नीतिशास्त्री होगा? साधु-संन्यासी खड़े हैं। क्योंकि वे कहते हैं, यह सब पाप है, यह सब बंधन है। इसको छोड़ो, परमात्मा की तरफ चलो।

जो आदमी कहता है कि प्रेम को छोड़ कर परमात्मा की तरफ चलो, वह परमात्मा का शत्रु है, क्योंकि प्रेम के अतिरिक्त परमात्मा तक जाने का कोई रास्ता ही नहीं है।

बड़े-बूढ़े खड़े हैं, उनका अनुभव कहता है कि प्रेम खतरा है।

अनुभवी लोगों से जरा सावधान रहना, क्योंकि जिंदगी में कभी कोई नया रास्ता वे नहीं बनने देते हैं। वे कहते हैं, पुराने रास्ते का हमें अनुभव है, हम पुराने रास्ते पर चले हैं, उसी पर सबको चलना चाहिए।

लेकिन जिंदगी को रोज नया रास्ता चाहिए। जिंदगी कोई रेल की पटरियों पर दौड़ती हुई रेलगाड़ी नहीं है कि पटरियों पर, बंधी पटरियों पर दौड़ती रहे। और दौड़ेगी तो एक मशीन हो जाएगी। जिंदगी तो एक सरिता है, जो रोज नया रास्ता बना लेती है--पहाड़ों में, मैदानों में, जंगलों में। अनूठे रास्तों से निकलती है, अनजान जगत में प्रवेश करती है और सागर तक पहुंच जाती है।

तो नारियों के सामने एक ही काम है। वह काम यह नहीं है कि अनाथ बच्चों को पढ़ा रहे हैं बैठ कर। तुम्हारे बच्चे भी सब अनाथ हैं। नाम के लिए वे बच्चे हैं तुम्हारे। न उनकी मां है, न उनका बाप है।

समाजसेवक स्त्रियां सोचती हैं कि अनाथ बच्चों का अनाथालय खोल दिया, बहुत बड़ा काम कर दिया। उनको पता नहीं कि तुम्हारे बच्चे भी अनाथ हैं। तुम दूसरों के अनाथ बच्चों को शिक्षा देने जा रही हो, तुम पागल हो। तुम्हारे बच्चे खुद अनाथ हैं, आरफंस हैं, कोई नहीं है उनका--न तुम हो, न तुम्हारे पति हैं। न उनकी मां है, न उनका बाप है, कोई भी नहीं है उनका। क्योंकि वह प्रेम ही नहीं है जो उनको सनाथ बनाता।

सोचते हैं हम कि आदिवासी बच्चों को जाकर शिक्षा दे रहे हैं।

तुम आदिवासी बच्चों को शिक्षा दो, तुम्हारे बच्चे धीरे-धीरे आदिवासी हुए चले जा रहे हैं। बीटल हैं, बीटनिक हैं; फलां हैं, ढिकां हैं; ये फिर से आदमी के आदिवासी होने की शक्लें हैं।

तुम सोचती होओ, स्त्रियां सोचती हों कि जाएं और सेवा करें, और फलां करें, ढिकां करें।

जिस समाज में प्रेम नहीं है, उस समाज में सेवा कैसे हो सकती है? सेवा तो प्रेम की सुगंध है।

इसलिए मैं तो एक ही बात आज कहना चाहता हूं। और इस संबंध में बहुत से प्रश्न आपके मन में जरूर उठे होंगे, उठने चाहिए, तो अगर आपने चाहा तो मैं दुबारा आपके सारे प्रश्नों के उत्तर देना चाहूंगा। आज तो सिर्फ एक धक्का आपको दे देना चाहता हूं, कि आपके भीतर चिंतन शुरु हो जाए।

हो सकता है मेरी बातें आपको बुरी लगें। लगें तो बहुत अच्छा है। हो सकता है मेरी बातों से आपको चोट लगे, तिलमिलाहट पैदा हो। भगवान करे जितनी ज्यादा हो जाए, उतना अच्छा है, क्योंकि कुछ सोच-विचार पैदा होगा। हो सकता है मेरी सब बातें गलत हों, इसलिए मेरी बात मान लेने की कोई भी जरूरत नहीं है। लेकिन मैंने जो कहा है, उस पर आप सोचना। मैं फिर दोहरा देता हूं दो-चार सूत्रों में मैंने क्या कहा और अपनी बात पूरी किए देता हूं।

आज तक का मनुष्य का समाज प्रेम के केंद्र पर निर्मित नहीं है, इसीलिए विक्षिप्तता है, इसीलिए पागलपन है, इसीलिए युद्ध हैं, इसीलिए आत्महत्याएं हैं, इसीलिए अपराध हैं। प्रेम की जगह आदमी ने एक झूठा सब्स्टीटयूट विवाह का ईजाद कर लिया है। विवाह के कारण वेश्याएं हैं, गुंडे हैं। विवाह के कारण शराब है; विवाह के कारण बेहोशियां हैं; विवाह के कारण भागे हुए संन्यासी हैं; विवाह के कारण मंदिरों में भजन करने वाले झूठे लोग हैं। और जब तक विवाह है, तब तक यह रहेगा।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि विवाह मिट जाए, मैं यह कह रहा हूं कि विवाह प्रेम से निकले। विवाह से प्रेम नहीं निकलता है। प्रेम से विवाह निकले तो शुभ है। और विवाह से प्रेम को निकालने की कोशिश की जाए तो यह प्रेम झूठा होगा, क्योंकि जबरदस्ती कभी भी कोई प्रेम नहीं निकाला जा सकता है। प्रेम या तो निकलता है या नहीं निकलता, जबरदस्ती नहीं निकाला जा सकता है।

तीसरी बात मैंने यह कही कि जो मां-बाप प्रेम से भरे हुए नहीं हैं, उनके बच्चे जन्म से ही विकृत, परवर्टेड, एबनार्मल, रुग्ण और बीमार पैदा होंगे। मैंने यह कहा कि जो मां-बाप, जो पति-पत्नी, जो प्रेमी युगल प्रेम के संभोग में लीन नहीं होते हैं, वे केवल उन बच्चों को पैदा करेंगे जो शरीरवादी होंगे, भौतिकवादी होंगे; जिनके जीवन की आंख पदार्थ के ऊपर कभी नहीं उठेगी, जो परमात्मा को देखने के लिए अंधे पैदा होंगे। आध्यात्मिक रुप से अंधे बच्चे हम पैदा कर रहे हैं।

मैंने आपसे यह कहा चौथी बात कि मां-बाप अगर एक-दूसरे को प्रेम करते हैं, तो ही वे बच्चों के मां बनेंगे, बाप बनेंगे; क्योंकि बच्चे उनकी ही प्रतिध्वनियां हैं। वे आया हुआ नया बसंत हैं। वे फिर से जीवन के दरख्त पर लगी हुई कोंपलें हैं। लेकिन जिसने पुराने बसंत को प्रेम नहीं किया, वह नये बसंत को कैसे प्रेम करेगा?

और मैंने अंतिम बात आपसे यह कही कि प्रेम शुरुआत है और परमात्मा अंतिम विकास है। प्रेम में जीवन शुरु हो तो परमात्मा पर पूर्ण होता है। प्रेम बीज बने तो परमात्मा अंतिम वृक्ष की छाया बनता है। प्रेम गंगोत्री हो तो परमात्मा का सागर उपलब्ध होता है।

इसलिए जिसके मन की भी कामना हो कि परमात्मा तक जाए, वह अपने जीवन को प्रेम के गीत से भर ले। और जिसकी भी आकांक्षा हो कि पूरी मनुष्यता परमात्मा के जीवन से भर जाए, वह सारी मनुष्यता को प्रेम की तरफ ले जाने के मार्ग पर जितनी बाधाएं हों, उनको तोड़े, मिटाए और प्रेम को उन्मुक्त आकाश दे, ताकि एक दिन एक नये मनुष्य का जन्म हो सके।

पुराना मनुष्य रुग्ण था, कुरुप था, अशुभ था। पुराने मनुष्य ने अपनी स्युसाइड का इंतजाम कर लिया है। वह विश्वघात कर रहा है। सारे जगत में एक साथ आत्मघात कर लेगा। यूनिवर्सल स्युसाइड का इंतजाम कर लिया है। अगर इसे बचाना है, तो प्रेम की वर्षा और प्रेम की भूमि और प्रेम के आकाश को निर्मित कर लेना जरूरी है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं। मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे मैं बहुत-बहुत आनंदित हूं। अगर मेरी बात से किसी के मन को जरा भी चोट और ठेस पहुंची हो, तो वह मुझे क्षमा कर दे। उसे चोट और ठेस पहुंचाने की मेरी कोई इच्छा नहीं। लेकिन मेरे हृदय में बड़ी पीड़ा जरूर है, क्योंकि आदमी के साथ जो हुआ है वह बहुत पीड़ादायी है। और मेरी

पीड़ा के कारण ही मुझे लगता है कि यह सब कुछ तोड़ दिया जाए एकबारगी, तो शायद सब कुछ नया हो, जीवन ठीक दिशा में गतिमान हो सके।

अंत में सबको फिर से धन्यवाद देता हूं मेरी बातें सुनने के लिए। और मेरी बातें सोचेंगे, इसका आग्रह करता हूं। और सबसे अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

प्रेम है द्वार प्रभु का

प्रेम है द्वार प्रभु का-7

मनुष्य की आत्मा, मनुष्य के प्राण निरंतर ही परमात्मा को पाने के लिए आतुर हैं। लेकिन किस परमात्मा को, कैसे परमात्मा को? उसका कोई अनुभव, उसका कोई आकार, उसकी कोई दिशा मनुष्य को ज्ञात नहीं है। सिर्फ एक छोटा सा अनुभव है जो मनुष्य को ज्ञात है और जो परमात्मा की झलक दे सकता है। वह अनुभव प्रेम का अनुभव है। और जिसके जीवन में प्रेम की कोई झलक नहीं है उसके जीवन में परमात्मा के आने की संभावना नहीं है। न तो प्रार्थनाएं परमात्मा तक पहुंचा सकती हैं, न धर्मशास्त्र पहुंचा सकते हैं, न मंदिर, मस्जिद पहुंचा सकते हैं, न कोई संगठन हिंदू और मुसलमानों के, ईसाइयों के, पारसियों के पहुंचा सकते हैं।

एक ही बात परमात्मा तक पहुंचा सकती है और वह यह है कि प्राणों में प्रेम की ज्योति का जन्म हो जाए। मंदिर और मस्जिद तो प्रेम की ज्योति को बुझाने का काम करते हैं। जिन्हें हम धर्मगुरु कहते हैं, वे मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने के लिए जहर फैलाते रहे हैं। जिन्हें हम धर्मशास्त्र कहते हैं, वे घृणा और हिंसा के आधार और माध्यम बन गए हैं। और जो परमात्मा तक पहुंचा सकता था वह प्रेम अत्यंत उपेक्षित होकर जीवन के रास्ते के किनारे अंधेरे में कहीं पड़ा रह गया है। इसलिए पांच हजार वर्षों से आदमी प्रार्थनाएं कर रहा है, पांच हजार वर्षों से आदमी भजन पूजन कर रहा है, पांच हजार वर्षों से मस्जिदों और मंदिरों की मूर्तियों के सामने सिर टेक रहा है, लेकिन परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी, परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी, परमात्मा की कोई किरण मनुष्य के भीतर अवतरित नहीं हो सकी। कोरी प्रार्थनाएं हाथ में रह गई हैं और आदमी रोज रोज नीचे गिरता गया है, और रोज रोज अंधेरे में भटकता गया है। आनंद के केवल सपने हाथ मग रह गए हैं, सच्चाइयां अत्यंत दुखपूर्ण होती चली गयी हैं।

और आज तो आदमी करीब करीब ऐसी जगह खड़ा हो गया है जहां उसे यह ख्याल भी लाना असंभव होता जा रहा है कि परमात्मा भी हो सकता है। क्या आपने कभी सोचा है कि यह घटना कैसे घट गई है? क्या नास्तिक इसके लिए जिम्मेदार हैं? या कि लोगों की आकांक्षाएं और अभीप्साएं ही परमात्मा की दिशा की तरफ जाना बंद हो गई है? या कि वैज्ञानिक और भौतिकवादी लोगों ने परमात्मा के द्वार बंद कर दिए हैं? नहीं, परमात्मा के द्वार इसलिए बंद हो गए हैं कि परमात्मा का एक ही द्वार था प्रेम, और उस प्रेम की तरफ हमारा कोई ध्यान नहीं रहा है। और भी अजीब, कठिन और आश्चर्य की बात यह हो गई है कि तथाकथित धार्मिक लोगों ने मिल जुलकर प्रेम की हत्या कर दी और मनुष्य को जीवन में इस भांति सुव्यवस्थित करने की कोशिश की कि उसमें प्रेम की किरण के जन्म की कोई संभावना ही न रह जाए।

प्रेम के अतिरिक्त मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता है जो प्रभु तक पहुंच सकता हो। और इतने लोग जो वंचित हो गए है प्रभु तक पहुंचने से, वह इसीलिए कि वे प्रेम तक पहुंचने से ही वंचित रह गए हैं। समाज की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। परिवार का पूरा का पूरा केंद्र अप्रेम का केंद्र है। बच्चे के गर्भाधान (ीं वदबमचजपवद) से लेकर उसकी मृत्यु तक की सारी यात्रा अप्रेम की यात्रा है। और हम इसी समाज को, इसी परिवार को, इसी गृहस्थी को सम्मान दिए जाते हैं,

अदब दिए जाते हैं, शोरगुल मचाए चले जाते हैं कि बड़ा पवित्र परिवार है, बड़ा पवित्र समाज है, बड़ा पवित्र जीवन है। और यही परिवार, यही समाज और यही सयता जिसके गुणगान करते हम थकते नहीं हैं मनुष्य को प्रेम से रोकने का कारण बन रही है। इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी होगा।

मनुष्यता के विकास में कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई है। यह सवाल नहीं है कि एकाध आदमी ईश्वर को पा ले, कोई कृष्ण, कोई राम, कोई बुद्ध, कोई क्राइस्ट ईश्वर को उपलब्ध हो जाए, यह कोई सवाल नहीं है। अरबों खरबों लोगों में अगर एक आदमी में ज्योति उतर भी आती हो तो यह कोई विचार करने की बात नहीं है। इसमें तो कोई हिसाब रखने की जरूरत भी नहीं है। एक माली एक बगीचा लगाता है। उसने दस करोड़ पौधे उसे बगीचे में लगाए हैं और एक पौधे में एक अच्छा सा फूल आ जाए तो माली की प्रशंसा करने कौन आएगा? कौन कहेगा कि माली तू बहुत कुशल है कि तूने जो बगीचा लगाया है, वह बहुत अदभुत है? देख, दस करोड़ वृक्षों में एक फूल खिल गया है! नहीं, हम कहेंगे यह माली की कुशलता का सबूत नहीं है। माली की भूल चूक से कोई खिल गया होगा, अन्यथा बाकी सारे पेड़ खबर दे रहे हैं कि माली कितना कुशल है! यह माली के बावजूद खिल गया होगा। माली ने कोशिश की होगी कि न खिल पाए क्योंकि सारे पौधे तो खबर दे रहे हैं कि माली के फूल कैसे खिले हुए हैं।

खरबों लोगों के बीच कोई एकाध आदमी के जीवन में ज्योति जल जाती है और हम उसी का शोरगुल मचाते रहते हैं हजारों सालों तक! पूजा करते रहते हैं, उसी के मंदिर बनाते रहते हज, उसी का गुणगान करते रहते हैं। अब तक हम रामलीला कर रहे हैं, अब तक हम बुद्ध की जयंती मना रहे हैं। अब तक महावीर की पूजा कर रहे हज, अब तक क्राइस्ट के सामने घुटने टेके बैठे हुए हैं। यह किस बात का सबूत है? यह बात का सबूत है कि पांच हजार साल में पांच छह आदमियों के अतिरिक्त आदमियत के जीवन में परमात्मा का कोई संपर्क नहीं हो सकता। नहीं तो कभी का हम भूल गए होते राम को, कभी के भूल गए होते बुद्ध को, कभी का हम भूल गए होते महावीर को महावीर को हुए ढाई हजार साल हो गए। ढाई हजार साल में कोई आदमी हनीं हुआ कि महावीर को हम भूल सकते। महावीर को अभी तक याद रखना पड़ा है। वह एक फूल खिला था, वह अब तक हमें याद रखना पड़ता है।

यह कोई गौरव की बात नहीं है कि हमें अब तक स्मृति है बुद्ध की, महावीर की, राम की, मोहम्मद की, क्राइस्ट की या जरथुष्ट की। यह इस बात का सबूत है कि और आदमी होते ही नहीं कि उनको हम भूला सकें। बस दो चार इने गिने नाम अटके रह गए हैं मनुष्य जाति की स्मृति में। और उन नामों के साथ भी हमने क्या किया है सिवाय उपद्रव के, हिंसा के। और उनकी पूजा करने वाले लोगों ने क्या किया है सिवाय आदमी के जीवन को नर्क बनाने के। मंदिरों और मस्जिदों के पुजारियों और पूजा को ने जमीन पर जितनी हत्याएं की हैं, और जितना खून बहाया है और जीवन का जितना अहित किया है उतना किसी ने भी नहीं किया है। जरूर कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई; नहीं तो इतने पौधे लगें और फूल न आए, यह बड़े आश्चर्य की बात है। कहीं जरूर भूल हो गई।

मेरी दृष्टि में प्रेम अब तक मनुष्य के जीवन का केंद्र नहीं बनाया जा सका, इसीलिए भूल हो गई है। और प्रेम केंद्र बनेगा भी नहीं क्योंकि जिन चीजों के कारण प्रेम जीवन का केंद्र नहीं बन रहा है, हम उन्हीं चीजों का शोर गुल मचा रहे हैं, आदर कर रहे हैं, सम्मान कर रहे हैं और उन्हीं चीजों को बढ़ावा दे रहे हैं। मनुष्य की जन्म से लेकर मृत्यु तक की यात्रा ही गलत हो गयी है। इस पर पुनर्विचार करना जरूरी है, अन्यथा सिर्फ हम कामनाएं कर सकते हैं और कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकता है। क्या आपको कभी यह बात ख्याल में आयी है कि आपका परिवार प्रेम का शत्रु है? क्या आपको यह बात कभी ख्याल में आयी है कि मनु से लेकर आज तक के सभी नीतिकार प्रेम के विरोधी हैं? जीवन का केंद्र है परिवार और परिवार विवाह पर खड़ा किया गया है जब कि परिवार प्रेम पर खड़ा होना चाहिए था। भूल हो गयी है, आदमी के सारे पारिवारिक विकास की भूल हो गयी है। परिवार निर्मित होना चाहिए प्रेम के केंद्र पर और परिवार निर्मित किया जा सकता है विवाह के केंद्र पर। इससे ज्यादा झूठी और गलत बात नहीं हो सकती। है।

प्रेम और विवाह का क्या संबंध है? प्रेम से तो विवाह निकल सकता है। लेकिन विवाह से प्रेम नहीं निकलता और न ही निकल सकता है। इस बात को थोड़ा समझ लें तो हम आगे बढ़ सकें। प्रेम परमात्मा की व्यवस्था है और विवाह आदमी की व्यवस्था है। विवाह सामाजिक संस्था है, प्रेम प्रकृति का दान है? विवाह, समाज, कानून नियमित करता है, बनाता है। विवाह आदमी की ईजाद है, और प्रेम? प्रेम परमात्मा का दान है। हमने सारे परिवार को विवाह के केंद्र पर खड़ाकर दिया है, प्रेम के केंद्र पर नहीं। हमने यह मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया में उतर जाएंगे। अदभुत झूठी बात है यह, और पांच हजार वर्षों में भी हमको इसका ख्याल नहीं आ सका है। हम अदभुत अंधे हैं। दो आदमियों के हाथ बांध देने से प्रेम के पैदा हो जाने की कोई जरुरत नहीं है, कोई अनिवार्यता नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि जो लोग बंधा हुआ अनुभव करते हैं, वे आपस में प्रेम कभी भी नहीं कर सकते।

प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता में। प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता की भूमि में जहां कोई बंधन नहीं, जहां कोई जबरदस्ती हनीं, जहां कोई कानून नहीं। प्रेम तो व्यक्ति का अपना आत्मदान है, बंधन नहीं, जबरदस्ती नहीं। उसके पीछे कोई विवशता, कोई मजबूरी नहीं है। किंतु हम अविवाहित स्त्री या पुरुष के मन में, युवक और युवती के मन में उस प्रेम की पहली किरण का गला घोंटकर हत्या कर देते हैं, फिर हम कहते हैं कि विवाह से प्रेम पैदा होना चाहिए, और फिर जो प्रेम पैदा होता है, वह बिल्कुल पैदा किया, (बनसजपअंजमक) होता है, कोशिश से लाया गया होता है। वह प्रेम वास्तविक नहीं होता, वह प्रेम सहजस्फूर्त (एचवदजंदमवने) नहीं होता है। वह प्रेम प्राणों से सहज उठता नहीं है, फैलता नहीं है। और जिसे हम विवाह से उत्पन्न प्रेम कहते हैं वह प्रेम केवल सहवास के कारण पैदा हुआ मोह होता है। प्राणों की झलक और प्राणों का आकर्षण और प्राणों की विद्युत वहां अनुपस्थित होती है। और इस तरह से परिवार बनता है, और इस विवाह से पैदा हुआ परिवार और परिवार की पवित्रता की कथाओं का कोई हिसाब नहीं है। और परिवार की प्रशंसाओं, स्तुतियों की कोई गुनना नहीं है। और यही परिवार सबसे कुरुप संस्था साबित हुई है।

पूरी मनुष्य जाति को विकृत (ढमतअमतज) करने में, अधार्मिक करने में, हिंसक बनाने में प्रेम से शून्य परिवार सबसे बड़ी संस्था साबित हुई है। प्रेम से शून्य परिवार से ज्यादा असुंदर और कुरुप (न्हसल) कुछ भी नहीं है, वही अधर्म का अड्डा बना हुआ है। जब हम एक युवक और युवती को विवाह में बांधते हज, बिना प्रेम के, बिना आंतरिक परिचय के, बिना एक दूसरे के प्राणों के संगीत के, तब हम केवल पंडित के मंत्रों में और वेदी की पूजा में और थोथे उपक्रम में उनको विवाह से बांध देते हैं। फिर आशा करते हैं उनको साथ छोड़ ने के कि उनके जीवन में प्रेम पैदा हो जाएगा! प्रेम तो पैदा नहीं होता है, सिर्फ उनके संबंध कामुम (एमगनंस) होते हैं। क्योंकि प्रेम पैदा नहीं किया जा सकता है। हां, प्रेम पैदा हो जाए तो व्यक्ति साथ जुड़कर परिवार निर्माण जरूर कर सकता है। दो व्यक्तियों को परिवार के निर्माण के लिए जोड़ दिया जाए और फिर आशा की जाए कि प्रेम पैदा हो जाए, यह नहीं हो सकता है। और जब प्रेम पैदा नहीं होता है तो क्या परिणाम होते हैं आपको पता है?

एक परिवार में कलह है। जिसके हम गृहस्थी कहते हैं, वह संघर्ष, कलह, द्वेष ईष्र्या और चैबीस घंटे उपद्रव का अड्डा बना हुआ है। लेकिन न मालूम हम कैसे अंधे हैं कि इसे देखते भी नहीं हैं। बाहर जब हम निकलते हैं मुस्कराते हुए निकलते हैं। सब घर के आंसू पोंछकर बाहर जाते हैं, पत्नी भी हंसती हुई मालूम पड़ती है, पति भी हंसता हुआ मालूम पड़ता है। लेकिन ये चेहरे झूठे हैं। दूसरों को दिखाई पड़ने वाले चेहरे हैं। घर भीतर के चेहरे बहुत आंसुओं से भरे हुए हैं। चैबीस घंटे कलह और संघर्ष में जीवन बीत रहा है। फिर इस कलह और संघर्ष के स्वाभाविक परिणाम भी होंगे ही।

प्रेम के बिना किसी व्यक्ति के जीवन में आत्मतृप्ति उपलब्ध नहीं होती। प्रेम जो है, वह व्यक्तित्व की तृप्ति का चरम बिंदु है। और जब प्रेम नहीं मिलता है तो व्यक्तित्व हमेशा अतृप्त, हमेशा अधूरा, बेचैन, तड़पता हुआ, मांग करता है कि मुझे पूर्ति चाहिए। हमेशा बेचैन, तड़पता हुआ रह जाता है। यह तड़पता हुआ व्यक्तित्व समाज में अनाचार पैदा करता है क्योंकि तड़पता हुआ व्यक्तित्व प्रेम को खोजने निकलता है। विवाह से प्रेम नहीं मिलता तो वह विवाह के अतिरिक्त प्रेम को खोजने

की कोशिश करता है। वेश्याएं पैदा होती हैं विवाह के कारण। विवाह है मूल, विवाह है जड़, वेश्याओं के पैदा करने की। और अब तक तो स्त्री वेश्याएं थीं और अब तो सय मुल्कों में पुरुष वेश्याएं (ऊंसम चतवेजपजनजम) भी उपलब्ध हैं।

वेश्याएं पैदा होंगी क्योंकि परिवार में जो प्रेम उपलब्ध होना चाहिए था वह उपलब्ध हो रहा है। आदमी दूसरे घरों में झांक रहा है उस प्रेम के लिए। वेश्याएं होंगी, और अगर वेश्याएं रोक दी जाएगी तो दूसरे परिवार में पीछे के द्वारों से प्रेम के रास्ते निर्मित होंगे। इसीलिए तो सारे समाज ने यह तय कर लिया है कि कुछ वेश्याएं निश्चित कर दो ताकि परिवारों का आचरण सुरक्षित रहे। कुछ स्त्रियों को पीड़ा में डाल दो ताकि बाकी स्त्रियां पतिव्रता बनी रहें और सती सावित्री बनी रहे। लेकिन जो संस्थाएं ईजाद करी पड़ती हैं, जान लेना चाहिए कि वह पूरा समाज बुनियादी रुप से अनैतिक होगा। अन्यथा ऐसी अनैतिक ईजाद की आवश्यकता नहीं थी। वेश्या पैदा होती हैं, अनाचार पैदा होता है, व्यभिचार पैदा होता है।, तलाक पैदा होते हैं। यदि तलाक न होता, न व्यभिचार होता, और न अनाचार होता तो घर एक चैबीस घंटे का मानसिक तनाव (ःदगपमजल) बन जाता।

सारी दुनिया में पागलों की संख्या बढ़ती गई है। ये पागल परिवार के भीतर पैदा होते हैं। सारी दुनिया में स्त्रियां हिस्टीरिया (भलेजमतपं) और न्यूरोसिस (छमनतवेपे) से पीड़ित हो रही हैं। विक्षिप्त, उन्माद से भरती चली जा रही है। बेहोश होती हैं, गिरती हैं, चिलाती हैं। पुरुष पागल होते चले जा रहे हैं। एक घंटे में जमीन पर एक हजार आत्महत्याएं हो जाती हैं और हम चिल्लाए जा रहे हैं¬समाज हमारा बहुत महान है, ऋषि मुनियों ने निर्मित किया है! और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि बहुत सोच समझकर समाज के आधार रखे गए हैं! कैसे ऋषि मुनि और कैसे ये आधार? अभी एक घंटा मैं बोलूंगा तो इस बीच एक हजार आदमी कहीं छुरा मार लेंगे कहीं टेन के नीचे लेट जाएंगे, कोई लहर पी लेगा। उन एक हजार लोगों की जिंदगी कैसी होगी, जो हर घंटे मरने को तैयार हो जाते हैं? और यह मत सोचना कि वे जो नहीं मरते हैं बहुत सुखमय हैं। कुल जमा कारण यह है कि वे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। सुख का कोई भी सवाल नहीं है, असल मग मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं तो जिए चले जाते हैं, धक्के खाए चले जाते हैं। सोचते हैं आज गलत है, तो कल ठीक हो जाएगा। परसों सब ठीक हो जाएगा। लेकिन मस्तिष्क उनके रुग्ण होते चले जाते हैं।

प्रेम के अतिरिक्त को आदमी कभी स्वस्थ नहीं हो सकता है। प्रेम जीवन में न हो तो मस्तिष्क रुग्ण होगा, चिंता से भरेगा, तनाव से भरेगा। आदमी शराब पीएगा, नशा करेगा, कहीं जाकर अपने को भूल जाना चाहेगा। दुनिया में पढ़ती हुई शराब शराबियों के कारण नहीं है। परिवार ने उस हालत में ला दिया है लोगों को कि बिना बेहोश हुए थोड़ी देर के लिए भी रास्ता मिलना मुश्किल हो गया है। तो लोग शराब पीते चले जाएंगे, लोग बेहोश पड़े रहेंगे, लोग हत्या करेंगे, लोग पागल होते जाएंगे। अमरीका में प्रतिदिन बीस लाख आदमी अपना मानसिक इलाज करवा रहे हैं, और ये सरकारी आंकड़े हैं, और आप तो भली भांति जानते हैं कि सरकारी आंकड़े कितने सही होते हैं! बीस लाख सरकार कहती है तो कितने लोग इलाज करा रहे होंगे, यह कहना मुश्किल है। और जो अमरीका की हालत है, वह सारी दुनिया की हालत है।

आधुनिक युग के मनस्तत्वविद यह कहते हैं कि करीब करीब चार आदमियों में से तीन आदमी एबनार्मल हो गए हैं, रुग्ण हो गए हैं, स्वस्थ नहीं हैं। जिस समाज में चार आदमियों में तीन आदमी मानसिक रुप से रुग्ण हो जाते हों उस मसाज के आधारों को उसकी बुनियादों को फिर से सोच लेना जरूरी है, नहीं तो कल चार आदमी भी रुग्ण हो जाएंगे और फिर सोचने वाले भी शेष नहीं रह जाएंगे। फिर बहुत मुश्किल हो जाएगी। लेकिन होता ऐसा है कि जब एक ही बीमारी से सारे लोग ग्रसित हो जाते हैं तो उस बीमारी का पता नहीं चलता। हम सब एक से रुग्ण, बीमार और परेशान हैं, तो हमें पता बिल्कुल नहीं चलता है। सभी ऐसे हैं इसीलिए स्वस्थ मालूम पड़ते हैं। जब जब सभी ऐसे हैं तो ठीक है। ऐसे दुनिया चलती है, यही जीवन है। जब ऐसी पीड़ा दिखायी देती है तो हम ऋषि मुनियों के वचन दोहराते हैं कि वह तो ऋषि मुनियों ने पहले ही कह दिया कि जीवन दुख है।

जीवन दुख नहीं है, यह दुख हम बनाए हुए हैं। वह तो पहले ही ऋषि मुनियों ने कह दिया है कि जीवन तो असार है, इससे छुटकारा पाना चाहिए! जीवन असार नहीं है, यह असार हमने बनाया हुआ है और जीवन से छुटकारा पाने की बातें दो कौड़ी ही हैं। क्योंकि जो आदमी जीवन से छुटकारा पाने की कोशिश करता है वह प्रभु को कभी उपलब्ध नहीं हो सकता है। क्योंकि जीवन प्रभु है, जीवन परमात्मा है, जीवन में परमात्मा ही तो प्रकट हो रहा है। उससे जो दूर भागेगा वह परमात्मा से ही दूर चला जाएगा।

जब एक सी बीमारी पकड़ती है तो किसी को पता नहीं चलता है। पूरी आदमियत जड़ से रुग्ण है इसलिए पता नहीं चलता तो दूसरी तरकीबें खोजते हैं इलाज की। मूल कारण (ीं ंनेंसपजल) जो है, बुनियादी कारण जो है उसको सोचते नहीं, ऊपर इलाज सोचते हैं। ऊपरी इलाज भी क्या सोचते हैं? एक आदमी शराब पीने लगता है जीवन से घबरा कर। एक आदमी जाकर नृत्य देखने लगता है, वह वेश्या के घर बैठ जाता है जीवन से घबराकर। दूसरा सिनेमा में बैठ जाता है। तीसरा आदमी चुनाव लड़ने लगता है ताकि भूल जाए सबको। चैथा आदमी मंदिरों में जाकर भजन कीर्तन करने लगता है। यह भजन कीर्तन करने वाला भी खुद के जीवन को भूलने की कोशिश कर रहा है। यह कोई परमात्मा को पाने का रास्ता नहीं है। परमात्मा तो जीवन में प्रवेश से उपलब्ध होता है, जीवन से भागने से नहीं। यह सब पलायन (द्मेबंचम) हैं। एक आदमी मंदिर में भजन कीर्तन कर रहा है, हिल डुल रहा है, हम कहते हैं कि भक्त जी बहुत आनंदित हो रहे हैं। भक्त जी आनंदित नहीं हो रहे हैं भक्त जी किसी दुख से भागे हुए हैं, वहां भुलाने की कोशिश कर रहे हैं। शराब का ही यह दूसरा रूप है। यह आध्यात्मिक नशा (ेचपतपजनंस पदजवगपबंजपवद) है। यह अध्यात्म के नाम से नयी शराबें हैं जो सारी दुनिया में चलती हैं।

इन लोगों ने जीवन से भाग कर जिंदगी को बदलने नहीं दिया आज तक। जिंदगी वहीं की वहीं, दुख से भरी हुई है। और जब भी कोई दुखी हो जाता है वह भी इनके पीछे चला जाता है कि हमको भी गुरुमंत्र दे दें, हमारा भी कान फूंक दें, कि हम भी इसी तरह सुखी हो जाए, जैसे आप हो गए हैं। लेकिन यह जिंदगी क्यों दुख पैदा कर रही है इसको देखने के लिए, इसके विज्ञान के खोजने के लिए कोई भी नहीं जाता है।

मेरी दृष्टि में जहां जीवन की शुरुआत होती है वहीं कुछ गड़बड़ हो गयी है। और वह गड़बड़ यह हो गयी है कि हमने मनुष्य जाति पर प्रेम की जगह विवाह को थोप दिया है। फिर विवाह होगा और ये सारे रूप पैदा होंगे। जब दो व्यक्ति एक दूसरे से बंध जाते हैं और उनके जीवन में कोई शांति और तृप्ति नहीं मिलती तो वे दोनों एक दूसरे पर क्रुद्ध हो जाते हैं। वे कहते हैं, तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल पा रही है। और वे एक दूसरे को सताना शुरू करते हैं, परेशान करना शुरू करते हैं और इसी हैरानी, इसी परेशानी, इसी कलह के बीच बच्चों का जन्म होता है। ये बच्चे पैदाइश से ही विकृत (ढमतअमतजमक) हो जाते हैं।

मेरी समझ में, मेरी दृष्टि में जिस दिन आदमी पूरी तरह आदमी के जन्म विज्ञान को विकसित करेगा तो शायद आपको पता लगे कि दुनिया में बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट जैसे लोग शायद इसीलिए पैदा हो सके हैं कि उनके मां बाप ने जिस क्षण में संभोग किया था, उस समय वे अपूर्व प्रेम से संयुक्त हुए थे। प्रेम के क्षण में गर्भस्थापन (ीं वदबमचजपवद) हुआ था। दुनिया में जो थोड़े से अदभुत लोग हुए¬शांति, आनंदित, प्रभु को उपलब्ध, वे वही लोग हैं जिनका पहला अणु प्रेम की दीक्षा से उत्पन्न हुआ था, जिनको पहला जीवन अणु प्रेम में सराबोर पैदा हुआ था।

पति और पत्नी कलह से भरे हुए हैं, क्रोध से, ईष्र्या से, एक दूसरे के प्रति संघर्ष से अहंकार से एक दूसरे की छाती पर चढ़े हुए हैं, एक दूसरे के मालिक बनना चाहे रहे हैं। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे हैं। ये बच्चे किसी आध्यात्मिक जीवन में कैसे प्रवेश पाएंगे?

मैंने सुना है, एक घर में एक मां ने अपने बेटे और छोटी बेटी को¬वे दोनों बेटे और बेटी बाहर मैदान में लड़ रहे थे, एक दूसरे पर घूंसेबाजी कर रहे थे¬कहा कि अरे यह क्या करते हो। कितनी बार मैंने समझाया कि आपस में लड़ा मत करो,

खेला करो। तो उसे लड़के ने कहा: हम लड़ नहीं रहे हैं, खेल रहे हैं, मम्मी डैडी का खेल कर रहे हैं। जो घर में रोज हो रहा है वह हम दोहरा रहे हैं।

यह खेल जन्म के क्षण से शुरु हो जाता है। इस संबंध में दो चार बातें समझ लेनी बहुत जरुरी हैं।

पहली बातें मेरी दृष्टि में, जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम के आधार पर मिलते हैं, उनका संभोग होता है, उनका मिलन होता है तो उस परिपूर्ण प्रेम के तल पर उनके शरीर ही नहीं मिलते हैं, उनके मनस भी मिलता है, उनकी आत्मा भी मिलती है। वे एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते हैं। वे दोनों विलीन हो जाते हैं और शायद, शायद परमात्मा ही शेष रह जाता है उस क्षण में। और उस क्षण जिस बच्चे का गर्भाधान होता है वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है, क्योंकि प्रेम के क्षण को पहला कदम उसके जीवन में उठा लिया है। लेकिन जो मां बाप, पति पत्नी आपस में द्वेष से भरे हैं, घृणा से भरे हैं, क्रोध से भरे हैं, कलह से भरे हैं वे भी मिलती हैं, लेकिन उनके शरीर ही मिलते हैं, उनकी आत्मा और प्राण नहीं मिलते और उनके शरीर के ऊपरी मिलन से जो बच्चे पैदा होते हैं वे अगर शरीरवादी (उंजमतपंसपेज) पैदा होते हों, बीमार और रुग्ण पैदा होते हों, और उनके जीवन में अगर कोई आत्मा की प्यास पैदा न होती हो, तो दोष उन बच्चों को मत देना। बहुत दिया जा चुका है यह दोष। दोष देना उन मां बाप को जिनकी छवि लेकर वह जन्मते हैं जिनका सब अपराध और जिनकी सब बीमारियां लेकर वे जन्मते हैं और जिनका सब क्रोध और घृणा लेकर वे जन्मते हैं। जन्म साथ ही उनका पौधा विकृत हो जाता है। फिर इनको पिलाओ गीता, इनको समझा ओ कुरान, इनसे कहो कि प्रार्थनाएं करो¬सब झूठी हो जाती हैं, क्योंकि प्रेम का बीज ही शुरु नहीं हो सका तो प्रार्थनाएं कैसे शुरु हो सकती हैं?

जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम और आनंद में मिलते हैं तो वह मिलन एक आध्यात्मिक कृत्य (ेचपतपजनंस ंबज) हो जाता है। फिर उसका काम (ेमग) से कोई संबंध नहीं है। वह मिलन फिर कामुक नहीं है, वह मिलन शारीरिक नहीं है, वह मिलन इतना अनूठा है, इतना महत्वपूर्ण, जितना किसी योगी की समाधि। उतना ही महत्वपूर्ण है वह मिलन जब दो आत्माएं परिपूर्ण प्रेम से संयुक्त होती हैं, और उतना ही पवित्र है वह कृत्य, क्योंकि परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्म देता है, और जीवन को गति देता है। लेकिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने, तथाकथित झूठे समाज ने, तथाकथित झूठे परिवार ने यही समझाने की कोशिश की है कि सेक्स, काम, यौन अपवित्र है, घृणित है। यह पागलपन की बातें हैं। अगर यौन घृणित और अपवित्र है तो सारा जीवन अपवित्र हो गया और घृणित हो गया। अगर सेक्स पाप है तो पूरा जीवन पाप हो गया, पूरा जीवन निदिंत (बवदकमउदमक) हो गया। और अगर जीवन ही परा निदिंत हो जाएगा तो कैसे प्रसन्न लोग उत्पन्न होंगे, कैसे सच्चे लोग अउपलब्ध होंगे? जब जीवन ही पूरा का पूरा पाप है तो सारी रात अंधेरी हो गई। अब इसमें प्रकाश की किरण कहीं से लानी पड़ेगी।

मैं आपको कहना चाहता हूं, एक नई मनुष्यता के जन्म के लिए सेक्स की पवित्रता, सेक्स की धार्मिकता स्वीकार करनी अत्यंत आवश्यक है क्योंकि जीवन उससे ही जन्मता है। परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्माता है। और परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरुआत बनाया है वह कदापि पाप नहीं हो सकता है। लेकिन आदमी ने जरूर उसे पाप कर दिया है क्योंकि जो चीज प्रेम से रहित है वह पाप हो ही जाती है। जो चीज प्रेम से शून्य हो जाती है वह अपवित्र हो जाती है। आदमी की जिंदगी में प्रेम नहीं रहा इसलिए केवल कामुकता (एमगनंसपजल) रह गई है, सिर्फ यौन रह गया है। वह यौन पाप हो गया है। वह यौन का पाप नहीं है वह हमारे प्रेम के अभाव का पाप है और उसी पाप से सारा जीवन शुरु होता है। फिर ये बच्चे पैदा होते हैं, फिर ये बच्चे जन्मते हैं।

और स्मरण रहे, जो पत्नी अपने पति को प्रेम करती है उसके लिए पति परमात्मा हो जाता है। शास्त्रों के समझाने से नहीं होती यह बात। जो पति अपनी पत्नी से प्रेम करता है उसके लिए पत्नी भी परमात्मा हो जाती है, क्योंकि प्रेम किसी को भी परमात्मा बना देता है। जिनकी तरफ उसकी आंखें प्रेम से उठती हैं वही परमात्मा हो जाता है। परमात्मा का कोई और अर्थ नहीं है। प्रेम की आंख सारे जगत को धीरे धीरे परमात्मामय देखने लगती है। लेकिन जो एक को ही प्रेम से भरकर नहीं

देख पाता और सारे जगत को ब्रह्ममय देखने की बातें करता है उसकी वे बातें झूठी हैं, उन बातों का कोई आधार और अर्थ नहीं है।

जिसने कभी एक को भी प्रेम नहीं किया उसके जीवन में परमात्मा की कोई शुरुआत नहीं हो सकती, क्योंकि प्रेम के ही क्षण में पहली दफा कोई व्यक्ति परमात्मा हो जाता है। वह पली झलक है प्रभु की। फिर उसी झलक को आदमी बढ़ाता है और एक दिन वही झलक पूरी हो जाती है। सारा जगत उसी रुप में रुपांतरित हो जाता है। लेकिन जिसने पानी की कभी बूंद नहीं देखी और कहता है मुझे सागर चाहिए, कहता है पानी की बूंद से मुझे कोई मतलब नहीं, पानी की बूंद का मैं क्या करूंगा मुझे तो सागर चाहिए तो उससे हम कहेंगे, तूने पानी की बूंद भी नहीं देखी, पानी की बूंद भी नहीं पा सका और सागर पाने चल पड़ा है, तू पागल है। क्योंकि सागर और क्या है पानी की अनंत बूंदों के जोड़ के सिवाय? परमात्मा भी प्रेम की अनंत बूंदों का जोड़ है। प्रेम की अगर एक बूंद निदिंत है तो पूरा परमात्मा निदिंत हो गया। फिर झूठे परमात्मा खड़े होंगे, मूर्तियां खड़ी होंगी, पूजा पाठ हों, सब बकवास होगी लेकिन हमारे प्राणों का कोई अंत संबंध उससे नहीं हो सकता है।

और यह भी ध्यान में रख लेना जरूरी है कि कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को प्रेम करती है तभी प्रेम के कारण, पूर्ण प्रेम के कारण ही वह ठीक अर्थों में मां बन पाती है। बच्चे पैदा कर लेने मात्र से कोई मां नहीं बन जाती। मां तो कोई स्त्री तभी बनती है और पिता तो कोई पुरुष तभी बनता है जब कि उन्होंने एक दूसरे को प्रेम किया हो। जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेम को प्रेम करती है तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते हैं। वह फिर वही शक्ल है, फिर वही रुप हैं, फिर वही निर्दोष आंखें हैं जो उसके पति में छिपी थीं, वह फिर प्रकट हुई हैं। उसने अगर अपने पति को प्रेम किया है तो वह अपने बच्चे को प्रेम कर सकेगी। बच्चे को किया गया प्रेम प्रति को किए गए प्रेम की प्रतिध्वनि है। नहीं तो कोई बच्चे को प्रेम नहीं कर सकता है। मां बच्चे को प्रेम नहीं कर सकती, जब तक उसने अपने पति को न चाहा हो पूरे पूरे प्राणों से। क्योंकि वह बच्चे उसके प्रति की प्रतिकृतियां हैं, वह उसकी ही प्रतिध्वनियां हैं, यह पति ही फिर वापस लौट आया है। यह नया जन्म है उसके पति का। पति फिर पवित्र और नया होकर वापस लौट आया है। लेकिन पति के प्रति अगर प्रेम नहीं है तो बच्चे के प्रति प्रेम कैसे होगा? बच्चे उपेक्षित हो जाएंगे, हो गए हैं।

बाप भी तभी कोई बनता है जब अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है कि पत्नी भी उसे परमात्मा दिखायी देती है, तब बच्चा फिर उसकी पत्नी का ही लौटता हुआ रुप है। पत्नी को जब उसने पहली दहा देखा था तब वह जैसी निर्दोष थी, जब जैसी शांत थी, जब जैसी सुंदर था, तब उसकी आंखें जैसी झील की तरह थीं, इन बच्चों में फिर वहीं आंखें वापस लौट आई हैं। इन बच्चों में फिर वही चेहरा वापस लौट आया है। ये बच्चे फिर उसी छबि में नया होकर आ गए हैं। जैसे पिछले बसंत में फूल खिले थे, पिछले बसंत में पत्ते आए थे। फिर साल बीत गया पुराने पत्ते गिरे गए। फिर नयी कोंपलें निकल आयी हैं, फिर नए पत्तों से वृक्ष भर गया है। फिर लौट और आया बसंत, फिर नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसंत को ही प्रेम नहीं किया था वह इस बसंत को कैसे प्रेम कर सकेगा?

जीवन निरंतर लौट रहा है। निरंतर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता चला जाता है, पुराने पत्ते गिर जाते हैं, नए आ जाते हैं। जीवन की सृजनात्मक (बतमंजपअपजल) ही तो परमात्मा है, यही तो प्रभु है। जो इसको पहचानेगा वही तो उसे पहचानेगा। लेकिन न मां बच्चे को प्रेम कर पाती है, न पिता बच्चे को प्रेम कर पाता है। और जब मां और बाप बच्चे को प्रेम नहीं कर पाते हैं तो बच्चे जन्म से ही पागल होने के रास्ते पर संलग्न हो जाते हैं। उनको दूध मिलता है, कपड़े मिलते हैं, मकान मिलते हैं लेकिन प्रेम नहीं मिलता है। प्रेम कि बिना उनको परमात्मा नहीं मिल सकता है और सब मिल सकता है।

अभी रूस का एक वैज्ञानिक बंदरों के ऊपर कुछ प्रयोग करता था। उसने कुछ नकली बंदरिया बनायीं। नकली बिजली के यांत्रिक हाथ पैर उनके, बिजली के तारों का ढांचा। जो बंदर पैदा हुए उनको नकली माताओं के पास कर दिया गया। नकली माताओं से वे चिपक गए। वे पहले दिन के बच्चे, उनको कुछ पता नहीं कि कौन असली है, कौन नकली। वे नकली मां के पास ले जाए गए। पैदा होते ही उसकी छाती से जाकर चिपके रहते हैं। वह मशीनी बंदरिया है, वह हिलती

रहती है, बच्चे समझते हैं कि मां उनको हिला डुला कर झुला रही है। ऐसे बीस बंदर के बच्चों को नकली मां के पास पाला गया और उनको अच्छा दूध दिया गया। मां ने उनको अच्छी तरह हिलाया डुलाया, मां कूदती फांदती सब करती। बच्चे स्वस्थ दिखाई पड़ते थे। फिर वे बड़े भी हो गए। लेकिन वे सब बंदर पागल निकले, वे सब असामान्य (ंइदवतउं) साबित हुए। उनको दूध मिला, उनका शरीर अच्छा हो गया लेकिन उनका व्यवहार विक्षिप्त हो गया। वैज्ञानिक बड़े हैरान हुए कि इनको क्या हुआ? इनको सब तो मिला, फिर ये विक्षिप्त कैसे हो गए?

एक चीज, जो वैज्ञानिक की लेबोरेटरी में नहीं पकड़ी जा सकी थी वह उनको नहीं मिली। प्रेम उनको नहीं मिला। जो उन बीस बंदरों की हालत हुई वही साढ़े तीन अरब मनुष्यों की हो रही है। झूठी मां मिलती है, झूठा बाप मिलता है। नकली मां हिलती रहती है, नकली बात हिलता रहता है और ये बच्चे विक्षिप्त हो जाते हैं। और हम कहते हैं कि ये शांत नहीं होते, अशांत होते चले जाते हैं। ये छुरेबाजी करते हैं, ये लड़कियों पर एसिड फेंकते हैं, ये कालेज में आग लगाते हैं, ये बस पर पत्थर फेंकते हैं, ये मास्टर को मारते है। मारेंगे। मारे बिना इनको रास्ता नहीं। अभी थोड़ा थोड़ा मारते हैं, कल और ज्यादा मारेंगे। और तुम्हारे कोई शिक्षक, तुम्हारे कोई नेता, तुम्हारे कोई धर्मगुरु इनको नहीं समझा सकेंगे। क्योंकि सवाल समझाने का नहीं है आत्मा ही रुग्ण पैदा हो रही है। यह रुग्ण आत्मा प्यास पैदा करेगी, यह चीजों को तोड़ेगी, मिटेगी।

तीन हजार साल से जो बात चलती थी वह अब चरम परिणति (बसपउंग) पर पहुंच रही है। सौ डिग्री तक हम पानी को गरम करते हैं, पानी भाप बनकर उड़ जाता है, निन्यानबे डिग्री तक पानी बना रहता है फिर सौ डिग्री पर भाप बनने लगता है। सौ डिग्री पर पहुंच गया है आदमियत का पागलपन। अब वह भाप बनकर उड़ना शुरु हो रहा है। मत चिल्लाइए, मत परेशान होइए! बनने दीजिए भाप और उपदेश देते रहिए, और आपके साधु संत समझाया करें अच्छी अच्छी बातें, और गीता की टीकाएं करते रहें। करते रहो प्रवचन, और टीका गीता पर, और दोहराते रहो पुराने शब्दों को। यह भाप बननी बंद नहीं होगी। यह भाप बनती तब बंद होगी जब जीवन की पूरी प्रक्रिया को हम समझेंगे। समझेंगे कि कहीं कोई भूल हो रही है, कहीं कोई भूल गई है। और वह कोई आज की भूल हनीं है। चार पांच हजार साल की भूल है। शिखर (बसपउंग) पर पहुंच गई है इसलिए मुश्किल खड़ी हुई जा रही है।

ये प्रेम से रिक्त बच्चे जन्मते हैं और फिर प्रेम से रिक्त हवा में ही पाले जाते हैं। फिर वही नाटक ये दोहराएगा और फिर मम्मी और डैडी का पुराना खेल! वे बड़े हो जाएंगे, और फिर वही पुराना नाटक दोहराएंगे¬विवाह में बांधे जाएंगे, क्योंकि समाज प्रेम को आज्ञा नहीं देता। न मां पसंद करती है कि मेरी लड़की किसी को प्रेम करे। न बाप पसंद करते हैं कि मेरा बेटा किसी को प्रेम करे। न समाज पसंद करता है कोई किसी को प्रेम करे। प्रेम तो होना ही नहीं चाहिए। प्रेम तो पाप है। वह तो बिल्कुल ही योग्य बात नहीं है। विवाह होना चाहिए। फिर प्रेम नहीं होगा। फिर विवाह होगा। और पहिया वैसा का वैसा ही घूमता रहेगा।

आप कहेंगे कि जहां प्रेम होता है वहां भी कोई बहुत अच्छी हालत नहीं मालूम होती। नहीं मालूम होगी। क्योंकि प्रेम को आप जिस भांति मौका देते हैं उसमें प्रेम एक चोरी की तरह होता है, प्रेम एक सीक्रेसी की तरह होता है। प्रेम करने वाला डरते हुए प्रेम करते हैं। घबराएं हुए प्रेम करते हैं। चोरों की तरह प्रेम करते हैं, अपराधी की तरह प्रेम करते हैं। सारा समाज उनके विरोध में है, सारे समाज की आंखें उन पर लगी हुई हैं। सारे समाज के विद्रोह में वे प्रेम करते हैं। यह प्रेम भी स्वस्थ नहीं है, क्योंकि प्रेम के लिए स्वस्थ हवा नहीं है। इसके परिणाम भी अच्छे नहीं हो सकते।

प्रेम के लिए समाज को हवा पैदा करनी चाहिए। मौका पैदा करना चाहिए। अवसर पैदा करना चाहिए। प्रेम की शिक्षा दी जानी चाहिए, दीक्षा दी जानी चाहिए। प्रेम की तरफ बच्चों को विकसित किया जाना चाहिए क्योंकि वही उनके जीवन का आधार बनेगा, वही उनके पूरे जीवन का केंद्र बनेगा। उसी केंद्र से उनका जिन विकसित होगा। लेकिन उसकी कोई बात ही नहीं है, उससे हम दूर खड़े रहते हैं, आंखें बंद किए खड़े रहते हैं। न मां बच्चे से प्रेम की बात करती है, न बाप। न उन्हें

कोई सिखाता है कि प्रेम हो तब तक तुम मत विवाह करना, क्योंकि वह विवाह गलत होगा, झूठा होगा, पाप होगा, वह सारी कुरूपता की जड़ होगी और सारी मनुष्यता को पागल करने का कारण होगा।

अगर मनुष्य जाति को परमात्मा के निकट लेना है तो पहला काम परमात्मा की बात मत करिए। मनुष्य जाति को प्रेम के निकट ले आइए। जीवन जोखिम के काम में है। न मालूम कितने खतरे हो सकते हैं। जीवन की बनी बनायी व्यवस्था में, न मालूम कितने परिवर्तन करने पड़ सकते हैं। लेकिन मत करिए परिवर्तन, यह समाज अपने ही हाथ मौत के किनारे पहुंच गया है इसलिए स्वयं मर जाएगा। यह बच नहीं सकता। प्रेम से रिक्त लोग ही युद्धों को पैदा करते हैं प्रेम से रिक्त लोग ही अपराधी बनते हैं। प्रेम से रिक्तता ही अपराध (बतपउपदंसपजल) की जड़ है, और सारी दुनिया में अपराधी फैलते चले जाते हैं।

जैसा मैंने आपसे कहा कि अगर किसी दिन जन्म विज्ञान पूरा विकसित होगा तो हम शायद पता लगा पाए कि कृष्ण का जन्म किन स्थितियों में हुआ। किस समस्वरता (भंतउवदल) में, कृष्ण के मां बाप ने किस प्रेम के क्षण में गर्भस्थापन (बवदबमचजपवद) किया इस बच्चे का, प्रेम के किस क्षण में यह बच्चा अवतरित हुआ, तो शायद हमें दूसरी तरफ यह भी पता चल जाए कि हिटलर किस अप्रेम के क्षण में पैदा हुआ होगा। मुसोलिनी किस क्षण पैदा हुआ होगा। तैमूरलंग, चंगेज खां किस अवसार पर पैदा हुए होंगे। हो सकता है कि यह पता चले कि चंगेज खां संघर्ष, घृणा और क्रोध से भरे मां बाप से पैदा हुआ हो। जिंदगी भर वह क्रोध से भरा हुआ है। वह जो क्रोध का मालिक वेग (वतपहदंस उवउमदजनउ) है वह उसको जिंदगी भर दौड़ाए चला जा रहा है। चंगेज खां जिस गांव में गया लाखों लोगों को कटवा दिया। तैमूरलंग जिस राजधानी में जाता दस दस हजार बच्चों को गर्दनें कटवा देता है। भाले में छिदवा देता। जुलूस निकालता तो दस हजार बच्चों की गर्दनें लटकी हुई होती भालों के ऊपर, पीछे तैमूर चलता, लोग पूछते, यह तुम क्या करते हो? तो वह कहता: ताकि लोग याद रखें कि तैमूर कभी इस नगरी में आया था। इस पागल को याद रखवाने की और कोई बात याद नहीं पड़ती थी! हिटलर ने जर्मनी मग साठ लाख यहूदियों की हत्या की। पांच सौ यहूदी रोज मारता रहा। स्टैलिन ने रूस में सात लाख लोगों की हत्या की। जरूर इनके जन्म के साथ कोई गड़बड़ हो गई। जरूर ये जन्म के साथ ही पागल पैदा हुए। उन्माद (छमनतवेपे) इनके जन्म के साथ इनके खून में आया और फिर वह फैलता चला गया। और पागलों में बड़ी ताकत होती है। पागल कब्जा कर लेते हैं और पागल दौड़कर हावी हो जाते हैं¬धन पर, पद पर यश पर। और फिर सारी दुनिया को विकृत करते हैं क्योंकि वे ताकतवर होते हैं।

यह जो पागलों ने दुनिया बनायी है यह दुनिया तीसरे महायुद्ध के करीब आ गयी है। सारी दुनिया मरेगी। पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोगों की हत्या की गयी, दूसरे महायुद्ध में साढ़े सात करोड़ लोगों की हत्या की गयी। अब तीसरे में कितनी की जाएगी? मैंने सुना है¬जब आइंस्टीन मर कर भगवान के घर पहुंचा तो भगवान के घर पहुंचा तो भगवान ने उससे कहा कि मैं बहुत घबराया हुआ हूं। क्या तुम तुझे तीसरे महायुद्ध के संबंध में कुछ बताओगे? क्या होगा? उसने कहा, तीसरे महायुद्ध के बाबत कहना मुश्किल है, चैथे के संबंध में कुछ जरूर बता सकता हूं। भगवान ने कहा: तीसरे के बाबत नहीं बता सकते, चैथे के बाबत कैसे बताओगे? आइंस्टीन ने कहा, एक बात बता सकता हूं चैथे के बाबत, कि चैथा महायुद्ध कभी नहीं होगा क्योंकि तीसरे में सब आदमी समाप्त हो जाएंगे। चैथे के होने की कोई संभावना नहीं है क्योंकि यह करने वाले ही नहीं बचेंगे। तीसरे के बाबत कुछ भी कहना मुश्किल है कि ये साढ़े तीन अरब पागल आदमी क्या करेंगे? कुछ नहीं कहा जा सकता कि क्या स्थिति होगी।

प्रेम से वियुक्त मनुष्यमात्र एक दुर्घटना है, मैं यही निवेदन करना चाहता हूं। वैसे मेरी बातें बड़ी अजीब लगी होंगी लगी होंगी आपको क्योंकि ऋषि मुनि इस तरह की बातें करते ही नहीं। मेरी बात बहुत अजीब लगी होगी आपको। शायद यहां आते समय आपने सोचा होगा कि मैं भजन कीर्तन का कोई नुस्खा बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई माला फेरने की तरकीब बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई आपको ताबीज दे दूंगा जिसको बांधकर आप परमात्मा से मिल

जाएंगे, नहीं, ऐसी कोई बात मैं आपको नहीं बता सकता हूं। ऐसे बताने वाले सब बेईमान हैं, धोखेबाज हैं। समाज को उन्होंने बहुत बर्बाद किया है। समाज की जिंदगी को समझने के लिए मनुष्य के पूरे विज्ञान को समझना जरूरी है। परिवार को, दंपति को, समाज को¬उसकी पूरी व्यवस्था को समझना जरूरी है कि कहां क्या गड़बड़ हुई है। अगर सारी दुनिया यह तय कर ले कि हम पृथ्वी को एक प्रेम का घर बनाएगे, झूठे विवाह का नहीं। वैसे प्रेम से विवाह निकले वह अलग बात है। जितनी कठिनाइयां होंगी, मुश्किल होंगी, अव्यवस्था होगी उसको सम्हालने का हम कोई उपाय खोजेंगे, उस पर विचार करेंगे लेकिन दुनिया से हम यह अप्रेम का जो जाल है उसको तोड़ देंगे और प्रेम की एक दुनिया बनाएंगे तो शायद पूरी मनुष्य जाति बच सकती है और स्वस्थ हो सकती है।

मैं यह भी कहना चाहता हूं कि अगर सार जगत में प्रेम के केंद्र पर परिवार बन जाए तो जो कल्पना हजारों वर्षों से रही है, आदमी को महामानव (ेनचमतउंद) बनाने की, वह जो नीत्से कल्पना करता है और अरविंदा कल्पना करते हैं, वह कल्पना पूरी हो सकती है। लेकिन न तो अरविंद की प्रार्थनाओं से और न नीत्से के द्वारा पैदा किए गए फैसिज्म से वह सपना पूरा हो सकता है। अगर पृथ्वी पर हम प्रेम की प्रतिष्ठा को वापस लौट लाए। अगर प्रेम जीवन में वापस लौट आए, सम्मानित हो जाए और प्रेम एक आध्यात्मिक मूल्य ले ले तो नए मनुष्य का निर्माण हो सकता है¬नयी संतति का, नयी पीढ़ियों का, नए आदमी का। और वह आदमी, वह बच्चा, वह भ्रम जिसका पहला अणु प्रेम से जन्मेगा विश्वास किया जा सकता है, आश्वासन दिया जा सकता है कि उसकी अंतिम श्वास परमात्मा में निकलेगी।

प्रेम है प्रारंभ, परमात्मा है अंत। वह अंतिम सीढ़ी है। जो प्रेम को ही नहीं पता है वह परमात्मा को तो पा ही नहीं सकता, यह असंभावना है। लेकिन जो प्रेम में दीक्षित हो जाता है और प्रेम में विकसित हो जाता है, और प्रेम के प्रकाश में चलता है और प्रेम के फूल जिसकी श्वास बन जाते हैं, और प्रेम जिसका अणु-अणु बन जाता है और जो प्रेम में बढ़ता जाता है, एक दिन वह पाता है कि प्रेम की जिस गंगा में वह चला था वह गंगा अब किनारे छोड़ रही है और सागर बन रही है। एक दिन वह पाता है, कि गंगा के किनारे मिटते जाते है और अनंत सागर आ गया सामने। छोटी सी गंगा की धारा थी गंगोत्री में, छोटी सी प्रेम की धारा होती है शुरु में। फिर वह बढ़ती है, फिर वह बड़ी होती है, फिर वह पहाड़ों और मैदानों को पार करती है। और एक वक्त आता है कि किनारे छूटने लगते हैं। जिस दिन प्रेम के किनारे छूट जाते हैं उसी दिन प्रेम परमात्मा बन जाता है। जब तक प्रेम के किनारे होते हैं तब तक वह परमात्मा नहीं होता। गंगा, नदी रहती है जब तक वह इस जमीन के किनारे से बंधी होती है फिर किनारे छूटते हैं और सागर से मिल जाती है। फिर वह सागर ही हो जाती है।

प्रेम की सरिता है और परमात्मा का सागर है। लेकिन हम प्रेम की सरिता ही नहीं हैं हम प्रेम की नदिया ही नहीं हैं, और हम बैठे हैं हाथ जोड़े और प्रार्थनाएं कर रहे हैं कि हमको भगवान चाहिए! जो सरिता नहीं है वह सागर को कैसे पाएगा? सारी मनुष्य जाति के लिए पूरा आंदोलन चाहिए। पूरी मनुष्य जाति के आमूल परिवर्तन की जरूरत है। पूरा परिवार बदलने की जरूरत है। बहुत कुरूप है हमारा परिवार। वह बहुत सुंदर हो सकता है लेकिन केवल प्रेम के केंद्र पर ही। पूरे समाज को बदलने की जरूरत है और तभी एक धार्मिक मनुष्यता पैदा हो सकती है।

प्रेम प्रथम, परमात्मा अंतिम। क्यों प्रेम परमात्मा पर पहुंच जाता है? क्योंकि प्रेम है बीज और परमात्मा है वृक्ष। प्रेम का बीज ही फिर फूटता है और वृक्ष बन जाता है। सारी दुनिया की स्त्रियों से मेरा कहने का यह मन होता है, और खासकर स्त्रियों से, क्योंकि पुरुष के लिए प्रेम और बहुत सी जीवन की दिशाओं में एक दिशा है जब कि स्त्री के लिए प्रेम अकेली दिशा है। पुरुष के लिए प्रेम और बहुत से आयामों में एक आयाम है। उसके और के लिए प्रेम और बहुत से जीवन आयामों में एक आयाम है उसके और भी आयाम हैं व्यक्तित्व के, लेकिन स्त्री का एक ही आयाम, एक ही दिशा है और वह है प्रेम। स्त्री पूरी प्रेम है। पुरुष प्रेम भी है और दूसरी चीज भी है। अगर स्त्री का प्रेम विकसित हो और वह समझे प्रेम की कीमिया, प्रेम की रसायन तो वह बच्चों को दीक्षा दे सकती है प्रेम की। और गति दे सकती हैं प्रेम के आकाश में उठने की। उनके पंखों को वह मजबूत कर सकती है। लेकिन अभी तो हम काट देते हैं पंख। विवाह की जमीन पर सरको! प्रेम के आकाश में मत

उड़ना! जरूर आकाश में उड़ना जोखिम होता है और जमीन पर चलना आसान है। लेकिन जो जोखिम नहीं उठाते हैं वे जमीन पर रेंगने वाले कीड़े हो जाते हैं और जो जोखिम उठाते हैं वे दूर अनंत आकाश में उड़ने वाले बाज पक्षी सिद्ध होते हैं।

आदमी रेंगता हुआ कीड़ा हो गया है क्योंकि हम सिखा रहे हैं, कोई भी जोखिम (त्पो) न उठाना, कोई खतरा (क्ंदहमत) मत उठाना! अपने घर का दरवाजा बंद करो और जमीन पर सरको! आकाश मग मत उड़ना! जबकि होना यह चाहिए कि हम प्रेम की जोखिम सिखाए, प्रेम का खतरा सिखाए, प्रेम का अभय सिखाए और प्रेम के आकाश में उड़ने के लिए उनके पंखों को मजबूत करें और चारों तरफ जहां भी प्रेम पर हमला होता हो उसके खिलाफ खड़े हो जाए, प्रेम को मजबूत करें, ताकत दें।

प्रेम के जितने दुश्मन खड़े हैं, दुनिया में उनमें नीतिशास्त्री भी हैं, हालांकि थोथे हैं वे नीतिशास्त्री, क्योंकि प्रेम के विरोध में जो हो वह क्या खाक नीतिशास्त्री होगा! साधु संन्यासी खड़े हैं प्रेम के विरोध में, क्योंकि वे कहते हैं कि सब पाप है, यह सब बंधन है, इसको छोड़ो और परमात्मा की तरह चलो। हद हो गई। जो आदमी कहता है कि प्रेम को छोड़कर परमात्मा की तरफ चलो, वह परमात्मा का शत्रु है, क्योंकि प्रेम के अतिरिक्त तो परमात्मा की तरफ जाने का कोई रास्ता ही नहीं है। बड़े बूढ़े भी खड़े हैं प्रेम के विपरीत क्योंकि उनका अनुभव कहता है कि प्रेम खतरा है। लेकिन अनुभव लोगों से जरा सावधान रहना क्योंकि जिंदगी में कभी कोई नया रास्ता वे नहीं बनने देते। वे कहते हैं कि पुराने रास्ते का हमें अनुभव है, हम पुराने रास्ते पर चले हैं, उसी पर सबको चलना चाहिए। लेकिन जिंदगी को रोज नया रास्ता चाहिए। जिंदगी रेल की पटरियों पर दौड़ती हुई रेलगाड़ी नहीं है कि बनी पटरियां पर दौड़ती रहे। और अगर दौड़ेगी तो एक मशीन हो जाएगी। जिंदगी तो एक सरिता है जो रोज एक नया रास्ता बना लेती है¬पहाड़ों में, मैदानों में, जंगलों में। अनूठे रास्ते से निकली है, अनजान जगत में प्रवेश करती है और सागर तक पहुंच जाती है।

नारियों के सामने आज एक ही काम है। वह काम यह नहीं है कि अनाथ बच्चों को पढ़ा रहीं है बैठकर। तुम्हारे बच्चे भी तो सब अनाथ हैं। नाम के लिए वे तुम्हारे बच्चे हैं। न उनकी मां है, न उनका बाप। समाज सेवक स्त्रियां सोचती हैं कि अनाथ बच्चों का अनाथालय खो दिया तो बहुत बड़ा काम कर दिया। उनको पता नहीं कि उनके बच्चे भी अनाथ ही हैं। तुम दूसरों के अनाथ बच्चे को शिक्षा देने जा रही हो तो पागल हो। तुम्हारे बच्चे खुद अनाथ (वतचींदस) हैं। कोई नहीं हैं उनका, न तुम हो, न तुम्हारे पति। न उनकी मां है और न उनको कोई है, क्योंकि वह प्रेम ही नहीं है जो उनको सनाथ बनाता। सोचते हैं हम आदिवासी बच्चों को जाकर शिक्षा दे दें। वहां तुम जाकर आदिवासी बच्चों को शिक्षा दो और यहां तुम्हारे बच्चे धीरे-धीरे आदिवासी हुए चले जा रहे हैं! ये जो बीटल हैं, बीटनिक हैं, फलां हैं ढिकां हैं, फिर से आदमी के आदिवासी होने की शकलें हैं। तुम सोचते हो, स्त्रियां सोचती हैं कि जाए और सेवा करें। जिस समाज में प्रेम नहीं है उस समाज में सेवा कैसे हो सकती है? सेवा तो प्रेम की सुगंध है।

बस आज तो यही कहना चाहूंगा। आज तो सिर्फ एक धक्का आपको दे देना चाहूंगा ताकि आपके भीतर चिंतन शुरू हो जाए। हो सकता है मेरी बातें आपको बुरी लगें। लगें तो बहुत अच्छा है। हो सकता है मेरी बातों से आपको चोट लगे, तिलमिलाहट पैदा हो। भगवान करें जितनी ज्यादा हो जाए उतना अच्छा, क्योंकि उससे कुछ सोच विचार पैदा होगा। हो सकता है मेरी सब बातें गलत हों इसलिए मेरी बात मान लेने की कोई भी जरूरत नहीं है, लेकिन मैंने जो कहा है उस पर आप सोचना। मैं फिर दोहरा देता हूं उन दो चार सूत्रों को और अपनी बात पूरी किए देता हूं।

आज तक का मनुष्य का समाज प्रेम के केंद्र पर निर्मित नहीं है इसी लिए विक्षिप्त है, पागलपन है, युद्ध हैं, आत्माएं हैं, अपराध हैं। प्रेम की जगह आदमी के एक झूठा स्थानापन्न (ढेमनकव ेनइेजपजनजम) विवाद ईजाद कर लिया है। विवाह के कारण वेश्याएं हैं, गुंडे हैं। विवाह के कारण शराब है, विवाह के कारण बेहोशिया है। विवाह के कारण भागे हुए संन्यासी हैं। विवाह के कारण मंदिरों में भजन करने वाले झूठे लोग हैं। जब तक विवाह है तब तक यह रहेगा। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि विवाह मिट जाए, मैं यह कह रहा हूं कि विवाह प्रेम से निकले। विवाह से प्रेम नहीं निकलता है, प्रेम से

विवाह निकले तो शुभ है। विवाह से यदि प्रेम की निकालने की कोशिश भी की जाए तो वह प्रेम झूठा होगा, क्योंकि जबरदस्ती कभी भी कोई प्रेम नहीं निकाला जा सकता है। प्रेम तो निकलता है या नहीं निकलता है। जबरदस्ती नहीं निकाला जा सकता है।

तीसरी बात मैंने यह कहीं कि जो मां बाप प्रेम से भरे हुए नहीं हैं उनके बच्चे जन्म से ही विकृत (ढमतअमतजमक) एग्न्नार्मल, रुग्ण और बीमार पैदा होंगे। मैंने यह भी कहा कि जो मां बाप, जो पति पत्नी, जो प्रेम युगल प्रेम से संभोग में लीन नहीं होते हैं वे केवल उन बच्चों को पैदा करेंगे जो शरीरवादी होंगे, भौतिकवादी होंगे जिनकी जीवन की आंख पदार्थ से ऊपर कभी नहीं उठेगी, जो परमात्मा को देखने के लिए अंधे पैदा होंगे। आध्यात्मिक रूप से अंधे बच्चे हम पैदा कर रहे हैं।

मैंने चैथी बात आपसे यह कही कि मां बाप अगर एक दूसरे को प्रेम करते हैं तो ही वे बच्चों की मां बनेंगी, बाप बनेंगे क्योंकि बच्चे उनकी ही प्रतिध्वनियां हैं, वे आया हुआ नया बसंत हैं, वे फिर से जीवन के दरख्त पर लगी हुई कोंपलें हैं। लेकिन जिसने पुराने बसंत का ही प्रेम नहीं किया वह नए बसंत को कैसे प्रेम करेगा?

और अंतिम बात मैंने यह कि प्रेम शुरुआत है और परमात्मा शिखर। प्रेम में जीवन शुरु हो तो परमात्मा में पूर्ण होता है। प्रेम बीज बने तो परमात्मा अंतिम वृक्ष की छाया बनता है। प्रेम गंगोत्री हो तो परमात्मा का सागर उपलब्ध होता है।

जिसके भी मन की कामना हो कि परमात्मा तक जाए वह अपने जीवन को प्रेम के गीत से भर ले। और जिसकी भी आकांक्षा हो कि पूरी मनुष्यता परमात्मा के जीवन से भर जाए, वह मनुष्यता को प्रेम की तरफ ले जाने के मार्ग पर जितनी बाधाएं हों उनको तोड़े, मिटाए और प्रेम को उन्मुक्त आकाश दे ताकि एक दिन नए मनुष्य का जन्म हो सके।

पुराना मनुष्य रुग्ण था, कुरुप था, अशुभ था। पुराने मनुष्य ने अपने आत्मघात का इंतजाम कर लिया है। वह आत्महत्या कर रहा है। सारे जगत में वह एक साथ आत्मघात कर लेगा। जागतिक आत्मघात। (न्नदपअमतेंस एनपबपकम) का उसने उपाय कर लिया है। लेकिन अगर मनुष्य को बचाना है तो प्रेम की वर्षा, प्रेम की भूमि और प्रेम के आकाश को निर्मित कर लेना जरुरी है।

ध्यान सूत्र-2

मेरे प्रिय आत्मन्,

रात्रि को साधना की प्रारंभिक भूमिका कैसे बने, उस संबंध में थोड़ी-सी बातें आपसे कही हैं। साधना की जो दृष्टि मेरे मन में है, वह किन्हीं शास्त्रों पर, किन्हीं ग्रंथों पर, किसी विशेष संप्रदाय पर आधारित नहीं है। जैसा मैंने अपने भीतर चलकर जाना है, उन रास्तों की बात भर आपसे कर रहा हूं। इसलिए मेरी बात कोई सैद्धांतिक बात नहीं है। उस पर जब मैं आपसे कह रहा हूं कि आप चलें और देखें, तो मुझे रत्तीभर भी ऐसा खयाल नहीं है कि आप चलेंगे, तो जो पाने की आपकी कल्पना है, उसे आप नहीं पा सकेंगे। इसलिए यह आश्वासन और विश्वास है कि जिन रास्तों पर मैंने प्रवेश करके देखा है, केवल उनकी ही आपसे बात कर रहा हूं।

एक बहुत पीड़ा और संताप के समय को मैंने गुजारा। बहुत चेष्टा के, बहुत प्रयत्न के समय को गुजारा। उस समय बहुत कोशिश, बहुत प्रयत्न करता था अंतस प्रवेश के। बहुत रास्तों से, बहुत पद्धतियों से उस तरफ जाने की बड़ी संलग्न चेष्टा की। बहुत पीड़ा के दिन थे और बहुत दुख और परेशानी के दिन थे। लेकिन सतत प्रयास से, और जैसे पर्वत से कोई झरना गिरता हो और गिरता ही चला जाए, तो नीचे की चट्टानें भी टूट जाती हैं, वैसे ही सतत प्रयास से किसी क्षण में कोई प्रवेश हुआ। उस प्रवेश को जिस रास्ते से मैंने संभव पाया, सिर्फ उसी रास्ते की आपसे बात कर रहा हूं। और इसलिए बहुत आश्वासन और बहुत विश्वास से आपको कह सकता हूं कि यदि प्रयोग किया, तो परिणाम सुनिश्चित है। तब एक दुख था, तब एक पीड़ा थी, अब वैसा कोई दुख और वैसी कोई पीड़ा मेरे भीतर नहीं है।

कल मुझे कोई पूछता था कि इतनी समस्याएं लोग आपके सामने रखते हैं, तो आप परेशान नहीं होते? मैंने उन्हें कहा, समस्या अपनी न हो, तो परेशानी का कोई कारण नहीं होता। समस्या दूसरे की हो, तो कोई परेशानी नहीं होती है। समस्या अपनी हो, तो परेशानी शुरू हो जाती है। मेरी कोई समस्या इस अर्थों में नहीं है। लेकिन एक नए तरह का दुख अब जीवन में प्रविष्ट हो गया। और वह दुख यह है कि मैं अपने चारों तरफ जिन लोगों को भी देखता हूं, उन्हें इतनी परेशानी में और इतनी पीड़ा में अनुभव करता हूं, जब कि मुझे लगता है, उनके हल इतने आसान हैं! जब कि मुझे लगता है कि वे द्वार खटखटाएंगे और द्वार खुल जाएगा; और वे द्वार पर खड़े ही रो रहे हैं! तो एक बहुत नए किस्म के दुख और पीड़ा का अनुभव होता है।

एक छोटी-सी पारसी कहानी मैं पढ़ता था। एक अंधा आदमी और उसका एक मित्र एक रेगिस्तान को पार करते थे। वे दोनों अलग-अलग यात्रा पर निकले थे, रास्ते में मिलना हो गया और वह आंख वाला आदमी उस अंधे आदमी को अपने साथ ले लिया। वे कुछ दिन साथ-साथ चले, उनमें मैत्री घनी हो गयी।

एक दिन सुबह अंधा आदमी पहले उठ गया, सुबह उसकी नींद पहले खुल गयी। उसने टटोलकर अपनी लकड़ी ढूंढी। मरुस्थल की रात थी और ठंड के दिन थे। लकड़ी तो उसे नहीं मिली, एक सांप पड़ा हुआ था, जो ठंड के मारे एकदम सिकुड़कर कड़ा हो गया था। उसने उसे उठा लिया। उसने भगवान को धन्यवाद दिया कि मेरी लकड़ी तो खो गयी, लेकिन उससे बहुत ज्यादा बेहतर, बहुत चिकनी और बहुत सुंदर लकड़ी मुझे तुमने दे दी। उसने भगवान को धन्यवाद दिया कि तुम बड़े कृपालु हो। उसने उसी लकड़ी से अपने आंख वाले मित्र को धक्का दिया और उठाने की कोशिश की कि उठो, सुबह हो गयी है।

वह आंख वाला मित्र उठा। देखकर घबड़ा गया और उसने कहा कि 'तुम यह क्या हाथ में पकड़े हुए हो? इसे एकदम छोड़ दो। यह सांप है और जीवन के लिए खतरनाक हो जाएगा।' वह अंधा आदमी बोला, 'मित्र,ऱ् ईष्या के वश तुम मेरी इस सुंदर लकड़ी को सांप बता रहे हो! चाहते हो कि मैं इसे छोड़ दूं, तो तुम इसे उठा लो। अंधा जरूर हूं, लेकिन इतना नासमझ नहीं हूं।'

उस आंख वाले आदमी ने कहा, 'पागल हो गए हो? उसे एकदम छोड़ दो। वह सांप है और जीवन का खतरा है।' अंधा आदमी हंसा और बोला, 'तुम इतने दिन मेरे साथ रहे, लेकिन यह न समझ पाए कि मैं भी समझदार हूं। मेरी लकड़ी खो गयी है और परमात्मा ने एक बहुत सुंदर लकड़ी मुझे दे दी है, तो तुम उसे सांप बता रहे हो।'

वह अंधा आदमी गुस्से में, मित्र की इसर् ईष्या और जलन को देखकर, अपने रास्ते पर चल पड़ा। थोड़ी देर में सूरज निकला और उस सांप की सिकुड़न समाप्त हो गयी, उसकी सर्दी मिट गयी। उसमें फिर प्राण का संचार हुआ और उसने उस अंधे आदमी को काट लिया।

मैं जिस दुख की आपको बात कह रहा हूं, वह वही दुख है, जो उस सुबह उस आंख वाले आदमी को उस अंधे मित्र के प्रति हुआ होगा। वैसे ही एक दुख, हमें चारों तरफ जो लोग दिखायी पड़ते हैं, उनके प्रति मुझे अनुभव होता है। वे हाथ में जो लिए हैं, वह लकड़ी नहीं है। वे हाथ में जो लिए हैं, वह सांप है। लेकिन अगर मैं उनको कहूं कि यह सांप है, तो शायद उनके मन में हो, न मालूम किसर् ईष्या के वश, न मालूम किस कारण हमारी लकड़ियों को सांप बताया जा रहा है।

यह मैं किसी और के लिए नहीं कह रहा हूं, यह मैं आपके लिए कह रहा हूं। ऐसा मत सोचना कि आपके पड़ोस में जो बैठे हैं, उनके लिए कह रहा हूं। बिलकुल आपके लिए कह रहा हूं। और आपके सबके हाथों में मुझे सांप दिखायी पड़ते हैं। और आप जिनको भी सहारे समझे हुए हैं और लकड़ियां समझे हुए हैं, वे कोई सहारे नहीं हैं और कोई लकड़ियां नहीं हैं।

लेकिन इसके पहले कि आप रास्ता छोड़कर चले जाएं और समझें कि मैंनेर् ईष्यावश आपकी लकड़ी छीनने के लिए कोई बात कही है, इसलिए एकदम उसे सांप नहीं कहता हूं। आहिस्ता-आहिस्ता आपको समझाने की कोशिश करता हूं कि जो आप पकड़े हुए हैं, वह गलत है। बल्कि यह भी नहीं कहता हूं कि जो पकड़े हुए हैं, गलत है। यही कहता हूं कि कुछ और भी श्रेष्ठ है, जो पकड़ा जा सकता है। किसी और विराट आनंद को पकड़ा जा सकता है। जीवन में किन्हीं और बड़े सत्यों को पकड़ा जा सकता है। जो आप पकड़े हैं, वह आपको डुबाने का कारण हो जाएगा।

जीवनभर हम जो करते हैं, वही हमें डुबा देता है, सारे जीवन को नष्ट कर देता है। और जब जीवन नष्ट हो जाता है, समाप्त हो जाता है, तब हमें जो पीड़ा और परेशानी पकड़ती है मृत्यु के क्षण में, अंतिम दिनों में जो मनुष्य को कष्ट पकड़ लेता है, जो संताप पकड़ लेता है, वह यही होता है कि एक बहुत अदभुत जीवन को मैंने व्यर्थ खो दिया।

तो आज की सुबह मैं सबसे पहले तो यह बात कहूं कि जिस प्यास के लिए मैंने रात को आपको कहा था, वह तभी पैदा होगी आपमें, जब आपको यह दिखाई पड़े और यह अनुभव हो कि जिस जीवन को आप जी रहे हैं, वह एकदम गलत है। उस प्यास का जन्म तभी होगा, जब आप समझें कि आप जिस जीवन को जी रहे हैं, वह गलत है और सार्थक नहीं है।

और क्या यह बहुत कठिन बात है समझ लेना? क्या आप सोचते हैं, जो आप इकट्ठा कर रहे हैं, वह सच में संपत्ति है? क्या आप सोचते हैं कि जो आप इकट्ठा कर रहे हैं, उससे आपको जीवन उपलब्ध होगा? क्या आप सोचते हैं कि जो श्रम आप कर रहे हैं, जिन दिशाओं में, उन दिशाओं में आप रेत पर और पानी पर महल खड़े कर रहे हैं या कि किसी चट्टान पर नींव रख रहे हैं? इसे थोड़ा विचारना, इस पर थोड़ा मनन करना जरूरी है।

जो लोग भी थोड़ा-सा चिंतन और मनन करेंगे जीवन के संबंध में, उनकी प्यास जगनी शुरू हो जाएगी। सत्य की प्यास चिंतन और मनन से पैदा होती है। हममें से बहुत कम लोग जीवन के संबंध में सोचते हैं--बहुत कम लोग। अधिक लोग इस तरह जीते हैं, जैसे कोई लकड़ी के टुकड़े को नदी में बहा दे और वह बहा चला जाए। और लहरें उसे जहां ले जाएं, वहां चला जाए। किनारों पर ले जाएं, तो किनारों पर चला जाए; और मझधार में ले आएं, तो मझधार में आ जाए, जिसका अपना कोई जीवन नहीं होता। एक लकड़ी के टुकड़े की तरह हममें से अधिक लोग जीते हैं। समय और परिस्थितियां जहां ले जाती हैं, हम चले जाते हैं।

जीवन पर मनन और चिंतन इस बात की सूचना बनेगा कि क्या आपको एक लकड़ी के टुकड़े की तरह होना है, जो नदी में बहे? क्या आपको एक सूखे हुए पत्ते की तरह होना है, जिसे हवाएं जहां ले जाएं, वहां चला जाए? या आपको एक

व्यक्ति बनना है, एक इंडिविज़ुअल, एक व्यक्ति और एक सचेतन व्यक्ति, जिसकी अपनी जीवन की दिशा है, जिसने तय किया कि कहां जाना और कहां पहुंचना; और जिसने तय किया कि क्या बनना और क्या होना। जिसने अपने जीवन को अपने हाथ में लिया है और उसके निर्माण को अपने हाथ में लिया है।

मनुष्य की सबसे बड़ी कृति स्वयं मनुष्य है। और मनुष्य का सबसे बड़ा सृजन स्वयं का निर्माण है। और आप कुछ भी बनाएं, वह बनाना किसी काम का नहीं है। वह सब पानी पर खींची गयी लकीरों की तरह एक दिन मिट जाएगा। जो आप अपने भीतर निर्मित करेंगे और अपने को बनाएंगे, तो आप एक चट्टान पर, एक लोहे की चट्टान पर कुछ लिख रहे हैं, जिसके कि फिर निशान कभी मिटते नहीं हैं; जो कि अमिट रूप से आपके साथ होगा।

तो अपने जीवन के बाबत यह विचार करें, आप एक लकड़ी के टुकड़े तो नहीं हैं, जो नदी में बह रहा है? आप दरख्त से पतझड़ में गिर गए एक पत्ते तो नहीं हैं, जो हवाओं में उड़ रहा है? और आप विचार करेंगे, तो आपको दिखायी पड़ेगा, आप एक लकड़ी के टुकड़े हैं; और आपको दिखायी पड़ेगा, पतझड़ में गिर गए एक पत्ते हैं, जिसे हवाएं कहीं भी उड़ा रही हैं। अभी सड़कें उन पत्तों से भरी हुई हैं। और वे पत्ते, जहां भी हवाएं आती हैं, वहीं सरक जाते हैं। आपने जिंदगी में सचेतन विकास किया है, या केवल हवा के धक्कों पर उड़ते रहे हैं? और अगर हवा के धक्कों पर उड़ते रहे हैं, तो क्या कहीं पहुंच सकेंगे? क्या कोई कभी इस तरह पहुंचा है?

जीवन में एक सचेतन लक्ष्य न हो, तो कोई कहीं पहुंचता नहीं। सचेतन लक्ष्य की प्यास इस बात से पैदा होगी कि आप चिंतन करें और मनन करें और विचार करें।

बुद्ध के बाबत आपने सुना होगा। उन्हें जिस बात से विराग हुआ, जिस बात से वे विराग के जीवन में प्रविष्ट हुए, जिस बात से उन्हें सत्य की आकांक्षा पैदा हुई, वह कहानी बड़ी प्रचलित है, बड़ी अर्थपूर्ण है। उनके मां-बाप ने, बचपन में ही उनको कहा गया कि यह व्यक्ति या तो बहुत बड़ा सम्राट होगा, चक्रवर्ती होगा या बहुत बड़ा संन्यासी होगा। उनके पिता ने सारी व्यवस्था की उनकी सुख-सुविधा की कि उन्हें कोई दुख दिखायी भी न पड़े, जिससे कि संन्यास पैदा हो। उनके पिता ने उनके लिए मकान बनवाए, उस समय की सारी कला और कौशल सहित। उन्होंने सारी व्यवस्था की बगीचों की। हर मौसम के लिए अलग भवन बनाया और आज्ञा दी परिचारकों को कि एक कुम्हलाया हुआ फूल भी गौतम को दिखायी न पड़े, सिद्धार्थ को दिखायी न पड़े। उसे यह खयाल न आ जाए कहीं कि फूल मुर्झा जाता है, कहीं मैं तो न मुर्झा जाऊंगा?

तो रात उनके बगीचे से सारे कुम्हलाए फूल और पत्ते अलग कर दिए जाते थे। जो दरख्त थोड़े भी कमजोर हो जाते, वे उखाड़कर अलग कर दिए जाते थे। उनके आस-पास युवक और युवतियां इकट्ठी थीं, कोई वृद्ध नहीं प्रवेश पाता था; कहीं सिद्धार्थ को यह विचार न उठ आए कि लोग बूढ़े हो जाते हैं, कहीं मैं तो बूढ़ा न हो जाऊंगा? जब तक वे युवा हुए, उन्हें पता नहीं था कि मृत्यु भी होती है। उन तक कोई खबर मृत्यु की नहीं पहुंचायी जाती थी। उनके गांव में लोग मरते भी हैं, इससे उन्हें बिलकुल अपरिचित रखा गया; कहीं उन्हें यह चिंतन पैदा न हो जाए कि लोग मरते हैं, तो मैं भी तो नहीं मर जाऊंगा?

मैं चिंतन का मतलब समझा रहा हूं। चिंतन का मतलब यह है कि चारों तरफ जो घटित हो रहा है, उस पर विचार करिए। मृत्यु घटित हो रही है, तो सोचिए कि मैं तो नहीं मर जाऊंगा? बुढ़ापा घटित हो रहा है, तो सोचिए कि मैं तो बूढ़ा नहीं हो जाऊंगा?

चिंतन न पैदा हो जाए बुद्ध में, इसलिए उनके पिता ने सारा उपाय किया। और मैं चाहता हूं कि आप सारा उपाय करें कि चिंतन पैदा हो जाए। उन्होंने उपाय किया कि चिंतन पैदा न हो जाए, लेकिन चिंतन पैदा हुआ।

एक दिन बुद्ध गांव से निकले और राह पर उन्होंने देखा, एक बूढ़ा आदमी चला आता है। उन्होंने अपने सारथी को पूछा, 'इस आदमी को क्या हो गया है? ऐसा आदमी भी होता है?' सारथी ने कहा, 'झूठ मैं कैसे बोलूं? हर आदमी अंत में ऐसा ही हो जाता है।' बुद्ध ने तत्क्षण पूछा, 'मैं भी?' उस सारथी ने कहा, 'भगवन, झूठ मैं कैसे कहूं? कोई भी अपवाद नहीं है।'

बुद्ध ने कहा, 'वापस लौट चलो। मैं बूढ़ा हो गया।' बुद्ध ने कहा, 'वापस लौट चलो, मैं बूढ़ा हो गया। अगर कल हो ही जाना है, तो बात समाप्त हो गयी।'

इसको मैं चिंतन कहता हूं।

लेकिन सारथी ने कहा, 'हम एक युवक महोत्सव में जा रहे हैं। सारे गांव के लोग प्रतीक्षा करेंगे, इसलिए चलें।' बुद्ध ने कहा, 'अब चलने में कोई रस न रहा। युवक महोत्सव व्यर्थ है, क्योंकि बुढ़ापा आता है।' लेकिन वे गए। और आगे बढ़े और उन्होंने देखा, एक अर्थी लिए जाते हैं लोग, कोई मर गया है। बुद्ध ने पूछा, 'यह क्या हुआ? ये लोग क्या करते हैं? ये कंधों पर किस चीज को लिए हैं?' सारथी ने कहा, 'कैसे कहूं! आज्ञा नहीं। लेकिन असत्य न बोल सकूंगा। यह आदमी मर गया। एक आदमी मर गया है, उसे लोग लिए जाते हैं।' बुद्ध ने पूछा, 'मरना क्या है?' और उन्हें पहली दफा पता चला, एक दिन जीवन की सरिता सूख जाती है और आदमी मर जाता है। बुद्ध ने कहा, 'अब बिलकुल वापस लौट चलो। मैं मर गया। यह आदमी नहीं मरा, मैं मर गया।'

इसको मैं चिंतन कहता हूं। वह आदमी चिंतन और मनन में समर्थ हुआ है, जिसने दूसरे पर जो घटा है, उससे समझा और जाना है कि वह उस पर भी घटित होगा। वे लोग अंधे हैं, जो चारों तरफ जो घटित हो रहा है, उसे नहीं देख रहे हैं। और इस अर्थ में हम सब अंधे हैं। और इसलिए मैंने वह कहानी कही, अंधे आदमी की, जो सांप को हाथ में लिए चलता है।

इसलिए आपके लिए पहली जो बहुत महत्वपूर्ण बात है, वह यह कि आंख खोलकर चारों तरफ देखिए, क्या घटित हो रहा है! और उस घटित होने से चिंतन पैदा होगा, मनन पैदा होगा। और वह मनन प्यास देगा और किसी विराट सत्य को जानने की।

यह, इस पीड़ा को बहुत मैंने अनुभव किया। वह पीड़ा गयी; और उसके जाने में जिन सीढ़ियों को मुझे दिखायी पड़ना शुरू हुआ, उन सीढ़ियों में पहली सीढ़ी की आज मैं चर्चा करूंगा।

ऐसा मुझे दिखायी पड़ता है कि परम जीवन या परमात्मा या आत्मा या सत्य को पाने के लिए दो बातें जरूरी हैं। एक बात तो जरूरी है, जो परिधि की जरूरत है। समझें, साधना की परिधि। और एक बात जरूरी है, जिसको हम कहेंगे साधना का केंद्र। साधना की परिधि और साधना का केंद्र। या साधना का शरीर और साधना की आत्मा। साधना की परिधि पर आज मैं चर्चा करूंगा; और कल साधना की आत्मा पर या साधना के केंद्र पर; और परसों साधना के परिणाम पर। ये तीन ही बातें हैं--साधना की परिधि, साधना का केंद्र और साधना का परिणाम। या यूं कह सकते हैं कि साधना की भूमिका, साधना और साधना की सिद्धि।

साधना की भूमिका या साधना की परिधि में आपकी जो परिधि है, वही संबंधित होती है। आपके व्यक्तित्व की परिधि आपका शरीर है। साधना की परिधि भी आपका शरीर है। साधना का बिलकुल प्रारंभिक चरण आपके शरीर पर रखना होता है।

इसलिए एक बात स्मरण रखें कि शरीर के संबंध में अगर सुनी-सुनायी कोई बुरी भावना मन में हो, उसे फेंक दें। शरीर मात्र साधन है, संसार का भी और सत्य का भी। शरीर न शत्रु है, न मित्र है; शरीर मात्र साधन है। आप चाहें तो उससे पाप करें और चाहें तो पुण्य करें। चाहें तो संसार में प्रविष्ट हो जाएं और चाहें तो परमात्मा में प्रवेश पा लें। शरीर मात्र साधन है। उसके संबंध में कोई दुर्भाव मन में न रखें। ऐसी बहुत-सी बातें प्रचलित हो गयी हैं कि शरीर दुश्मन है, और शरीर पाप है, और शरीर बुरा है, और शत्रु है, और इसका दमन करना है। वे मैं आपको कहूं, गलत हैं। न शरीर शत्रु है, न शरीर मित्र है। आप उसका जैसा उपयोग करते हैं, वही वह साबित हो जाता है। और इसलिए शरीर बड़ा अदभुत है! शरीर बड़ा अदभुत है। दुनिया में जो भी बुरा हुआ है, वह भी शरीर से हुआ है; और जो भी शुभ हुआ है, वह भी शरीर से हुआ है। शरीर केवल एक उपकरण है, एक यंत्र है।

साधना भी जरूरी है कि शरीर से शुरु हो, क्योंकि बिना इस यंत्र को व्यवस्थित किए आगे कोई भी नहीं बढ़ सकता। शरीर को बिना व्यवस्थित किए कोई आगे नहीं बढ़ सकता। तो पहला चरण है, शरीर-शुद्धि। शरीर जितना शुद्ध होगा, उतना अंतस में प्रवेश में सहयोगी हो जाएगा।

शरीर-शुद्धि के क्या अर्थ हैं? शरीर-शुद्धि का पहला तो अर्थ है, शरीर के भीतर, शरीर के संस्थान में, शरीर के यंत्र में कोई भी रुकावट, कोई भी ग्रंथि, कोई भी कांप्लेक्स न हो, तब शरीर शुद्ध होता है।

समझें, शरीर में कैसे कांप्लेक्स और ग्रंथियां पैदा होती हैं। अगर शरीर बिलकुल निर्ग्रंथ हो, उसमें कोई ग्रंथि न हो, उसमें कोई उलझन न हो, शरीर में कहीं कोई अटकाव न हो, तो शरीर शुद्ध स्थिति में होता है और अंतस प्रवेश में सहयोगी हो जाता है। अगर आप बहुत क्रुद्ध होंगे, क्रोध करेंगे और क्रोध को प्रकट न कर पाएंगे, तो उस क्रोध की जो ऊष्मा और गर्मी पैदा होगी, वह शरीर के किसी अंग में ग्रंथि पैदा कर देगी।

आपने देखा होगा, क्रोध में हिस्टीरिया आ सकता है, क्रोध में कोई बीमारी आ सकती है। भय में कोई बीमारी आ सकती है। अभी जो सारे प्रयोग चलते हैं स्वास्थ्य के ऊपर, उनसे ज्ञात होता है कि सौ बीमारियों में कोई पचास बीमारियां शरीर में नहीं होतीं, मन में होती हैं। लेकिन मन की बीमारियां शरीर में ग्रंथि पैदा कर देती हैं। और शरीर में अगर ग्रंथियां पैदा हो जाएं, शरीर में अगर गांठें पैदा हो जाएं, तो शरीर का संस्थान जकड़ जाता है और अशुद्ध हो जाता है।

तो शरीर-शुद्धि के लिए सारे योग ने, सारे धर्मों ने बड़े अदभुत और क्रांतिकारी प्रयोग किए हैं। और उन प्रयोगों को थोड़ा समझना जरूरी है। और अगर अपने शरीर पर आप करते हैं, तो आप थोड़े ही दिनों में हैरान हो जाएंगे, यह शरीर तो बड़ी अदभुत जगह है, बड़ी अदभुत बात है। और तब यह आपको शत्रु न मालूम होगा, बल्कि मंदिर मालूम होगा, जिसके भीतर परमात्मा विराजमान है। तब यह दुश्मन नहीं मालूम होगा, यह बड़ा साथी मालूम होगा और आप इसके प्रति अनुगृहीत होंगे। क्योंकि शरीर आपका नहीं है, पदार्थ से बना है। आप भिन्न हैं और शरीर भिन्न है। फिर भी आप इसका अदभुत उपयोग कर सकते हैं। और तब आप शरीर के प्रति बड़ा ग्रेटिटयूड, बड़ी कृतज्ञता अनुभव करेंगे कि शरीर इतना साथ दे रहा है!

तो शरीर में ग्रंथियां पैदा न हों, यह शरीर-शुद्धि के लिए पहला चरण है। पर शरीर में हमारे बहुत ग्रंथियां हैं। अब जैसे मैं आपको कहूं, अभी कुछ दिन हुए, एक व्यक्ति मेरे पास आए। वे मुझसे बोले कि 'मैं बहुत दिन से कुछ किसी धर्म की साधना करता हूं। मन बड़ा शांत हो गया है।' मैंने उनसे कहा कि 'मुझे आपका मन शांत दिखायी नहीं पड़ता।' वे बोले, 'आप कैसे कह सकते हैं?' मैंने उनसे कहा कि 'जितनी देर से आप आए हैं, आपके दोनों पैर इतने हिल रहे हैं।' वे दोनों पैरों को, बैठे हैं और जोर से हिला रहे हैं। मैंने उनसे कहा, 'यह असंभव है कि मन शांत हो और पैर इस भांति हिलें।'

शरीर में जो भी कंपन हैं, वे मन के कंपन से पैदा होते हैं। मन का कंपन जितना कम होने लगता है, शरीर उतना थिर मालूम होने लगेगा। ये बुद्ध और महावीर की मूर्तियां, जो बिलकुल पत्थर जैसी मालूम होती हैं, ये आदमी भी बैठे होते, तो भी ऐसे ही मालूम होते थे। ये मूर्तियां ही पत्थर जैसी नहीं मालूम होतीं, इन आदमियों को भी आपने देखा होता, तो ये बिलकुल पत्थर जैसे मालूम होते। हमने इनकी पत्थर की मूर्तियां व्यर्थ ही नहीं बनायीं, उसके पीछे कारण था। ये बिलकुल पत्थर जैसे ही मालूम होने लगे थे। इनके भीतर कंपन विलीन हो गए थे। या कि कंपन सार्थक थे, जब उनकी जरूरत थी, होते थे; अन्यथा वे विलीन थे।

आप जब पैर हिला रहे हैं, तो आपके भीतर अशांति से जो एनर्जी पैदा हो रही है, जो शक्ति पैदा हो रही है, उसे निकालने का कोई रास्ता न पाकर, पैर में कंपित होकर वह निकल रही है। जब एक आदमी क्रोध में होता है, उसके दांत भिंच जाते हैं और मुट्ठियां बंध जाती हैं। क्यों? उसकी आंखों में खून उतर आता है। क्यों? आखिर मुट्ठियां बंधने से क्या प्रयोजन है? अगर आप अकेले में भी किसी पर क्रुद्ध होंगे, तो भी मुट्ठियां बंध जाएंगी। वहां तो कोई मारने को भी नहीं,

जिसको आप मारें। लेकिन जो शक्ति क्रोध से पैदा हो रही है, उसका निष्कासन कैसे होगा? हाथ के स्नायु खिंचकर उस शक्ति को व्यय कर देते हैं।

सभ्यता ने बहुत दिक्कत पैदा कर दी है। असभ्य आदमी का शरीर हमसे ज्यादा शुद्ध होता है। एक जंगली आदमी का शरीर हमसे बहुत शुद्ध होता है, उसमें ग्रंथियां नहीं होतीं, क्योंकि उसके भावावेग वह सहज प्रकट कर देता है। लेकिन हम अपने भावावेगों को दबा लेते हैं।

समझ लीजिए, आप दफ्तर में हैं और मालिक ने कुछ कहा। आपको क्रोध तो आया, लेकिन आप मुट्ठियां नहीं भींच सकते। वह जो शक्ति पैदा हुई है, उसका क्या होगा? शक्ति नष्ट नहीं होती, स्मरण रखिए। कोई शक्ति नष्ट नहीं होती। अगर आपने मुझे गाली दी और मुझे क्रोध आ गया, लेकिन यहां इतने लोग थे कि मैं उसे प्रकट नहीं कर सका, न मैं दांत भींच सका, न मैं हाथ खींच सका, न मैं गाली बक सका, न मैं गुस्से में कूद सका, न मैं पत्थर उठा सका। तो उस शक्ति का क्या होगा, जो मेरे भीतर पैदा हो गयी? वह शक्ति मेरे शरीर के किसी अंग को क्रिपल्ड कर देगी। और उसको क्रिपल्ड करने में, उसको विकृत करने में व्यय हो जाएगी। एक ग्रंथि पैदा होगी।

शरीर की ग्रंथियों का मेरा मतलब यह है। शरीर में हमारे बहुत ग्रंथियां पैदा हो जाती हैं। और आप शायद हैरान होंगे, आप कहेंगे, ऐसी तो हमें कुछ ग्रंथियां पता नहीं हैं! तो मैं आपको एक प्रयोग करने को कहता हूं। आप देखें, फिर आपको पता चलेगा कि कितनी ग्रंथियां हैं।

क्या आपने कभी खयाल किया है कि अकेले किसी कमरे में आप जोर से दांत बिचकाने लगे हैं, या आईने में जीभ दिखाने लगे हैं, या गुस्से से आंख फाड़ने लगे हैं! और आप अपने पर भी हंसे होंगे कि यह मैं क्या कर रहा हूं! हो सकता है, स्नानगृह में आप नहा रहे हैं और आप अचानक कूदे हैं। आप हैरान होंगे कि मैं क्यों कूदा हूं? या मैंने आईने में देखकर दांत क्यों बिचकाए हैं? या मेरा जोर से गुनगुनाने का मन क्यों हुआ है?

मैं आपको कहूं, किसी दिन आधा घंटे को सप्ताह में एक एकांत कमरे में बंद हो जाएं और आपका शरीर जो करना चाहे, करने दें। आप बहुत हैरान होंगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे। जो करना चाहे, करने दें। आप उसे बिलकुल न रोकें। और आप बहुत हैरान होंगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे। हो सकता है, आप कूदें। हो सकता है, आप चिल्लाएं। हो सकता है, आप किसी काल्पनिक दुश्मन पर टूट पड़ें। यह हो सकता है। और तब आपको पता चलेगा कि यह क्या हो रहा है! ये सारी ग्रंथियां हैं, जो दबी हुई हैं और मौजूद हैं और निकलना चाहती हैं, लेकिन समाज नहीं निकलने देता है और आप भी नहीं निकलने देते हैं।

ऐसा शरीर बहुत-सी ग्रंथियों का घर बना हुआ है। और जो शरीर ग्रंथियों से भरा हुआ है, वह शरीर शुद्ध नहीं होता, वह भीतर प्रवेश नहीं कर सकता। तो योग का पहला चरण होता है, शरीर-शुद्धि। और शरीर-शुद्धि का पहला चरण है, शरीर की ग्रंथियों का विसर्जन। तो नयी ग्रंथियां तो बनाएं नहीं और पुरानी ग्रंथियां विसर्जन करने का उपाय करें। और उसके उपाय के लिए जरूरी है कि महीने में एक बार, दो बार अकेले कमरे में बंद हो जाएं और शरीर जैसा करना चाहे, करने दें। अगर कपड़े फेंककर और नग्न नाचने का मन हो, तो नाचें और सारे कपड़े फेंक दें।

और आप हैरान होंगे, आधा घंटे की उस उछलकूद के बाद आप बहुत रिलैक्स्ड, बहुत शांत, बहुत स्वस्थ अनुभव करेंगे। यह बात बहुत अजीब लगेगी, लेकिन आप बहुत शांत अनुभव करेंगे। और आपको बहुत हैरानी होगी कि यह शांति कैसे आ गयी? आप जो व्यायाम करते हैं, या घूमने चले जाते हैं, उसके बाद जो आपको हलकापन लगता है, उसका कारण क्या है? उसका कारण यह है कि बहुत-सी ग्रंथियां उसमें विसर्जित होती हैं।

आपको पता है, आपका लड़ने का जो मन होता है लोगों से, उलझने का जो मन होता है, उसका कारण क्या है? आपके भीतर बहुत-सी शक्तियां ग्रंथियों की तरह मौजूद हैं, वे विसर्जित होना चाहती हैं। इसलिए आप बिलकुल उत्सुक होते हैं कि कोई मिल जाए और कुछ हो जाए!

जब युद्ध का समय आता है--पिछले दो महायुद्ध हुए, उन महायुद्धों में आप जो सुबह से अखबार पढ़ते हैं बहुत उत्सुकता से। और सारी दुनिया में बड़ी खूबियों की बातें घटित होती हैं। युद्ध के समय दो बातें घटित हुईं। दुनिया में आत्महत्याएं एकदम कम हो गयी थीं; आपको शायद पता नहीं होगा। पिछला महायुद्ध हुआ, उसके पहले पहला महायुद्ध हुआ, मनोवैज्ञानिक बहुत हैरान हुए कि आत्महत्याएं कम क्यों हो गयीं? एकदम आत्महत्याएं कम हो गयीं। जब तक युद्ध चला, आत्महत्याएं नहीं हुईं। सारी दुनिया में उनका अनुपात एकदम गिर गया। इसका कारण क्या था? और मनोवैज्ञानिक बहुत परेशान हुए! उन दिनों खून भी नहीं हुए, आत्महत्याएं भी नहीं हुईं; और एक बड़ी बात हुई, मानसिक बीमारों की संख्या कम रही युद्ध के समय में।

तो अंततः यह समझ में आया कि युद्ध की जो खबरें थीं, जो जोश-खरोश था, उसमें मनुष्य की बहुत-सी ग्रंथियां विसर्जित हुईं और उतनी ग्रंथियों ने उसको बचाया। जैसे कि युद्ध की खबरें आप सुनते हैं, तो आप किसी न किसी तरह उसमें संलग्न हो जाते हैं। आपका क्रोध--समझ लीजिए, आप गुस्से में आ गए हैं, अगर आप हिटलर के प्रति गुस्से में आ गए हैं, तो लोग हिटलर की मूर्ति बनाकर जला देंगे, नारे लगाएंगे, चिल्लाएंगे, घर में बैठकर हिटलर को गालियां देंगे। एक काल्पनिक दुश्मन! हिटलर तो मौजूद नहीं है आपके सामने। और उसमें आपकी बहुत-सी ग्रंथियां विसर्जित होंगी। और उसका परिणाम यह होगा कि आपको मानसिक स्वास्थ्य मिलेगा।

इसलिए आप हैरान होंगे, हम चाहते हैं कि युद्ध न हो, लेकिन भीतर से हमारा कोई मन चाहता है कि युद्ध हो। युद्ध के वक्त लोग काफी खुश नजर आते हैं! हालांकि खतरा बहुत उपद्रव का होता है, लेकिन लोग खुश नजर आते हैं।

अभी हिंदुस्तान पर चीन का हमला हुआ। आपमें एकदम से जो शक्ति का संचार हुआ था, आप समझते हैं, उसका कारण क्या था? उसका कारण था, आपकी बहुत-सी ग्रंथियां जो शरीर में बंधी थीं, वे उस गुस्से में निकलीं और आप हलके हुए।

और जब तक दुनिया में ऐसे लोग हैं, जिनके शरीर अशुद्ध हैं, तब तक युद्ध से नहीं बचा जा सकता। युद्ध तब समाप्त होंगे, जब लोगों के शरीर इतने शुद्ध होंगे कि उनके पास कोई ग्रंथियां युद्ध में विसर्जित करने को नहीं होंगी। यानि आपको मैं यह कह रहा हूं, यह बहुत अजीब-सा लगेगा, लेकिन जब तक लोगों के शरीर शुद्ध स्थिति में नहीं हैं, दुनिया से युद्ध बंद नहीं हो सकते। कोई कितनी ही कोशिश करे, युद्ध का मजा रहेगा।

आपको भी लड़ने में मजा आता है। इसे जरा विचार करना। आपको लड़ने में मजा आता है। वह लड़ाई चाहे किसी तल की हो, चाहे श्वेतांबर दिगंबर जैन से लड़ता हो और चाहे हिंदू मुसलमान से लड़ता हो, वह लड़ाई का कोई तल हो।

आप हैरान होंगे। आप देखते हैं कि एक-एक छोटा धर्म बनता है, उसमें बीस-बीस संप्रदाय बन जाते हैं! फिर एक-एक संप्रदाय में छोटे-छोटे संप्रदाय बन जाते हैं! क्या कारण है?

लोगों के शरीर अशुद्ध हैं और ग्रंथियों से भरे हैं। और उनको लड़ने के लिए कोई भी बहाना चाहिए। वे कोई छोटा-सा बहाना लेंगे और लड़ेंगे। और लड़ने से उनको राहत मिलेगी, उनको हलकापन आएगा।

शरीर-शुद्धि प्राथमिक चरण है साधना का। तो आपके लिए मैं दो बातें कहता हूं। पुरानी जो ग्रंथियां हैं, उनको विसर्जित करने का तो उपाय यह है कि आप एकांत में बिलकुल जंगली हो जाएं। यानि छोड़ दें सारा खयाल, कमरा बंद कर लें। और सारी पर्तें, जो आपने जबरदस्ती अपने ऊपर लाद रखी हैं, वे सब छोड़ दें। और फिर होने दें; शरीर क्या करता है, उसे देखें आप। वह नाचता है, कूदता है, गिरकर पड़ा रह जाता है, घूंसे तानता है, किसी काल्पनिक दुश्मन को मारता है, छुरी मारता है, गोली चलाता है; क्या करता है, उसे देखें और चुपचाप उसे करने दें।

आप एक दो महीने के प्रयोग में बहुत हैरान हो जाएंगे। आप पाएंगे, आपके शरीर ने एक अदभुत सरलता, सात्विकता और शुद्धि को उपलब्ध किया है। उसका विसर्जन होगा। पुरानी ग्रंथियों की निर्जरा होगी।

जो पुराने साधक जंगलों में चले जाते थे और एकांत पसंद करते थे और नहीं चाहते थे कि भीड़ में आएं, उसका कुल सबसे बड़े कारणों में एक कारण यह भी था। उन एकांत में आपको पता नहीं, महावीर ने क्या किया! आपको पता नहीं है, बुद्ध ने क्या किया! आपको पता नहीं, मोहम्मद ने क्या किया! कोई किताबें नहीं कहतीं कि उन्होंने क्या किया। उन पहाड़ों पर जब वे थे, तो वे क्या कर रहे थे? तो मैं आपको कहता हूं कि यह हो नहीं सकता है कि उन्होंने यह न किया हो कि उन्होंने शरीर की ग्रंथियां विसर्जित न की हों। महावीर को तो हम निर्ग्रंथ कहते हैं। और उसका मैं जो अर्थ करता हूं, यही करता हूं, सारी ग्रंथियां क्षीण जिसकी हो गयी हैं।

और सारी ग्रंथियों का प्रारंभिक चरण शरीर है। तो शरीर की ग्रंथियां जो पीछे पकड़ी हैं, उनको विसर्जित करना है। आपको पहले अजीब-सा लगेगा। अगर आपको जोर से हंसी आए अपने इस काम पर कि मैं यह क्या पागलपन कर रहा हूं कि कूद रहा हूं, तो जोर से हंसिए। अगर आपको खूब रोना आए, तो जोर से रोइए।

आप बहुत हैरान होंगे। अगर आपको अभी मैं यहां कह दूं कि आप बिलकुल छोड़ दें अपना खयाल, तो आपमें से कई लोग रोने लगेंगे और कई लोग जोर से हंसने लगेंगे। कभी कोई रुदन, जो आना चाहा होगा, वह भीतर दबा रह गया है, वह निकलेगा। और कभी कोई हंसी, जो फूट पड़नी चाही थी लेकिन रोक ली गयी है, वह कहीं ग्रंथि बनकर रुकी हुई है, वह अब निकलेगी। बहुत एब्सर्ड मालूम होगा कि यह क्या हो रहा है, लेकिन यह होगा। इसका, इसका एकांत में प्रयोग करें शरीर-शुद्धि के लिए। जो पुरानी हमारे ऊपर ग्रंथियां हैं, वे हलकी होंगी।

दूसरी बात, नयी ग्रंथियां न बनें, इसका प्रयोग करें। यह तो पुरानी ग्रंथियों के विसर्जन के लिए मैंने कहा। नयी ग्रंथियां हम रोज बनाए चले जा रहे हैं। आपको मैंने कोई एक अपशब्द कह दिया और आपको क्रोध उठा, लेकिन सभ्यता और शिष्टता आपको उस क्रोध को प्रकट नहीं करने देगी। एक शक्ति का पुंज आपके भीतर घूमेगा। वह कहां जाएगा? वह किन्हीं नसों को सिकोड़कर, इरछा-तिरछा करके बैठ जाएगा। इसलिए क्रोधी आदमी के चेहरे में, आंखों में और शांत आदमी के चेहरे में और आंखों में फर्क होता है। क्योंकि वहां किसी क्रोध के वेग ने किसी चीज को विकृत नहीं किया है। और शरीर तब अपने परिपूर्ण सौंदर्य को उपलब्ध होता है, जब उसमें कोई ग्रंथियां नहीं होती हैं। यानि शरीर के सौंदर्य का कोई और मतलब ही नहीं है। आंखें तब बड़ी सुंदर हो जाती हैं। तब कुरूप से कुरूप शरीर भी सुंदर दिखने लगता है।

गांधी का शरीर कुरूप था, जब वे युवा थे। लेकिन जैसे-जैसे वे बूढ़े होते गए, उनमें एक अभिनव सौंदर्य आया, जो बहुत अदभुत था। वह सौंदर्य शरीर का नहीं था, वह ग्रंथियों के क्षीण होने का था। उसे कम लोग पहचाने और समझे होंगे। गांधी कुरूप थे, इसमें कोई शक नहीं है। तो गांधी का शरीर किसी भी सौंदर्य के मापदंड से सुंदर नहीं था। और अगर आप उनके पुराने चित्र देखेंगे, तो बचपन उनका कुरूप है, जवानी उनकी कुरूप है। लेकिन जैसे-जैसे वे बूढ़े होते हैं, वे कुछ सुंदर होते जाते हैं! बुढ़ापे में तो आदमी और असुंदर होता है, पर वे सुंदर होते जा रहे हैं।

और अगर जीवन का ठीक विकास हो, तो जवानी उतनी सुंदर नहीं होती, जितना बुढ़ापा होता है। क्योंकि जवानी में बड़े वेग होते हैं, बुढ़ापा बड़ा निरावेग हो जाता है। अगर ठीक से विकास हो, तो बुढ़ापा सुंदरतम क्षण है जीवन का, क्योंकि उस वक्त सारे वेग क्षीण हो जाते हैं। और सारी ग्रंथियां विलीन होनी चाहिए, अगर ठीक विकास हो।

इसलिए अगर आप खयाल करेंगे, कैसे यह हमारी विकृति इकट्ठी होती है शरीर के वेग की? मैंने आपको अपमानजनक शब्द कहा, आपमें क्रोध उठा। एक शक्ति पैदा हुई। और शक्ति नष्ट नहीं होती। कोई शक्ति नष्ट नहीं होती। अब उसका कोई उपयोग होना चाहिए। अगर उसका उपयोग नहीं होगा, तो वह आपको विकृत करके नष्ट हो जाएगी। तो उपयोग करिए। कैसे उपयोग करिएगा?

अगर समझ लीजिए, आपको क्रोध आ रहा है और आप दफ्तर में बैठे हुए हैं, और आपको बहुत जोर से क्रोध आया है और आप उसको प्रकट नहीं कर सकते, आप एक काम करिए। उस शक्ति को, जो पैदा हुई है, एक क्रिएटिव ट्रांसफार्मेशन करिए उसका। अपने दोनों पैरों को जोर से सिकोड़िए। वे पैर किसी को दिखायी नहीं पड़ रहे हैं। आप उन दोनों पैरों की सारी

मसल्स को जोर से सिकोड़िए, जितना सिकोड़ सकें; स्टिफ करिए, पूरा खींचते जाइए। जब आपकी बिलकुल सामर्थ्य के बाहर हो जाए खींचना, तब उनको एकदम से रिलैक्स कर दीजिए।

आप हैरान होंगे, क्रोध निष्कासित हो गया है। और आपके पैर की मसल्स सुंदर हो जाएंगी, व्यायाम भी हो गया। वह जो क्रोध का वेग उठा था, उसने कुछ विकृत नहीं किया, बल्कि आपके पैर को सुंदर करके चला गया। तो आपके शरीर के जो अंग कमजोर हों, उनको क्रोध के माध्यम से सुंदर कर लीजिए, स्वस्थ कर लीजिए। क्योंकि वह जो एनर्जी पैदा हुई है, उसका क्रिएटिव, उसका सृजनात्मक उपयोग हो जाएगा।

अगर आपके हाथ कमजोर हैं, आप दोनों हाथों को जोर से भींचिए। वह सारी शक्ति जो क्रोध की पैदा हुई है, उन हाथों में लगेगी। अगर आपका पेट कमजोर है, तो सारी पेट की आंतों को अंदर सिकोड़िए। और उस क्रोध की शक्ति को, भावों में कल्पित करिए कि वह जाकर पेट की सारी नसों को सिकोड़ने में व्यय हो रही है। और आप हैरान होंगे, आप एक दो मिनट बाद पाएंगे कि क्रोध विलीन है और शक्ति उपयुक्त हो गयी है, शक्ति का प्रयोग हो गया।

शक्ति हमेशा तटस्थ है। यानि क्रोध की जो शक्ति पैदा हो रही है, वह बुरी नहीं है, उसका क्रोध की तरह उपयोग हो रहा है। उसका दूसरा उपयोग करिए। और जो उसका दूसरा उपयोग नहीं करेगा, वह शक्ति तो काम करेगी ही। वह शक्ति तो बिना काम के नहीं जाने वाली है। वह शक्ति तो काम करेगी ही। अगर हम उसका उपयोग सीख लेंगे, तो वह हमारे जीवन को क्रांति दे देगी।

तो पुरानी ग्रंथियों की निर्जरा और नयी ग्रंथियों का सृजनात्मक उपयोग शरीर-शुद्धि के लिए दो प्राथमिक चरण हैं। ये बहुत महत्वपूर्ण हैं। सारे योग के आसन मूलतः शरीर के सृजनात्मक उपयोग के लिए हैं। प्राणायाम शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग करने के लिए है।

जो व्यक्ति अपने शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग नहीं करेगा, वे शक्तियां, जो कि वरदान हो सकती थीं, उसके लिए अभिशाप हो जाएंगी। हम सब अपनी ही शक्तियों से पीड़ित हैं--अगर आप समझें--हम सब अपनी ही शक्तियों से पीड़ित हैं। यानि हमारा दुर्भाग्य है कि हमारे पास शक्तियां हैं।

जीसस क्राइस्ट के जीवन में एक उल्लेख है। वे एक गांव से निकले। उन्होंने एक आदमी को एक छत पर जोर से गालियां बकते, अश्लील बातें बकते हुए देखा। वे सीढ़ियां चढ़कर उसके पास गए और उन्होंने उससे कहा कि 'मेरे मित्र, यह तुम क्या कर रहे हो? और अपने जीवन को इस अश्लील बकवास में क्यों खर्च कर रहे हो? प्रतीत होता है, तुमने शराब पी ली है।' उस आदमी ने आंख खोली, उसने ईसा को पहचाना। उसने उठकर ईसा के हाथ जोड़े। और उसने कहा कि 'मेरे प्रभु, मैं तो बिलकुल बीमार था, मैं तो बिलकुल मरणासन्न था। तुमने अपने आशीर्वाद से मुझे ठीक कर दिया था। क्या तुम भूल गए? और अब मैं परिपूर्ण स्वस्थ हूं, लेकिन इस स्वास्थ्य का क्या करूं? तो शराब पी लेते हैं।' ईसा बहुत हैरान हुए। उसने कहा कि 'अब मैं परिपूर्ण स्वस्थ हूं। इस स्वास्थ्य का क्या करूं? तो अब शराब पी लेते हैं। जो बनता है, वह करते हैं।'

ईसा बहुत दुखी नीचे उतरे। वे गांव में अंदर गए, तो एक आदमी को उन्होंने एक वेश्या के पीछे भागते हुए देखा। तो उन्होंने उसे रोका और उन्होंने कहा कि 'मित्र, अपनी आंखों का यह क्या उपयोग कर रहे हो?' उसने ईसा को पहचाना और उसने कहा, 'आप भूल गए? मैं तो अंधा था, आपने हाथ रखकर मेरी आंखें एक दफा ठीक कर दी थीं। अब इन आंखों का क्या करूं?'

ईसा बहुत दुखी मन उस गांव से वापस लौटते थे। एक आदमी गांव के बाहर छाती पीटकर रो रहा था। ईसा ने उसके सिर पर हाथ रखा और कहा कि 'क्यों रो रहे हो? जीवन में बहुत आनंद है। जीवन रोने के लिए नहीं है।' उसने ईसा को पहचाना और उसने कहा, 'अरे, भूल गए! मैं मर गया था और कब्र में लोग मुझे ले जा रहे थे, तुमने अपने जादू से मुझे जिंदा कर दिया था। अब इस जीवन का मैं क्या करूं?'

यह कहानी बिलकुल काल्पनिक और झूठी-सी मालूम होती है, लेकिन हम क्या कर रहे हैं? हम इस जीवन का क्या कर रहे हैं? हमारे पास जीवन में जो भी शक्तियां मिली हैं, उन सबसे हम स्वयं अपना डिस्ट्रक्शन, उनसे हम स्वयं अपना विनाश कर रहे हैं।

जीवन के दो ही रास्ते हैं। जो शक्तियां आपके शरीर और मन में हैं, उनका विनाश कर लें, यही नर्क का रास्ता है। और जो शक्तियां और ऊर्जाएं, जो एनर्जीज आपके भीतर हैं, उनका सृजनात्मक उपयोग कर लें, यही स्वर्ग का रास्ता है। सृजन स्वर्ग है और विनाश नर्क है। अपनी शक्तियों का जो सृजनात्मक, सारी शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग कर ले, उसने स्वर्ग की तरफ चरण रखने शुरू कर दिए। और जो अपनी शक्तियों का विनाशात्मक उपयोग कर ले, वह नर्क की तरफ जा रहा है। और कोई मतलब नहीं है।

आप अपने से पूछें, आप क्या कर रहे हैं? जब एक आदमी क्रोध से भरता है, तो आप समझते हैं, कितनी शक्ति, कितनी डायनेमिक फोर्स उसमें पैदा होती है? क्या आपको पता है, एक कमजोर आदमी भी क्रोध में आकर एक ऐसी चट्टान उठा सकता है, जो कि वह कभी शांत क्षणों में उठाने की कल्पना नहीं कर सकता था? क्या आपको पता है, एक क्रुद्ध आदमी अपने से बहुत बलिष्ठ शांत आदमी को क्षणों में परास्त कर सकता है?

एक दफा जापान में ऐसा हुआ। वहां एक वर्ग होता है समुराई, वहां के क्षत्रिय हैं वे। उनका धंधा तलवार है। और जीवन-मरना वही उनका शौक है। एक समुराई बहुत बड़ा सैनिक था, बहुत बड़ा सेनापति था। उसकी पत्नी से, उसके घर में जो नौकर था, उसका प्रेम हो गया। वहां यह रिवाज था कि अगर किसी की पत्नी से किसी का प्रेम हो जाए, तो वह उसे द्वंद्व-युद्ध के लिए ललकारे। तो दो में से एक मर जाएगा, जो शेष रहेगा, पत्नी से उसका विवाह हो जाएगा या पत्नी उसकी होगी। उसके नौकर का समुराई, एक बहुत बड़े सेनापति की पत्नी से प्रेम हो गया।

सेनापति ने कहा, पागल, अब द्वंद्व-युद्ध के सिवाय कोई रास्ता नहीं है। अब हम लड़ेंगे। अब तू कल तलवार लेकर सुबह आ जा। वह तो बड़ा घबराया। वह तो तलवार का मास्टर था, वह तो अदभुत कुशल आदमी था, जो मालिक था। यह बेचारा नौकर, घर में झाड़ू-बुहारी लगाता था, यह क्या तलवार चलाता! इसने तलवार कभी छुई नहीं थी। इसने उससे कहा कि 'मैं कैसे तलवार उठाऊंगा?' लेकिन उसने कहा, 'अब इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है। अब रास्ता यही है कि तुम कल तलवार लेकर आ जाओ।

वह घर गया, उसने रातभर सोचा। इसके सिवाय कोई रास्ता ही नहीं था। उसने सुबह तलवार उठायी। उसने कभी इसके पहले जिंदगी में तलवार नहीं उठायी थी। उसने सुबह तलवार उठायी, वह तलवार लेकर पहुंचा। लोग देखकर दंग रह गए। वह तो जैसे आग का अंगारा था, जब वह तलवार लेकर वहां पहुंचा। वह सेनापति थोड़ा घबराया। और उसने पूछा कि 'तुम तलवार उठाना भी जानते हो?' वह बिलकुल गलत ही पकड़े हुए था। उसने कहा, 'अब कोई सवाल नहीं है। अब मरना ही है। और मरना ही है, तो मारने की एक कोशिश करेंगे। तो मरना तय है, अब एक मारने की कोशिश करेंगे।'

और वह बड़ा अजीब द्वंद्व-युद्ध हुआ। उसमें सेनापति मारा गया और वह नौकर जीता। उसमें इस वजह से कि अब मरना ही है और कोई रास्ता नहीं है, अदभुत ऊर्जा और शक्ति पैदा हुई। वह तलवार चलाना बिलकुल नहीं जानता था। उसने बिलकुल ही गलत वार किए। बिलकुल ही गलत! जो कि उसके ही विपरीत थे। लेकिन उसके वार देखकर, उसके क्रोध को और उसकी स्थिति को देखकर, सेनापति पीछे हटने लगा। उसकी सारी कुशलता व्यर्थ हो गयी। क्योंकि वह बिलकुल शांत लड़ रहा था। उसे कोई--कोई खास बात नहीं थी। उसके लिए लड़ाई बिलकुल साधारण-सी बात थी। वह पीछे हटने लगा। और उस ऊर्जा में उसकी मृत्यु हुई, उसे मरना पड़ा। और वह आदमी जीता, जो कि बिलकुल ही नासमझ था, जो उस कला को भी नहीं जानता था।

क्रोध में या ऐसे किसी भी वेग में आपके भीतर बहुत शक्ति उत्पन्न होती है। आपके सारे कण, आपके शरीर में जितने लिविंग सेल्स हैं, जितने जीवित कोष्ठ हैं, वे सबके सब अपनी शक्ति का दान करते हैं। और आपके शरीर में बहुत-से संरक्षित कोश हैं शक्ति के। वे हमेशा सुरक्षा के लिए, सेफ्टी मेजर्स हैं, वे सामान्यतया काम में नहीं आते।

अगर आपको हम कहें, दौड़िए प्रतियोगिता में, आप कितने ही तेज दौड़िए, आप उतने तेज कभी नहीं दौड़ सकते, जितना एक आदमी आपके पीछे बंदूक लेकर लगा हो, तब आप दौड़ेंगे। तो सवाल यह है कि आप अपनी चेष्टा से बहुत दौड़े प्रतियोगिता में, लेकिन आप उतने कभी नहीं दौड़ सकते, जब एक आदमी बंदूक लेकर लगा हो। उस वक्त जो सेफ्टी मेजर्स हैं आपके भीतर, आपके शरीर में जो ग्रंथियां शक्ति को रखे हुए हैं जरूरत के लिए, वे अपनी शक्ति को खून में छोड़ देती हैं। उस वक्त आपका शरीर बड़ी शक्ति से आप्लावित हो जाता है। अगर उस शक्ति का उपयोग सृजनात्मक न हो, तो वह शक्ति आपको ही खंडित करेगी और आपको ही तोड़ देगी।

इस दुनिया में अशक्त लोग पाप नहीं करते हैं, शक्तिशाली लोग पाप करते हैं। और मजबूरी में! उनकी शक्ति उन्हें पाप करवाती है। इस दुनिया में अशक्त लोग बुरे काम नहीं करते। इस दुनिया में शक्तिशाली लोग बुरे काम करने को मजबूर हो जाते हैं, क्योंकि शक्ति का सृजनात्मक उपयोग उन्हें पता नहीं है। इसलिए जितने अपराधी हैं, जितने पापी हैं, उन्हें आप शक्ति का स्रोत समझिए। और अगर उन्हें संपर्क मिल जाए, तो उनकी सारी शक्तियां अदभुत रूप से परिवर्तित हो जाती हैं।

इसलिए आपको पता होगा, धार्मिक इतिहास में ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जब कि पापी क्षणभर में पुण्यात्मा हो गए हैं। और उसका कुल कारण इतना है कि शक्तियां बहुत थीं, केवल ट्रांसफार्मेशन की बात थी, एक जादू का संपर्क चाहिए था और सब बदल जाएगा।

अंगुलीमाल ने इतनी हत्याएं कीं। उसने एक हजार लोगों की हत्या करने का व्रत लिया था। उसने नौ सौ निन्यानबे लोगों की हत्या करके माला पहन ली थी। उसे आखिरी आदमी चाहिए था। जिस जगह खबर हो जाती थी कि अंगुलीमाल है, वहां रास्ते निर्जन हो जाते थे, क्योंकि वहां कौन चलता! वह तो देखता ही नहीं था, विचार ही नहीं करता था। जो आया, उसकी हत्या करता था। खुद बादशाह प्रसेनजित जो था बिहार का, वह डरता था। उसकी छाती कंप जाती थी अंगुलीमाल का नाम सुनकर। उसने बड़े सैनिक वहां भेजे, लेकिन अंगुलीमाल पर कोई कब्जा नहीं हुआ।

बुद्ध उस पहाड़ से निकलते थे। लोगों ने, गांव के लोगों ने कहा, 'इधर मत जाइए। आप एक निहत्थे भिक्षु हैं, अंगुलीमाल हत्या कर देगा!' बुद्ध ने कहा, 'हम तो जो रास्ता चुनते हैं, उस पर चलते हैं। और किसी की वजह से उसको नहीं बदलते हैं। और अगर अंगुलीमाल यहां है, तो हमारी और भी जरूरत हो गयी है कि हम वहां जाएं। अब देखना यह है कि अंगुलीमाल हमें मारता है या हम अंगुलीमाल को मारते हैं।' तो लोगों ने कहा, 'बड़ी पागलपन की बात है। आपके पास कुछ भी नहीं है, आप अंगुलीमाल को मारिएगा? निहत्थे, कमजोर बुद्ध और अंगुलीमाल बड़ा बिलकुल दैत्य जैसा आदमी!' बुद्ध ने कहा, 'अब देखना यह है कि अंगुलीमाल बुद्ध को मारता है या बुद्ध अंगुलीमाल को मारते हैं। और हम तो जो रास्ता चुनते हैं, उस पर चलते हैं। और यह और भी सौभाग्य कि अंगुलीमाल से मिलना हो जाएगा। अनायास यह मौका आ गया!'

बुद्ध वहां गए। अंगुलीमाल ने अपनी टेकरी पर से देखा कि एक निहत्था भिक्षु शांत रास्ते पर चला आ रहा है। उसने वहीं से चिल्लाकर कहा कि 'देखो, यहां मत आओ। सिर्फ इसलिए कह रहा हूं कि तुम संन्यासी हो। वापस लौट जाओ। इतनी दया आ गयी तुम्हारी चाल देखकर। धीमे-धीमे चले आ रहे हो। तुम लौट जाओ, आगे मत बढ़ो। क्योंकि हम किसी पर दया करने के आदी नहीं हैं, हत्या कर देंगे।' बुद्ध ने कहा, 'हम भी किसी की दया करने के आदी नहीं हैं।' बुद्ध ने कहा, 'हम भी किसी की दया करने के आदी नहीं हैं। और जहां चुनौती हो, वहां तो संन्यासी पीछे कैसे लौटेगा? तो हम तो आते हैं, तुम भी आओ।'

अंगुलीमाल बहुत हैरान हुआ। यह आदमी पागल है! उसने अपना फरसा उठाया और वह नीचे उतरा। जब वह बुद्ध के पास पहुंचा, तो बुद्ध से उसने कहा कि 'अपने हाथ से अपनी मृत्यु मोल ले रहे हो!' बुद्ध ने कहा, 'इसके पहले कि तुम मुझे

मारो, एक छोटा-सा काम करो। यह जो सामने वृक्ष है, इसके चार पत्ते तोड़ दो।' उसने अपने फरसे को मारा, एक डगाल तोड़ दी। और उसने कहा, 'ये रहे चार क्या, चार हजार!'

बुद्ध ने कहा, 'अब एक छोटा काम और करो। इसके पहले कि तुम मुझे मारो, इनको वापस इसी दरख्त में जोड़ दो।' वह आदमी बोला कि 'यह तो मुश्किल है।' तो बुद्ध ने कहा, 'तोड़ना तो बच्चा भी कर देता। जोड़ना! तोड़ना तो बच्चा भी कर देता; जोड़ना जो कर सके, उसमें पुरुष है, उसमें पुरुषार्थ है। तुम बहुत कमजोर आदमी हो। तुम सिर्फ तोड़ सकते हो। तुम यह खयाल छोड़ दो कि तुम बड़े शक्तिशाली हो। एक पत्ता नहीं जोड़ सकते!'

उसने एक क्षण गौर से सोचा। उसने कहा, 'यह तो जरूर है। क्या पत्ता जोड़ने का भी कोई रास्ता हो सकता है?' बुद्ध ने कहा, 'है। हम उसी रास्ते पर चल रहे हैं।' उसने गौर से देखा और उसके स्वाभिमान को पहली दफा यह पता चला, मारने में कोई मतलब नहीं है। मारना कमजोर भी कर सकता है। तो उसने कहा, 'मैं तो कमजोर नहीं हूं। मैं अब क्या करूं?' बुद्ध ने कहा, 'मेरे पीछे आओ।'

वह उस दिन भिक्षा मांगने गांव में गया। भिक्षु हो गया वह, गांव में भिक्षा मांगने गया। लोगों ने--सब लोग डर के मारे अपने मकानों पर चढ़ गए और उसको पत्थर मारे। वह नीचे गिर पड़ा लहूलुहान। उस पर पत्थर पड़ रहे हैं। बुद्ध उसके पास आए और उससे कहा, 'अंगुलीमाल, ब्राह्मण अंगुलीमाल, उठो! आज तुमने पुरुषार्थ को सिद्ध कर दिया। जब उनके पत्थर तुम्हारे ऊपर पड़ रहे थे, तो तुम्हारे हृदय में जरा भी क्रोध नहीं आया। और जब तुम्हारे शरीर से लहू गिरने लगा और तुम जमीन पर गिर गए, तब भी तुम्हारे हृदय में उनके प्रति प्रेम ही भरा हुआ था। तुमने अपने पुरुष को सिद्ध कर दिया। और तुम ब्राह्मण हो गए।'

प्रसेनजित को खबर लगी, तो वह मिलने आया बुद्ध से कि अंगुलीमाल परिवर्तित हुआ है! वह आकर बैठा। उसने कहा, 'हम सुनते हैं कि अंगुलीमाल साधु हो गए हैं। क्या मैं उनके दर्शन कर सकता हूं?' बुद्ध बोले, 'जो बगल में भिक्षु मेरे बैठे हुए हैं, वह अंगुलीमाल हैं।' प्रसेनजित ने सुना, उसके हाथ-पैर कंप गए। नाम तो पुराना था और डर वही था उस आदमी का। अंगुलीमाल ने कहा, 'मत डरो। वह आदमी गया। वह शक्ति जो उस आदमी की थी, परिवर्तित हो गयी। अब हम दूसरे रास्ते पर हैं। अब तुम हमें मार डालो, तो हमारे मन से तुम्हारे प्रति कोई--कोई अशुभ आकांक्षा नहीं उठेगी।'

जब बुद्ध से लोगों ने पूछा कि इतना बड़ा पापी कैसे परिवर्तित हुआ! तो बुद्ध ने कहा, 'पाप और पुण्य का प्रश्न नहीं है, शक्ति के परिवर्तन का प्रश्न है।'

इस दुनिया में कोई बुरा नहीं है और इस दुनिया में कोई भला नहीं है; केवल शक्ति की दिशाएं हैं। हमारे भीतर बहुत शक्ति है इस शरीर में। इस शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग!

तो एक तो मैंने कहा कि जब भावावेश उठे, तो आप शरीर के किसी अंग से उस भावावेश का उपयोग कर लें, उसे एक्सरसाइज में उपयोग कर लें। दूसरी बात, अपने जीवन में कुछ सृजनात्मक काम सीखें। हम सब गैर सृजनात्मक हैं।

पुराने दिन थे--कल मैं बात करता था रात--पुराने दिन थे, एक गांव में एक आदमी जूता बनाता था। और कोई उसके जूते को पहनता था, तो वह गौरव से कहता था, मेरा बनाया हुआ जूता है। एक सृजन का आनंद था। एक आदमी गाड़ी का चाक बनाता था, तो मेरा बनाया हुआ है।

आज दुनिया में सृजन का कोई आनंद नहीं रह गया है। आपका बनाया हुआ कुछ भी नहीं है। आपका बनाया हुआ कुछ भी नहीं है। यह दुनिया जैसी है, उसमें आदमी का बनाया हुआ अब कुछ भी नहीं रह जाएगा। उसका परिणाम यह हुआ है कि जो सृजनात्मक आनंद था आपका, वह विलीन हो गया है। और अगर वह विलीन हो जाएगा, तो शक्तियों का क्या होगा? वे विनाश की तरफ उत्सुक होंगी। स्वाभाविक शक्ति का कुछ न कुछ होगा, या तो विनाश होगा या सृजन होगा।

तो जीवन में कोई सृजनात्मक काम भी करें। सृजनात्मक मतलब, जो सिर्फ आप अपने आनंद के लिए निर्मित कर रहे हैं। एक मूर्ति बनाएं, तो कोई हर्ज नहीं। एक गीत लिखें, एक गीत गाएं, एक सितार को बजाएं, तो कोई हर्ज नहीं। उसे करें

सिर्फ आनंद के लिए, व्यवसाय के लिए नहीं। जीवन में एक काम चुनें, जो आपका आनंद है, जो आपका व्यवसाय नहीं है। तो आपकी बहुत-सी शक्तियों का विनाशात्मक रुख परिवर्तित होगा और वे सृजन में लगेंगी।

भावावेशों को रोकने के लिए मैंने कहा। और यह सामान्य जीवन को सृजनात्मक दृष्टि दें। कोई फिक्र नहीं, घर में एक बगिया लगाएं और उन फूलों को प्रेम करें और उनका आनंद लें। कोई फिक्र नहीं, एक पत्थर को घिसकर छोटी-सी मूर्ति बनाएं। हर आदमी जो समझदार है, आजीविका के अतिरिक्त कुछ समय सृजन के लिए देगा। और जो नहीं देगा, वह गलती में पड़ जाएगा, उसका जीवन खराब हो जाएगा।

एक छोटा-सा गीत लिखें। कोई फिक्र नहीं, एक अस्पताल में जाएं और कुछ मरीजों को दो-दो फूल दे आएं। कोई फिक्र नहीं है, रास्ते पर कोई भिखमंगा मिल जाए, दो क्षण उसे गले लगा लें। कोई फिक्र नहीं है, कुछ सृजनात्मक करें, जो सिर्फ आनंद है आपका और जिसमें आपको कुछ लेना नहीं है, कुछ देना नहीं है। जिसे कर लेना ही आपका आनंद है।

तो जीवन में कुछ एक बिंदु चुनें, जिसे सिर्फ कर लेना आपका आनंद है। आपकी सारी शक्तियां उस तरफ उन्मुख होंगी और विनाश के लिए आपके पास शक्तियां नहीं बचेंगी। जो आदमी जितना सृजनात्मक होगा, उतना ही उसका क्रोध, उसका सेक्स विलीन हो जाएगा। ये असृजनात्मक आदमी के लक्षण हैं। आपके पास बहुत शक्ति है, वह कहां जाएगी? वह सेक्स से निकलेगी, कामवासना से निकलेगी। निकलना जरूरी है।

जो दुनिया में बहुत बड़े-बड़े सृजनात्मक मूर्तिकार, चित्रकार या कवि हुए हैं, उनके अविवाहित रह जाने का और कोई रहस्य नहीं है। कुल इतना ही रहस्य है कि वह सारी शक्ति उनकी सृजन में विलीन हो गयी, वह ट्रांसफार्म हो गयी, सब्लिमेट हो गयी। अगर वह वहां सब्लिमेट न होती, तो बहुत निम्नतल के सृजन में व्यय होती, संतति के सृजन में। तो वह बच्चे पैदा करने में व्यय होती। वही शक्ति, जो कि किन्हीं अमर काव्यों के, अमर चित्रों के निर्माण में व्यय हो गयी।

तो जीवन में शक्ति का सब्लिमेशन, उसका उद्दातीकरण बहुत जरूरी है। तो एक यह स्मरण रखें। शरीर की संपूर्ण शुद्धि के लिए जीवन में कुछ सृजनात्मक होने की चेष्टा करें। सृजनात्मक मनुष्य ही केवल धार्मिक हो सकता है; और कोई मनुष्य धार्मिक नहीं हो सकता।

शरीर-शुद्धि के लिए ये बुनियादी बातें मैंने आपसे कहीं, बहुत बुनियादी। अब बहुत गौण बातें। ये बहुत बुनियादी बातें हैं। इनको जो सम्हालता है, गौण बातें अपने आप सम्हल जाएंगी। बहुत गौण बातों में यह है, जिसको हम अपने मुल्क में आहार कहते हैं, वह शरीर-शुद्धि में उपयोगी है। आपका शरीर तो बिलकुल भौतिक संस्थान है। उसमें आप जो डालते हैं, उसके परिणाम होने स्वाभाविक हैं। अगर मैं शराब पी लूंगा, तो मेरे शरीर के सेल बेहोश हो जाएंगे। यह बिलकुल स्वाभाविक है। और अगर शरीर मेरा बेहोश है, तो उस बेहोशी का परिणाम मेरे मन पर पड़ेगा।

मन और शरीर बहुत अलग-अलग नहीं हैं, बहुत संयुक्त हैं। हमारा जो व्यक्तित्व है, वह शरीर और मन, ऐसा अलग-अलग नहीं है। शरीर-मन ऐसा इकट्ठा। वह साइकोसोमैटिक है। उसमें हमारा शरीर और मन इकट्ठा है। शरीर का ही अत्यंत सूक्ष्म हिस्सा मन है और मन का ही अत्यंत स्थूल हिस्सा शरीर है। इसे यूं समझिए, ये दोनों बिलकुल अलग-अलग चीजें नहीं हैं।

इसलिए जो शरीर में घटित होगा, उसके परिणाम मन में प्रतिध्वनित होते हैं। और जो मन में घटित होता है, उसके परिणाम शरीर तक आ जाते हैं। अगर मन बीमार है, शरीर ज्यादा देर स्वस्थ नहीं रहेगा। अगर शरीर बीमार है, तो मन ज्यादा देर स्वस्थ नहीं रह सकेगा। ये खबरें एक-दूसरे में सुनी और समझी जाती हैं। इसलिए जो लोग मन को स्वस्थ रखने का उपाय समझ लेते हैं, वे शरीर के बाबत मुफ्त में बहुत-सा स्वास्थ्य उपलब्ध कर लेते हैं। जिसके लिए वे कोई कमाते नहीं हैं, जिसके लिए वे कोई प्रयास नहीं करते हैं।

शरीर और मन संयुक्त घटना है। शरीर पर जो होगा, वह मन पर होगा। इसलिए आपके अपने आहार में, आपके भोजन में आपको थोड़ा विवेकपूर्ण होना जरूरी है।

पहली बात, वह इतना ज्यादा न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भरता हो। आलस्य अशुद्धि है। वह ऐसा न हो कि शरीर उत्तेजना से भरता हो। उत्तेजना अशुद्धि है। क्योंकि उत्तेजना ग्रंथियां पैदा करेगी। वह ऐसा न हो कि शरीर क्षीण होता हो, क्योंकि क्षीणता कमजोरी है। और शक्ति अगर उत्पन्न न होगी, तो परमात्मा की तरफ विकास भी नहीं हो सकता। शक्ति पैदा हो, लेकिन शक्ति उत्तेजक न हो, ऐसा आहार होना चाहिए। शक्ति पैदा हो, लेकिन वह इतनी न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भर जाए।

अगर आपने जरूरत से ज्यादा भोजन किया है, तो सारे शरीर की शक्ति उसको पचाने में लग जाती है, शरीर में आलस्य छा जाता है। शरीर में आलस्य छाने का और कोई मतलब नहीं है। सारी शक्ति पचाने में लगती है, तो शरीर आलस्य से भर जाता है। आलस्य इस बात की सूचना है कि भोजन जरूरत से ज्यादा हो गया।

भोजन के बाद आलस्य नहीं, स्फूर्ति आनी चाहिए। यानि स्वाभाविक है। भूख लगी थी, फिर भोजन किया, तो स्फूर्ति आनी चाहिए, क्योंकि शक्ति उत्पन्न होने का स्रोत भीतर गया। लेकिन आपको तो आलस्य आता है। आलस्य इस बात का मतलब है कि आपने इतना भोजन कर लिया कि अब शरीर की सारी शक्ति उसको पचाएगी, तो शरीर अपनी सारी शक्ति को खींचकर पेट में ले जाएगा और सब तरफ से शक्ति क्षीण होने से आलस्य आ जाएगा।

तो भोजन स्फूर्ति दे, तब सम्यक है। भोजन उत्तेजना न दे, तब सम्यक है। भोजन मादकता न दे, तब सम्यक है।

तो तीन बातें स्मरण रखें: भोजन सुस्ती न दे, तो वह शुद्ध है; भोजन उत्तेजना न दे, तो वह शुद्ध है; और भोजन मादकता न दे, तो वह शुद्ध है। ये मोटी बातें हैं। और आपको इतना नासमझ मैं नहीं मानता कि इनके विस्तार में चर्चा करने की जरूरत है। इनको आप समझेंगे और अपने ढंग से इनको व्यवस्थित करेंगे।

दूसरी बात गौण बातों में, शरीर के लिए थोड़ा-सा व्यायाम अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि शरीर जिन तत्वों से मिलकर बना है, वे तत्व व्यायाम के समय में विस्तार पाते हैं। व्यायाम का मतलब, विस्तार। संकोच के विपरीत है व्यायाम शब्द। व्यायाम का अर्थ है विस्तार। जब आप दौड़ते हैं, तो आपके सारे कण और सारे लिविंग सेल्स, पूरे जीवित कोष्ठ विस्तृत होते हैं, फैलते हैं। और जब वे फैलते हैं, तो आपको स्वास्थ्य का अनुभव होता है। जब वे सिकुड़ते हैं, तो बीमारी का अनुभव होता है। जब आपकी श्वास पूरे के पूरे प्राण के फेफड़े को खोलती है और सारे कार्बन डाइआक्साइड को बाहर फेंकती है, तो आपकी खून की गति बढ़ती है। और खून की गति बढ़ती है, तो शरीर की सारी अशुद्धियां दूर होती हैं। इसलिए योग ने शरीर-शौच को, शरीर की परिपूर्ण शुद्धि को बहुत अनिवार्य नियमों के अंतर्गत रखा है। तो थोड़ा व्यायाम।

अति विश्राम नुकसान करता है, अति व्यायाम भी नुकसान करता है। इसलिए अति व्यायाम को नहीं कह रहा हूं। अति व्यायाम नहीं, थोड़ा, सम्यक व्यायाम कि जिससे आपको स्वास्थ्य का बोध हो। और अति विश्राम नहीं, थोड़ा विश्राम भी। जितना व्यायाम, उतना विश्राम।

इस सदी में व्यायाम भी नहीं है और विश्राम भी नहीं है। हम बहुत अजीब हालत में हैं। आप व्यायाम तो करते नहीं, आप विश्राम भी नहीं करते। जिसको आप विश्राम कहते हैं, वह विश्राम नहीं है। आप पड़े हैं, करवटें बदल रहे हैं, वह विश्राम नहीं है। एक गहरी प्रगाढ़ निद्रा! जिसमें कि सारा शरीर सो जाए और उसके सारे काम का जो भी बोझ और भार उस पर पड़ा है, वह सब विलीन हो जाए।

क्या आपने कभी खयाल किया, अगर आप सुबह बहुत अस्वस्थ उठे हैं और तबियत ताजी नहीं है, तो आपका व्यवहार स्वस्थ नहीं होता! अगर आपको नींद अच्छी नहीं हुई और सुबह एक भिखारी आपसे भीख मांगने आया है, बहुत असंभव है कि आप उसे भीख दे सकें। और अगर आप रात बहुत गहरी नींद सोए हैं और किसी ने हाथ बढ़ाए हैं, तो बहुत असंभव है कि आप अपने हाथ को देने से रोक सकें।

इसलिए भिखारी सुबह आपके घर मांगने आते हैं, शाम को नहीं आते हैं। क्योंकि सुबह संभावना मिलने की है, शाम को कोई संभावना नहीं है। यह बहुत मनोवैज्ञानिक है। भिखारी यूं ही नहीं सुबह आपके घर आ रहा है। शाम को नहीं आता

है। शाम को कोई मतलब नहीं है। शाम को आप इतने थके और शरीर इतना गलत हालत में होगा कि आप शायद ही किसी को कुछ दे सकें। इसलिए वह सुबह आता है। अभी सूरज ऊग रहा है, आप नहाए होंगे, किसी ने घर में प्रार्थना की होगी। और वह बाहर आकर बैठा है। अभी इनकार करना बहुत मुश्किल होगा।

शरीर को ठीक विश्राम मिले, तो आपका व्यवहार बदलता है। इसलिए हमने आहार और विहार को संयुक्त माना है हमेशा से। जैसा आहार होगा, जैसा विहार होगा, अगर उन दोनों में सात्विकता होगी, तो जीवन में बड़ी गति और बड़ा आंतरिक प्रवेश होना शुरु होता है।

स्वास्थ्य की एक भूमिका बहुत जरूरी है। और उसके लिए सम्यक आहार, सम्यक व्यायाम और सम्यक विश्राम, इनको आप बुनियादी हिस्से मानें।

विश्राम भी करने के लिए कुछ समझ चाहिए, जैसा व्यायाम करने के लिए कुछ समझ चाहिए। विश्राम करने के लिए समझ चाहिए, शरीर को छोड़ने की समझ चाहिए। वह हम रात्रि को जब ध्यान करेंगे, तो उससे आपको समझ में आएगा कि उस ध्यान के बाद अगर आप विश्राम करते हैं, तो विश्राम वास्तविक होगा।

हो सकता है, यहां कुछ मित्र हों, जो शारीरिक रुप से बहुत व्यायाम न कर सकते हों, न जा सकते हों जंगल और पहाड़ न चढ़ सकते हों, उनके लिए मैं एक दूसरा प्रयोग कहता हूं। वे केवल पंद्रह मिनट को सुबह उठकर स्नान करने के बाद एकांत कमरे में लेट जाएं, आंख बंद कर लें और कल्पना करें कि मैं पहाड़ियां चढ़ रहा हूं और दौड़ रहा हूं। सिर्फ कल्पना करें, कुछ न करें। वृद्ध हैं, वे नहीं जा सकते हैं। या ऐसी जगह हैं कि वहां घूमने नहीं जा सकते हैं। तो एकांत कमरे में लेट जाएं, आंख बंद कर लें और कल्पना करें कि मैं जा रहा हूं, एक पहाड़ चढ़ रहा हूं और दौड़ रहा हूं। धूप तेज है और मैं भागा चला जा रहा हूं। मेरी श्वास जोर से बढ़ रही है।

और आप हैरान होंगे, आपकी श्वास बढ़ने लगेगी। और आपकी इमेजिनेशन, आपकी कल्पना जितनी प्रगाढ़ होती जाएगी, आप पंद्रह मिनट में पाएंगे कि जो घूमने का फायदा था, वह मिल गया है। आप पंद्रह मिनट बाद बिलकुल ताजे, व्यायाम करके उठ आएंगे। जरूरी नहीं है कि आप व्यायाम करने जाएं। शरीर के अणुओं को पता चलना चाहिए कि व्यायाम हो रहा है, तो वे तैयार हो जाते हैं। यानि वे उसी स्थिति में आ जाते हैं, जिस स्थिति में वस्तुतः आप चले होते तब आते। वे उसी स्थिति में आ जाते हैं।

क्या आपने कभी खयाल नहीं किया, स्वप्न में घबड़ा गए हों, तो उठने के बाद भी हृदय कंपता रहता है। क्यों? स्वप्न की घबड?ाहट तो बड़ी झूठी थी, लेकिन हृदय क्यों कंप रहा है? जागने पर भी क्यों कंप रहा है? हृदय तो कंप गया, हृदय को बिलकुल पता नहीं है कि यह स्वप्न में घटना घटी कि सच में घटना घटी। हृदय को तो पता है कि घटना घटी, बस।

तो अगर आप इमेजिनेशन में भी व्यायाम करते हैं, तो फायदा उतना ही हो जाता है, जितना कि वस्तुतः व्यायाम करिए। कोई भेद नहीं पड़ता। इसलिए जो बहुत समझदार थे इस मामले में, उन्होंने बड़ी अदभुत तरकीबें निकाल ली थीं। अगर उन्हें आप एक जेल में भी बंद कर दें, तो उनके स्वास्थ्य को कोई नुकसान नहीं पड़ेगा। क्योंकि वे पंद्रह मिनट विश्राम करके और व्यायाम कर लेंगे।

तो इसको भी करके देखें। जो नहीं जा सकते हैं, नहीं जाने की स्थितियों में हैं, वे इसका प्रयोग करें। और निद्रा के लिए रात्रि का जो ध्यान है, उसके बाद निद्रा करें। शरीर ऐसे शुद्ध होगा। और शरीर शुद्ध होगा, तो शरीर की शुद्धि भी अपने आप में एक अदभुत आनंद है। और उस आनंद में फिर और अंतस प्रवेश होता है। यह पहला चरण हुआ।

दूसरे दो चरण हैं भूमिका के, विचार-शुद्धि और भाव-शुद्धि। उनकी मैं बात करूंगा।

तीन चरण होंगे परिधि के--शरीर-शुद्धि, विचार-शुद्धि, भाव-शुद्धि। और तीन चरण होंगे केंद्र के--शरीर-शून्यता, विचार-शून्यता और भाव-शून्यता। ये छः चरण जब पूरे होते हैं, तो समाधि घटित होती है। तो उनकी हम क्रमशः इन तीन दिनों में बात करेंगे। यह बात काफी होगी। इस पर आप विचार करेंगे, समझेंगे और इसका प्रयोग करेंगे। क्योंकि मैं जो कुछ

कह रहा हूं, वह सब प्रयोग करने की बात है। प्रयोग करेंगे, तो ही उसका अर्थ खुलेगा, अन्यथा मेरी बातचीत से उसका कोई अर्थ नहीं खुलता।

अब हम सुबह का ध्यान करेंगे और फिर विदा होंगे। सुबह के ध्यान के लिए थोड़ी-सी बात आपको कह दूं। सुबह के ध्यान का पहला चरण तो वही होगा, जिसको हमने रात्रि में संकल्प कहा। पांच बार हम संकल्प की स्थिति करेंगे। उसके बाद, जब संकल्प हम कर चुके होंगे, दो मिनट तक धीमी श्वास लेकर बैठे रहेंगे। उसके बाद हम भावना करेंगे। पहले संकल्प, फिर भावना और फिर ध्यान। ऐसे तीन चरण होंगे सुबह के लिए।

संकल्प, रात्रि को जैसा मैंने कहा, वैसा। श्वास को पूरा गहरा अंदर ले जाएंगे। जब श्वास अंदर जाने लगेगी, तब मन में यह भाव करेंगे कि मैं संकल्प करता हूं कि मेरा ध्यान में प्रवेश होकर रहेगा। मैं ध्यान में प्रविष्ट होऊंगा। इस भाव को करते रहेंगे, जब श्वास अंदर जाएगी और पूरे फेफड़ों में भरेगी। पूरी भर लेनी है, जितनी आपसे बन सके। फिर उसे एक सेकेंड, दो सेकेंड, जितनी देर आप रोक सकें, रोके रखना है। जब श्वास को आप ले जाते हैं, पूरा ले जाएं, फिर उसे थोड़ी देर रोकें। जिन्हें योग ने पूरक, कुंभक और रेचक कहा है, वही प्रक्रिया है। श्वास को पूरा अंदर ले जाएं, फिर उसे रोकें और इस पूरे वक्त संकल्प करते रहें, मन में वही संकल्प गूंजता रहे। फिर पूरी श्वास को बाहर फेंकें, मन में वही संकल्प गूंजता रहे। फिर थोड़ा रुकें और मन में वही संकल्प गूंजता रहे।

इस भांति आपके पूरे अंतस चेतन मन तक, अंतःकरण तक यह संकल्प प्रविष्ट हो जाएगा। आपके पूरे व्यक्तित्व को पता चल जाएगा कि निर्णय हुआ है कि ध्यान में प्रवेश करना है। तो आपको पूरे व्यक्तित्व का सहयोग मिलेगा। अन्यथा आप ऊपर ही घूमते रहेंगे, उससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा बहुत।

तो पहले तो संकल्प, फिर भावना। संकल्प के बाद भावना--जो मैंने कल आपको कही--आशा, आनंद, विश्वास, वह दो मिनट तक करेंगे। दो मिनट तक अपने सारे शरीर को अनुभव करेंगे कि आप बहुत स्वास्थ्य से भरे हुए हैं, बहुत आनंद का अनुभव कर रहे हैं, सारे शरीर के कण-कण प्रफुल्ल हो गए हैं और बड़ी आशा की स्थिति है। कुछ होगा।

संकल्प। फिर यह भावना कि मेरे चारों तरफ अत्यंत शांति है, मेरे भीतर अत्यंत आनंद है, मेरे भीतर अत्यंत आशा है और मेरे शरीर का कण-कण उन्मुख है और उत्सुक है और प्रफुल्ल है, इसका भाव करेंगे। उसके बाद फिर सुबह का ध्यान करेंगे।

सुबह के ध्यान में रीढ़ को सीधा रखना है। बिना हिले-डुले आराम से बैठ जाना है। सारे शरीर के कंपन को छोड़ देना है, रीढ़ को सीधा कर लेना है। आंख को बंद कर लेना है। फिर धीमी श्वास लेनी है, बहुत आहिस्ता श्वास लेनी है और आहिस्ता ही श्वास छोड़ देनी है। श्वास को देखना है। भीतर आंख बंद किए हुए श्वास को देखते रहना है, वह भीतर गई और बाहर गई।

श्वास को देखने के दो उपाय हैं। एक तो है एबडोमेन पर देखना, जहां पेट ऊंचा-नीचा होता है। और दूसरा है नाक के पास, जहां श्वास छूती है, वहां देखना। जिसको जहां सुविधाजनक मालूम पड़े, वहां देखे।

अधिक लोगों को सुविधाजनक पड़ेगा कि वे नाक के पास देखें। श्वास अंदर प्रविष्ट होगी, नाक को लगती है, फिर निकलेगी, फिर लगती है। उसी स्थान को आप देखें कि श्वास लगी, अंदर गयी; श्वास लगी, बाहर गयी। जो लोग पीछे प्रयोग किए हैं नाभि का, उनको नाभि का सुविधाजनक मालूम पड़ता हो, वे नाभि के पास देखें कि पेट ऊपर उठा, नीचे गिरा। जहां जिसको ठीक लगे, वहां उस प्रयोग को कर ले। सिर्फ दस मिनट तक श्वास को देखता रहे।

तो अब हम बैठें सुबह के प्रयोग के लिए। सब लोग फासले पर हो जाएं। एक-दूसरे का बोध मिट जाए, छूना मिट जाए, सब इतने फासले पर हो जाएं।

विचार-शुद्धि के सूत्र

ध्यान सूत्र-4

मेरे प्रिय आत्मन् ,

पहले चरण की बात सुबह मैंने कही। शरीर की शुद्धि कैसे संभव है, उस पर थोड़ी-सी बातें आपको बतायीं। दूसरी पर्त मनुष्य के व्यक्तित्व की, उसके विचार की है। शरीर शुद्ध हो, विचार शुद्ध हो--तीसरी पर्त भाव की है--और भाव शुद्ध हो, तो साधना की परिधि तैयार होती है। ये तीन बातें भी सध जाएं, तो जीवन में बहुत अभिनव आनंद का, शांति का जन्म हो जाता है। ये तीन बातें भी सध जाएं, तो जीवन का नया जन्म हो जाता है।

लेकिन यह परिधि की साधना है। एक अर्थ में यह बहिरंग साधना है। अंतरंग साधना और भी गहरी है। उसमें शरीर को, विचार को और भाव को हम शून्य करते हैं; शुद्ध करते हैं, उसमें शून्य करते हैं। अभी शरीर को शुद्ध करते हैं, उसमें शरीर का त्याग ही करते हैं। उसमें शरीर नहीं है, इस अवस्था में प्रवेश करते हैं। विचार नहीं है, इस अवस्था में प्रवेश करते हैं। भाव नहीं है, इस अवस्था में प्रवेश करते हैं। पर उसके पूर्व, परिधि के रूप में अशुद्ध का त्याग करते हैं।

शरीर के संबंध में मैंने आपको कहा। अब विचार के संबंध में विचार करें। विचार की अशुद्धि क्या है? विचार भी तरंगों की भांति हैं। और विचार भी मनुष्य के चित्त पर अपना प्रभाव शुभ या अशुभ के लिए छोड़ते हैं। जो व्यक्ति जिन विचारों से आंदोलित होता है, उसका व्यक्तित्व वैसा ही निर्मित हो जाता है। जो व्यक्ति जिन विचारों से आंदोलित होता है, उसका व्यक्तित्व वैसा ही निर्मित हो जाता है। जो व्यक्ति सौंदर्य का विचार करेगा, जिस व्यक्ति की चेतना निरंतर सौंदर्य के निकट चिंतन और मनन करेगी, उसके व्यक्तित्व में एक सौंदर्य का जन्म हो जाना बिलकुल स्वाभाविक है। जो व्यक्ति शिवत्व के संबंध में, शुभ के संबंध में विचार करेगा और उसकी चेतना उस केंद्र पर परिभ्रमण करेगी, उसके जीवन में शुभ का पैदा हो जाना आश्चर्यजनक नहीं है। जो सत्य का चिंतन करेगा, सत्य का मनन करेगा, उसके जीवन में सत्य का अवतरण हो जाना सहज संभव है।

तो इस संबंध में मैं आपसे यह कहूं कि आप अपने बाबत विचार करें, आप किस चीज पर निरंतर चिंतन करते हैं? किस चीज के संबंध में आप निरंतर चिंतन करते हैं?

हममें से अधिक लोग या तो धन के संबंध में विचार करते हैं, या यश के संबंध में विचार करते हैं, या काम के संबंध में विचार करते हैं।

चीन में बहुत समय हुआ, एक राजा हुआ। वह अपने समुद्रत्तट के राज्य की सीमा को देखने गया। वह अपने वजीर को भी साथ ले गया था। वे दोनों पहाड़ की चोटी पर खड़े होकर दूर तक फैले समुद्र को देखने लगे। अनेक-अनेक जहाज उस समुद्र में चल रहे थे, आ रहे थे, जा रहे थे। उस राजा ने कहा अपने मंत्री को, 'कितने जहाज आ रहे हैं और कितने जहाज जा रहे हैं!' उस मंत्री ने कहा, 'राजन, अगर सत्य पूछें, तो केवल तीन जहाज आ रहे हैं और तीन ही जहाज जा रहे हैं।' राजा ने पूछा, 'तीन? अनेक दिखायी पड़ते हैं। क्या तुम्हें दिखायी नहीं पड़ते?' उसने कहा, 'मैंने तीन ही जहाज जाने हैं--एक यश का जहाज है, एक धन का जहाज है, एक काम का जहाज है। और इन तीन जहाजों पर सबकी यात्रा चलती है।'

यह सच है। हमारे विचार की यात्रा इन तीन जहाजों पर ही चलती है। और जो इन तीन पर चल रहा है, वह अशुद्ध विचार में है। जो इन तीन से नीचे उतर आए, वह शुद्ध विचार में प्रवेश करता है।

तो यह प्रत्येक के लिए विचारणीय है कि उसका केंद्रीय चिंतन क्या है? उसका घाव क्या है मन का, जहां सारी चीजें घूमती हैं? क्योंकि चौबीस घंटे में जिस बात पर उसका चित्त बार-बार लौट आता हो, वह उसकी केंद्रीय कमजोरी होगी। तो यह हरेक सोचे, क्या धन पर लौट आता है? क्या सेक्स पर लौट आता है? क्या यश पर लौट आता है? क्या आपका चिंतन इनमें से किसी एक पर लौट आता है? क्या असत्य पर लौट आता है? बेईमानी पर लौट आता है? धोखा देने पर लौट आता

है? ये सब उनके गौण हिस्से हैं। तीन केंद्र तो वही हैं। उन तीन पर अगर आपका चित्त चिंतन करता है, तो आप अशुद्ध विचार की स्थिति में हैं। इसे अशुद्ध हम इसलिए कह रहे हैं कि इस भांति का विचार करके आप जीवन-सत्य को उपलब्ध नहीं हो सकेंगे।

शुद्ध विचार का अर्थ होगा, जिसको हम अपने देश में सत्यम् शिवम् सुंदरम् कहते हैं। जिसे हम कहते हैं सत्य, शिव और सुंदर। ये तीन ही शुभ विचार के केंद्र हैं। काम, यश और धन, ये अशुभ विचार के केंद्र हैं। सत्य, शिव और सुंदर, ये शुद्ध विचार के केंद्र हैं।

कितना आप सत्य के संबंध में चिंतन करते हैं? करते हैं चिंतन सत्य के संबंध में? कभी सोचते हैं, सत्य क्या है? किन्हीं एकांत क्षणों में आपका मन इससे आंदोलित होता है? कभी यह बात आपके मन को पीड़ित करती है कि सत्य क्या है? कभी आपके मन को होता है, जानें कि सुंदर क्या है? कभी आपके मन को होता है कि जानें कि शुभ क्या है?

अगर ये विचार आपके मन को आंदोलित नहीं करते हैं, तो आपकी विचार-स्थिति अशुद्ध है और उस अशुद्ध विचार-स्थिति में समाधि में प्रवेश नहीं होगा।

अशुद्ध विचार बाहर ले जाता है और शुद्ध विचार भीतर लाता है। अशुद्ध विचार की दिशा बहिर्गामी है और अधोगामी है। और शुभ विचार या शुद्ध विचार की दिशा अंतर्गामी है और ऊर्ध्वगामी है। यह असंभव है कि कोई व्यक्ति सत्य का विचार करे, सुंदर का विचार करे, शुभ का विचार करे--यह असंभव है कि वह इनका विचार करे, तो विचार करते-करते ही उसके जीवन में इनकी छाप, इनका अंकन और इसकी छाया न पड़ने लगे।

गांधी जी जेल में पीछे बंद थे। वे निरंतर सोचते थे सत्य के संबंध में, अपरिग्रह के संबंध में, अनासक्ति के संबंध में। उन दिनों सुबह के नाश्ते में वे दस खजूर फुलाकर लेते थे। उसको पानी में डालकर दस खजूर लेते थे। वल्लभ भाई पटेल उनके साथ जेल में थे। उन्होंने देखा, दस खजूर भी कोई नाश्ता हुआ? इतने से क्या होगा? तो उन्होंने--वे ही फुलाते थे उन खजूरों को--उन्होंने एक दिन पंद्रह खजूर फुला दिए। और उन्होंने कहा, 'पता भी क्या चलेगा इस बूढ़े आदमी को कि कितने थे, दस थे कि पंद्रह थे! ऐसे खा लेंगे।'

गांधी जी ने देखा कि कुछ खजूर ज्यादा हैं। उन्होंने कहा कि 'वल्लभ भाई, इनकी गिनती करो।' गिनती की, तो वे पंद्रह थे। गांधी जी ने कहा, 'ये तो पंद्रह हैं।' वल्लभ भाई ने कहा, 'अरे दस और पंद्रह में क्या फर्क है?' गांधी जी दो क्षण आंख बंद करके बैठ गए और सोचते रहे। उन्होंने कहा, 'वल्लभ भाई, तुमने मुझे बड़ा सूत्र दे दिया। तुमने कहा, दस और पंद्रह में क्या फर्क है? मेरी समझ में आ गया कि दस और पांच में भी कोई फर्क नहीं है। आज से हम पांच ही लेंगे।' गांधी जी ने कहा, 'आज से हम पांच ही लेंगे। तुमने गजब की बात कह दी कि दस और पंद्रह में कोई फर्क नहीं है। तो पांच और दस में भी कोई फर्क नहीं है। आज से हम पांच ही लेंगे।'

वल्लभ भाई तो घबरा गए। उन्होंने कहा, 'हम तो इसलिए कि थोड़ा नाश्ता ज्यादा हो जाएगा आपका। यह हमें खयाल न था कि इस तरह आप सोचेंगे।' गांधी जी ने कहा, 'जो निरंतर अपरिग्रह पर सोच रहा है, उसको बुद्धि ऐसे ही सूझेगी। जो निरंतर यह सोच रहा है कि कितना कम से कम हो जाए, उसकी बुद्धि ऐसा ही उत्तर देगी। जो निरंतर सोच रहा है, ज्यादा से ज्यादा कैसे हो जाए, उसे दस और पंद्रह में फर्क नहीं होगा। जो सोच रहा है, कम से कम कैसे हो जाए, उसे पांच और दस में फर्क नहीं होगा।'

तो आप जो चिंतन करते हैं, वह आपकी छोटी-छोटी जीवनचर्या में प्रकट होना शुरू हो जाएगा। एक और घटना आपको कहूं।

गांधी जी सुबह पानी गर्म करके उसमें नीबू और शहद डालकर लेते थे। महादेव देसाई उनके निकट थे। वह एक दिन पानी में शहद और नीबू डालकर उन्होंने रखा। वह गर्म पानी था। उबलती हुई उससे भाप निकलती थी। जब गांधी जी आए, तो कोई पांच मिनट बाद उनको पीने को दिया। गांधी जी उसे दो क्षण देखते रहे और फिर उन्होंने कहा, 'अच्छा हुआ होता,

इसे ढंक देते।' महादेव देसाई ने कहा, 'पांच मिनट में क्या बिगड़ता है। और फिर मैं देख ही रहा हूं, इसमें कुछ भी नहीं गिरा।' गांधी जी ने कहा, 'कुछ गिरने का प्रश्न नहीं है। इससे गर्म भाप उठ रही है, कुछ न कुछ कीटाणुओं को व्यर्थ ही नुकसान पहुंचा होगा।' गांधी जी ने कहा, 'ढंकने का और गिर जाने का उतना प्रश्न नहीं है। लेकिन इससे गर्म भाप निकल रही है। वायु के बहुत-से कीटाणुओं को व्यर्थ ही नुकसान पहुंचा होगा। कोई कारण न था, उसे हम बचा सकते थे।'

जो अहिंसा पर निरंतर चिंतन कर रहा है, यह स्वाभाविक है कि उसको यह वृत्ति और बोध आ जाए। यानि मैं यह कह रहा हूं कि आप जब किन्हीं चीजों पर निरंतर चिंतन करेंगे, तो आप जीवनचर्या में छोटी-छोटी बातों में पाएंगे कि फर्क हो जाता है।

सुबह यहां एक मित्र ने आपको खबर दी। उन्होंने कहा, 'यह बहुत दुख की बात है कि बहुत-से लोगों को हम दो बार कह चुके, फिर भी वे अभी तक नहीं आए हैं और दस मिनट की देर हो गई।' उन्होंने कहा कि यह बहुत दुख की बात है कि कुछ लोगों को हम दो बार कह चुके हैं, लेकिन वे अभी तक नहीं आए हैं। अगर मुझे यह बात कहनी पड़े, तो मैं यह कहूंगा, 'यह बहुत खुशी की बात है कि दो ही बार कहने से इतने लोग आ गए हैं।' और मैं यह कहूंगा कि 'यह और भी ज्यादा खुशी की बात होगी कि जो नहीं आए हैं, वे भी आ जाएं।' यह अहिंसात्मक ढंग होगा और वह हिंसात्मक ढंग था। उसमें हिंसा है।

तो मैं यह कह रहा हूं कि अगर आप विचार करेंगे, शुद्ध चिंतन के थोड़े-से केंद्र बनाएंगे, तो आप पाएंगे, आपकी छोटी-छोटी चीजों में अंतर पड़ना शुरू हो जाएगा। आपकी वाणी तक अहिंसक हो जाएगी। आपका उठना-बैठना अहिंसक हो जाएगा। आपके चिंतन के केंद्र आपके जीवन को प्रभावित करेंगे। यह स्वाभाविक है। जो जैसा विचारता है, वैसा हो जाता है।

विचार बड़ी अदभुत शक्ति है। तो आप क्या विचार रहे हैं निरंतर, इस पर बहुत कुछ निर्भर है। अगर आप निरंतर धन के संबंध में विचार रहे हैं और समाधि के प्रयोग कर रहे हैं, तो दिशा विपरीत है। वह ऐसा ही है, जैसे हमने एक ही बैलगाड़ी में दोनों तरफ बैल जोत दिए हों। तो वह बैलगाड़ी टूट जाएगी उन बैलों के खींचने से, लेकिन आगे नहीं बढ़ेगी।

विचार की दिशा शुद्ध हो, तो आप पाएंगे, बड़ी छोटी-छोटी चीजों में अंतर पड़ना शुरू हो जाता है। बहुत बड़ी-बड़ी बातें नहीं हैं जीवन में; जीवन बड़ी छोटी-छोटी बातों से बनता है। जीवन बड़ी छोटी-छोटी घटनाओं से बनता है। आप कैसे उठते हैं, कैसे बैठते हैं, कैसे बोलते हैं, क्या बोलते हैं, इस पर बहुत कुछ निर्भर होता है। बहुत कुछ निर्भर होता है! और इन सारी बातों का जो केंद्र है, जहां से इन सबका जन्म होता है, वह विचार है।

तो विचार को सत्योन्मुख, शिवोन्मुख और सौंदर्योन्मुख होना चाहिए। निरंतर जीवन में यह स्मरण बना रहे कि हम सत्य का चिंतन करें। समय जब मिले, तो हम सत्य पर थोड़ा विचार करें, सौंदर्य पर थोड़ा विचार करें, शुभ पर थोड़ा विचार करें। और इसके पहले कि हम कोई काम करने में प्रवृत्त हों, एक क्षण रुक जाएं और सोचें कि हम जो करेंगे, वह सत्य, सुंदर और शुभ के अनुकूल होगा या प्रतिकूल होगा? जब कोई विचार मन में चलने लगे, तो हम सोचें कि यह जो धारा चल रही है, यह विचार की धारा शुभ के, सत्य के, सुंदर के अनुकूल है या कि प्रतिकूल है?

यदि यह प्रतिकूल है, तो इस धारा को खंडित कर दें। इसका साथ छोड़ें, यह धारा लाभ की नहीं है। यह जीवन को गड्ढे में ले जाएगी। यह जीवन को नीचे ले जाएगी। तो इसको स्मरणपूर्वक देखें कि आपकी विचार की पर्तों की धारा कैसी है! और उसे साहस से, प्रयास से और श्रम से और संकल्पपूर्वक शुभ और सत्य की ओर उन्मुख करें।

अनेक बार ऐसा लगेगा कि हम तय भी नहीं कर पाएंगे कि सत्य क्या है? अनेक बार ऐसा लगेगा कि हम तय भी नहीं कर पाएंगे कि शुभ क्या है? हो सकता है, आप तय न कर पाएं। लेकिन आपने विचार किया, तय करने की चेष्टा की, यह भी काफी मूल्यवान है और आपमें फर्क लाएगा। और जो निरंतर चिंतन करेगा, वह धीरे-धीरे उस दिशा को अनुभव कर लेता है कि उसे पता चले कि शुभ क्या है, या सत्य क्या है।

प्रत्येक विचार को, प्रत्येक वाणी को, प्रत्येक क्रिया को करने के पूर्व एक क्षण रुक जाएं, इतनी जल्दी कुछ भी नहीं है। और देखें कि मैं जो कर रहा हूं, उससे क्या प्रकट हो रहा है? उसमें क्या जाहिर हो रहा है? उसमें कौन-सी घटना घट रही है? इसका सतत चिंतन साधक को जरूरी है।

तो मैं पहली तो बुनियादी जो विचार-शुद्धि की बात है, वह यह है कि हमारी दिशा के केंद्र क्या हैं चिंतन के! अगर वे केंद्र आपमें नहीं हैं, जिनकी मैं बात कर रहा हूं, तो उन केंद्रों को जगाना होगा।

आप जानकर हैरान होंगे, अगर सत्य, शिव या सुंदर में से एक भी केंद्र आपमें जग जाए, तो दो केंद्र अपने आप जगने शुरू हो जाएंगे। और यह भी मैं आपको उल्लेख कर दूं कि तीन तरह के लोग होते हैं जगत में। एक वे लोग होते हैं, जिनके भीतर सत्य के केंद्र के विकसित होने की शीघ्र संभावना होती है। एक वे लोग होते हैं, जिनके भीतर शुभ के केंद्र के विकसित होने की शीघ्र संभावना होती है। और एक वे लोग होते हैं, जिनके भीतर सौंदर्य के विकसित होने की शीघ्र संभावना होती है।

यह हो सकता है, आपमें से सबके केंद्र अलग हों। लेकिन अगर एक केंद्र भी जग जाए, तो दो अपने आप जगने शुरू हो जाते हैं। अगर कोई व्यक्ति सौंदर्य को ठीक से प्रेम करने लगे, तो असत्य नहीं बोल सकता। क्योंकि असत्य बोलना बड़ी असुंदर बात है, बड़ी कुरूप बात है। अगर कोई व्यक्ति सुंदर को ठीक से प्रेम करने लगे, तो अशुभ कृत्य नहीं कर सकता है, क्योंकि अशुभ कृत्य कुरूप होता है। यानि वह इसलिए चोरी नहीं कर सकता है कि चोरी करना बड़ा कुरूप कृत्य है। तो अगर उसकी सौंदर्य के प्रति भी पूरी आकांक्षा पैदा हो जाए, तो भी बहुत कुछ हो जाएगा।

एक बार गांधी जी रवीन्द्रनाथ के यहां मेहमान थे। रवीन्द्रनाथ बूढ़े हो गए थे। वे तो सौंदर्य के साधक थे। सत्य से और शुभ से उन्हें कोई मतलब न था। इस अर्थ में मतलब नहीं था कि वे उनकी सीधी दिशा नहीं थे। वे सौंदर्य के साधक थे। गांधी जी वहां मेहमान थे। संध्या को दोनों घूमने निकलने को थे, तो रवीन्द्रनाथ ने कहा, 'दो क्षण रुकें, मैं थोड़ा बाल संवारकर आया।'

गांधी जी ने कहा, क्या बेहूदी बात! बाल संवारना! गांधी जी उनको साफ ही कर चुके थे, इसलिए संवारने की झंझट ही खतम हो गयी। और इस बुढ़ापे में बाल संवारना! यह तो बड़ी अजीब और गांधी जी के लिए बड़ी असोचनीय बात थी। वे बड़े गुस्से में खड़े रहे, लेकिन अब रवीन्द्रनाथ को कुछ कह भी नहीं सकते थे।

रवीन्द्रनाथ भीतर गए। दो मिनट बीते, पांच मिनट बीते, दस मिनट बीते। गांधी जी हैरान हुए कि ये कैसे बाल संवारे जा रहे हैं! उन्होंने खिड़की से झांका, तो वे आदमकद आईने के सामने खड़े हैं और बाल संवारे ही चले जाते हैं। गांधी जी की बरदाश्त के बाहर हुआ। उन्होंने कहा कि 'मैं समझ नहीं पा रहा हूं, यह आप क्या कर रहे हैं? घूमने का वक्त निकला जा रहा है। और बाल भी क्या संवारने? और इस बुढ़ापे में बाल क्या संवारने?'

रवीन्द्रनाथ बाहर आए। और रवीन्द्रनाथ ने कहा, 'जब मैं युवा था, तो बिना संवारे भी चल जाता था; और अब मैं हो गया बूढ़ा, अब बिना संवारे नहीं चलेगा।' रवीन्द्रनाथ ने कहा, 'जब मैं युवा था, तो बिना बाल संवारे भी चल जाता था; अब मैं हो गया बूढ़ा, इसलिए बिना संवारे नहीं चलेगा। और यह न सोचें कि मैं सुंदर होने को उत्सुक हूं। केवल इतना ही है कि किसी को कुरूप दिखकर उसको दुख देने का कारण न बनूं।' रवीन्द्रनाथ ने कहा कि 'यह न सोचें कि मैं सुंदर दिखने को उत्सुक हूं। यह देह जिसको मैं सुंदर बनाकर घूम रहा हूं, कल राख हो ही जाने वाली है। कल यह चिता पर चढ़ेगी और जल जाएगी, वह मैं जानता हूं। लेकिन किसी की आंख में कुरूपता खटके न, किसी को दुख का कारण न बन जाऊं, इसलिए यह सारी उत्सुकता है।'

यह सौंदर्य का साधक, यूं सोचेगा। कुरूपता दूसरे के लिए प्रतिहिंसा है। फिर वह कुरूपता किसी भी तरह की हो, फिर चाहे वह व्यवहार की हो और चाहे वाणी की हो और चाहे कैसी हो।

तो मैं आपको यह कहूंगा कि अगर आपमें सुंदर होने की उत्सुकता है, तो पूरी तरह सुंदर हो जाइए। पूरी तरह सुंदर हो जाइए कि सर्वांग जीवन सुंदर हो जाए। तो मैं यह नहीं कहता कि जो बाल संवार रहे हैं, वे बुरा कर रहे हैं। नहीं, मैं उनसे यही कहता हूं कि बाल जरूर संवारें, और भी बहुत कुछ है जो संवार लें। मैं नहीं कहता, आप आभूषण पहनकर निकले हैं, तो बुरा कर रहे हैं। मैं यह कहता हूं, आभूषण पहने हैं, यह तो अच्छा किया, लेकिन सच्चे आभूषण भी पहन लें। मैं यह नहीं कहता कि आप शुभ्र वस्त्र पहनकर आए हैं, तो बुरा किया। बहुत अच्छा किया। शुभ्र वस्त्र पहने, यह तो ठीक ही किया, शुभ्र अंतस भी हो जाए।

तो सुंदर को पूरा साधें, तो आप पाएंगे कि सत्य और शुभ उसमें अपने आप समाविष्ट हो जाएंगे। जो शिवत्व को साधेगा, वह भी सुंदर को और सत्य को उपलब्ध हो जाएगा। जो सत्य को साधेगा, वह भी दोनों को उपलब्ध हो जाएगा। वह भी दोनों को उपलब्ध हो जाएगा।

इन तीन में से कोई भी आपकी दिशा हो, कोई भी आपकी रुचि का केंद्र बनता हो, उसको केंद्र बना लें और अपने विचार को उसकी परिधि पर घूमने दें और उससे अंतःप्रभावित होने दें। एक केंद्र चुनें इन तीन में से और उसे साधें। और जीवन की सर्वांगीण--सर्वांगीण--विधियों में, व्यवहारों में, आचार में और व्यवहार में उसे साधें। तो आप धीरे-धीरे एक अदभुत बात अनुभव करेंगे, जैसे-जैसे वह केंद्र सधने लगेगा, वैसे-वैसे आपके जीवन की विकृतियां और अशुद्ध विचार विलीन होने लगेंगे।

मैं आपको यह नहीं कहता हूं बहुत जोर से कि आप धन का चिंतन छोड़ें। मैं आपसे यह कहता हूं, आप शुभ का, सुंदर का और सत्य का चिंतन प्रारंभ करें। जब आप सुंदर का चिंतन प्रारंभ करेंगे, तो आप धन का चिंतन नहीं कर सकेंगे, क्योंकि धन के चिंतन से ज्यादा कुरूप और कोई स्थिति नहीं है। जब आप सुंदर का चिंतन करेंगे, तो आप सेक्स का चिंतन नहीं कर सकते हैं, क्योंकि उससे ज्यादा कुरूप चित्त की और कोई स्थिति नहीं है।

तो मैं पाजिटिवली, विधायक रूप से यह कहता हूं कि शुभ, शुद्ध विचार के किसी केंद्र पर अपनी ऊर्जा को और अपनी शक्ति को संलग्न होने दें। आप पाएंगे, आपकी शक्ति व्यर्थ के केंद्रों से सरकती चली आ रही है, उसने वहां से हाथ छोड़ दिए हैं।

स्मरणपूर्वक जो अशुद्ध है, उसे छोड़ना और स्मरणपूर्वक जो शुद्ध है, उस पर अपने को थिर करना और स्थापित करना है। विचार शुद्ध होगा, तो जीवन में फिर बहुत गहरी गति होगी। यह विचार की मूल बात है। विचार-शुद्धि के लिए विचार की यह मूल बात है। फिर कुछ और बातें हैं, जो गौण हैं। वह भी मैं आपको स्मरण दिला दूं।

विचार के शुद्ध होने के लिए महत्वपूर्ण है कि आप यह जानें कि आपके भीतर सारे विचार बाहर से आते हैं। कोई विचार आपके भीतर नहीं होता। सारे विचार आपके पास बाहर से आते हैं। विचार की खूंटियां भीतर होती हैं, विचार बाहर से आते हैं। यह जरा समझ लें। विचार बाहर से आते हैं, खूंटियां भीतर होती हैं।

अगर किसी व्यक्ति ने धन का चिंतन किया है, तो धन के विचार तो बाहर से आते हैं, केवल धन के विचार करने की जो कामना है, उसकी खूंटी भर भीतर होती है। विचार बाहर से आकर उस खूंटी पर टंग जाते हैं। जो सेक्स का चिंतन करता है, सेक्स की खूंटी तो भीतर होती है, विचार बाहर से आकर उस पर टंग जाते हैं। जो जिस बात का चिंतन करता है, उसकी सिर्फ खूंटी भीतर होती है, विचार हमेशा बाहर से आकर टंग जाते हैं। आपके पास जितने विचार हैं, वे सब बाहर से आए हुए हैं।

विचार की शुद्धि के लिए यह जानना जरूरी है कि विचार, जो बाहर से हमारे भीतर आ रहे हैं, वे अविवेकपूर्ण रीति से भीतर न आएं। हम सजग हों और जिसको भीतर आने देना चाहते हों, वही हमारे भीतर आए। शेष को हम बाहर फेंक दें।

मैं अभी पीछे कहता था, अगर मेरे घर में कोई कचरा फेंक देगा, तो मैं उससे झगड़ने जाऊंगा; लेकिन मेरे दिमाग में अगर कोई कचरा फेंकता है, तो मैं झगड़ने नहीं जाता। अगर आप रास्ते पर मुझे मिलें और मैं एक फिल्म की कहानी आपको सुनाने लगूं, तो आपको कोई दिक्कत नहीं होती। और अगर मैं घर में जाकर आपके थोड़ा कचरा फेंक आऊं, तो आप कहेंगे,

आपने यह क्या किया? कानून के विपरीत है। और मैं आपके दिमाग में कचरा डालूं, एक फिल्म की कहानी सुनाऊं, तो आप बड़े मजे से बैठकर सुनते रहते हैं!

अभी हमको यह पता नहीं है कि दिमाग में भी कचरे फेंके जा सकते हैं। और हम सारे लोग एक-दूसरे के ऐसे दुश्मन हैं कि एक-दूसरे के दिमाग में कचरा फेंकते रहते हैं। जिनको आप मित्र समझते हैं, वे आपके साथ क्या कर रहे हैं? उनसे बड़ा दर्ुव्यवहार और कोई नहीं कर सकता। इससे दुश्मन बेहतर; कम से कम आपके दिमाग में कुछ नहीं फेंकता, क्योंकि आपसे मिलता-जुलता नहीं है।

हम सब एक-दूसरे के दिमाग में कचरा डाल रहे हैं। और हम इतने सोए हुए लोग हैं कि हमें पता ही नहीं होता कि हम क्या ले रहे हैं। हम सबको स्वीकार कर लेते हैं। हम धर्मशालाओं की तरह हैं, जिनमें कोई रखवाला नहीं है और जिन पर कोई द्वारपाल नहीं बैठा हुआ है कि कौन ठहरे और कौन न ठहरे। उसमें जो भी आए--आदमी या जानवर, या चोर या बेईमान--वह सब ठहरे। और जब उसका मन हो, तब चला जाए; और न मन हो, तो बराबर रहा आए।

मन को धर्मशाला नहीं होना चाहिए। अगर मन धर्मशाला होगा, सुरक्षित नहीं होगा, तो अशुद्ध विचार से छुटकारा मुश्किल है। तो स्मरणपूर्वक मन के ऊपर पहरा होना चाहिए। शुद्ध विचार के लिए दूसरी जरूरत है कि मन पर पहरा हो, एक वाचफुलनेस हो। हम जागे, सजग पहरेदार हों कि हमारे भीतर क्या आता है! जो व्यर्थ है, उसे इनकार कर दें।

मैं अभी एक सफर में था। मैं था और मेरे साथ मेरे कंपार्टमेंट में एक सज्जन और थे। वे मुझसे कुछ बातचीत करना चाहते होंगे। जैसे ही मैं बैठा, उन्होंने सिगरेट निकालकर मुझे दी। मैंने कहा, 'क्षमा करें, मैं नहीं लूंगा।' उन्होंने सिगरेट अंदर रख ली। फिर थोड़ी देर बाद उन्होंने पान निकाला और मुझसे कहा, 'लीजिए।' मैंने कहा, 'माफ करें। मैं नहीं लूंगा।' वे फिर पान रखकर बैठ गए। फिर उन्होंने अपना अखबार उठाया, बोले, 'इसको पढ़िएगा?' मैंने कहा, 'क्षमा करें, मैं नहीं पढूंगा।' वे बोले, 'बड़ा मुश्किल है। हम आपको कुछ भी देते हैं, आप नहीं लेते हैं!' वे मुझसे बोले, 'हम आपको कुछ भी देते हैं, आप कुछ भी नहीं लेते!' मैंने कहा कि 'जो कुछ भी ले लेते हैं, वे नासमझ हैं। और आप जो दे रहे हैं, मैं कोशिश करूंगा कि आपसे भी छिन जाए। मैं तो उसे नहीं लूंगा, आपसे भी छिन जाए, यह कोशिश करूंगा।'

आप क्या करते हैं, अगर खाली बैठे हैं? अखबार उठाकर पढ़ने लगेंगे, क्योंकि खाली बैठे हैं! तो खाली बैठे रहना बेहतर है, बजाय कचरा इकट्ठा करने से। खाली बैठे रहना बुरा नहीं है। कुछ ऐसे पागल हैं, जो यह कहते हैं कि कुछ न कुछ करना न करने से अच्छा है। यह गलत है। कुछ भी गलत करने से न करना हमेशा बेहतर है। कुछ हैं, जो कहते हैं कि कुछ न कुछ करते रहना कुछ भी न करने से बेहतर है। मैं आपसे कहता हूं, कुछ भी न करना कुछ भी गलत-सलत करने से हमेशा बेहतर है। क्योंकि उस वक्त कम से कम आप कुछ खो तो नहीं रहे। उस वक्त कम से कम कुछ व्यर्थ तो इकट्ठा नहीं कर रहे हैं।

तो इसकी एक सजगता। विचार के आंतरिक संक्रमण में हम सजग हों, तो विचार को शुद्ध रखना कठिन नहीं है। अशुद्ध विचार को पहचान लेना कठिन नहीं है। वे विचार, जो आपके भीतर जाकर उत्तेजना पैदा करते हों, अशुद्ध हैं। वे विचार, जो आपके भीतर जाकर शांति के झरने पैदा करते हों, शुद्ध हैं। वे विचार, जो आपके भीतर जाकर आनंदोन्मुख करते हों, शुभ हैं। वे विचार, जो आपके भीतर जाकर किसी तरह की बेचैनी, चिंता, एंग्जाइटी पैदा करते हों, वे अशुभ हैं। तो उन विचारों से अपने को बचाएं। और अपने मन के सजग पहरेदार बनें, तो विचार-शुद्धि की तरफ संक्रमण होता है।

और तीसरी बात--इस जगत में जैसे अशुभ विचार के आवर्तन बाहर चल रहे हैं और अशुभ विचार की आंधियां बाहर बह रही हैं, और अशुभ विचार का धुआं आपके चित्त में प्रवेश करता है और आपको घेर लेता है; बहुत ज्यादा अशुभ विचार हैं इस जगत में, बहुत उनकी आंधियां हैं; लेकिन यह न भूलें, कुछ छोटे-छोटे शुभ विचार के दीए भी हैं, वे भी टिमटिमा रहे हैं। कुछ शुद्ध विचार की छोटी-छोटी लहरें हैं, वे भी जीवित हैं। इस पूरे अंधकार के विराट सागर में कुछ प्रकाश की किरणें भी हैं। उनका सान्निध्य खोजें। उसको हम सत्संग कहते हैं।

इस बहुत अंधेरे से भरी हुई दुनिया में बिलकुल अंधेरा नहीं है, कुछ दीए हैं--मिट्टी के ही सही। और छोटी उनकी लौ हो, तो भी सही। लेकिन वे भी हैं। उनका हम सान्निध्य खोजें। क्योंकि जो जलते हुए दीयों के करीब अपने बुझे दीए को ले जाएगा, बहुत संभव है, उसकी ज्योति जो कि बुझी-बुझी है, उन दूसरे दीयों के सान्निध्य में पुनरुज्जीवित हो जाए। बहुत संभव है कि वह अपने धुओं को खो दे और लपट बन जाए।

सान्निध्य खोजें उन किरणों का, जो कि सत्य के लिए, शुभ के लिए और सुंदर के लिए हैं। उसके सान्निध्य में अपने को ले जाएं। उन विचारों के, उन विचार पुरुषों के, उन वैचारिक तरंगों के आवर्त में अपने को ले जाएं, जहां यह संभव हो।

यह तीन प्रकार से संभव हो सकता है: शुभ और सदविचारों के करीब; शुभ और सदपुरुषों के करीब; और सबसे ज्यादा और सबसे महत्वपूर्ण, प्रकृति के सान्निध्य में।

प्रकृति कोई अशुभ विचार नहीं देती है। अगर आप आकाश को बैठकर देखें, सिर्फ देखते रहें, आकाश आपमें कुछ अशुभ पैदा नहीं करेगा, बल्कि आपका सारा कचरा थोड़ी देर में क्षीण हो जाएगा और आप पाएंगे कि आप आकाश को देखते-देखते आकाश के साथ एक हो गए हैं। एक पहाड़ से गिरते हुए झरने को देखते-देखते आप पाएंगे कि आप पहाड़ का झरना हो गए हैं। एक हरियाली से भरे हुए वन को देखते-देखते आप पाएंगे कि आप भी एक दरख्त हो गए हैं।

एक साधु हुआ। उससे एक व्यक्ति ने जाकर पूछा कि 'मैं सत्य को जानना चाहता हूं, कैसे जानूं?' उसने कहा, 'अभी बहुत लोग हैं। कभी अकेले में आना।' वह दिनभर नहीं आया, वह सांझ को आया, जब कोई भी नहीं था। दीए जल गए थे, रात हो गयी थी, साधु अकेला था, अपना दरवाजा बंद करने को था। उस आदमी ने कहा, 'ठहरें, अब कोई भी नहीं है। आप आए हुए लोगों को विदा करके दरवाजा बंद कर रहे हैं। मैं बाहर ही रुका था कि जब सब विदा हो जाएंगे, मैं भीतर प्रवेश करूंगा। अब मैं आ गया। अब मैं पूछना चाहता हूं, मैं शांत कैसे हो जाऊं और परमात्मा को कैसे उपलब्ध हो जाऊं?'

उसने कहा, 'बाहर आओ। यह झोपड़े के भीतर नहीं हो सकेगा। क्योंकि यहां जो दीया जलाया है, वह आदमी का जलाया हुआ है। और यह झोपड़ी के भीतर नहीं हो सकेगा, क्योंकि यह जो झोपड़ी है, आदमी की बनायी हुई है। बाहर आएं। एक बड़ी दुनिया भी है, जो किसी की बनायी हुई नहीं है या कि परमात्मा की बनायी हुई है। बाहर आएं, वहां मनुष्य का सृजन कुछ भी नहीं है। वहां मनुष्य की कोई छाप नहीं है।'

और आप स्मरण रखें, अकेला मनुष्य ऐसा प्राणी है, जो अशुभ छापें छोड़ता है। और कोई अशुभ छापें नहीं छोड़ता।

वे बाहर आए। वहां बांस के दरख्त थे और चांद ऊपर खिला हुआ था, ऊपर ऊगा हुआ था। वह साधु उन दरख्तों के पास जाकर खड़ा हो गया--एक मिनट, दो मिनट, दस मिनट, पंद्रह मिनट। उस आदमी ने पूछा, 'कुछ बोलिए भी तो! आप चुपचाप खड़े हैं, इससे हम क्या समझेंगे!' उसने कहा, 'अगर तुम समझ सकते, तो समझ जाते। तुम भी चुपचाप खड़े हो जाओ। और हम बांस का एक दरख्त हो गए हैं और तुम भी हो जाओ।' वह बोला, 'यह तो बड़ा मुश्किल है।'

उस साधु ने कहा, 'यही हमारी साधना है। बांसों के पास खड़े-खड़े हम थोड़ी देर में भूल जाते हैं कि हम अलग हैं। और हम बांस ही हो जाते हैं। और चांद को देखते-देखते हम थोड़ी देर में भूल जाते हैं कि हम अलग हैं और हम चांद ही हो जाते हैं।'

और प्रकृति के सान्निध्य में जो इतना तादात्म्य खोज लेता है, उसके विचार अदभुत रूप से शुद्ध होने लगते हैं। उसके विचार की अशुद्धि विलीन होने लगती है। तो तीन रास्ते हैं। सदविचार, और सदविचारों की अनंत धाराएं हैं। और सदपुरुष। वे कभी समाप्त नहीं हैं, वे हमेशा मौजूद हैं।

लेकिन हम कुछ ऐसे अंधे हैं कि हम केवल मुरदों के पूजने के आदी हैं। और हम ऐसे अंधे हैं कि जीवित कोई व्यक्ति हमारे लिए कभी सद हो ही नहीं सकता। सिर्फ मुरदे हमारे लिए सद होते हैं। और मुरदों से सत्संग बड़ा मुश्किल है। और दुनिया में जितने धर्म हैं, वे सब मुरदों के पूजक हैं। जीवित का पूजक करीब-करीब कोई भी नहीं है। और वे सब मरे हुओं को

पूज़ते हैं। और सबको यह भ्रम है कि जितने सदपुरुष होने थे, वे सब हो चुके, आगे कोई भी नहीं होगा। और सबको यह भ्रम है कि जो जीवित हो, वह सद कैसे हो सकता है!

हमेशा जमीन पर सदपुरुष उपलब्ध हैं। वे जगह-जगह मौजूद हैं। आंखें हों, तो पहचाने जा सकते हैं। और फिर बड़ी बात तो यह है कि अगर वे पूरे सद न भी हों आपकी तुलना में और आपकी कल्पना में, तो भी आपको उनके असद से क्या लेना है?

एक फकीर था। उसने कहा कि 'मैंने आज तक जिनके पास भी गया, सबसे सीखा।' किसी ने पूछा, 'यह कैसे हो सकता है? एक चोर से क्या सीखिएगा?' उसने कहा, 'एक बार ऐसा हुआ, हम एक चोर के घर में मेहमान थे। और ऐसा हुआ कि उस चोर के घर हम एक महीना मेहमान थे। वह रोज रात को चोरी करने निकलता और तीन बजे, चार बजे वापस लौटता। हम उससे पूछते, कहो कुछ हुआ? वह हंसकर कहता, आज तो कुछ नहीं हुआ, शायद कल हो। एक महीना वह चोरी नहीं कर पाया। कभी दरवाजे पर सैनिक मिल गया, कभी लोग घर में जगे थे, कभी ताला नहीं तोड़ पाया, कभी भीतर भी घुसा, खजाने तक नहीं पहुंच पाया। और वह चोर रोज रात को थका हुआ लौटता और हम उससे पूछते कि कहो, कुछ हुआ? वह कहता, आज तो नहीं हुआ, लेकिन कल शायद हो। हमने उससे यह सीख लिया। हमने सीख लिया कि जब आज न हो, तो फिक्र मत करना। याद रखना कि कल हो सकता है।'

'और एक चोर जो चोरी करने गया है, निपट खराब काम करने गया है, वह भी इतनी आशा से भरा है।' तो उस फकीर ने कहा, 'उन दिनों हम परमात्मा की तलाश में थे, हम परमात्मा की चोरी में लगे थे। हम भी वहां दीवालें खटखटा रहे थे और दरवाजे टटोल रहे थे, कोई रास्ता नहीं मिलता था। हम थक गए थे और निराश हो गए थे और हमने सोचा था, फिजूल है सब, छोड़ें। लेकिन उस चोर ने हमको बचा लिया। और उसने कहा, आज नहीं हुआ, कल शायद होगा। और हमने यह सूत्र बना लिया कि आज नहीं होगा, तो कल शायद होगा। और फिर वह दिन आया कि बात घटित हुई। चोर ने चोरी कर ली और हमने भी परमात्मा चुरा लिया।'

तो सवाल यह नहीं है कि आप सदपुरुष से ही सीखेंगे। सवाल यह है कि सीखने की बुद्धि और समझ हो, तो इस सारे जगत में सदपुरुष भरे हुए हैं। और अगर वह न हो, तो महावीर के करीब से भी लोग निकले हैं, जिन्होंने समझा कि यह कोई लफंगा है, कोई नंगा है। न मालूम कौन है! पागल है। महावीर के करीब से लोग निकले हैं। और आप जो सुनते हैं, लोग कहते हैं, फलां आदमी नंगा-लुच्चा है, यह सबसे पहले महावीर के लिए प्रयुक्त हुआ शब्द है। क्योंकि वे नंगे थे और केश लुंच करते थे, इसलिए नंगे-लुच्चे कहलाते थे। लोग कहते थे, 'नंगा-लुच्चा है।' अब वह शब्द गाली है आज। अगर आपसे कोई कह देगा, आप गुस्से में आ जाएंगे। लेकिन वह नग्न और केश लुंच करने वाले साधु महावीर के लिए सबसे पहले प्रयुक्त हुआ था।

तो महावीर के करीब से निकलने वाले लोग थे, जिन्होंने समझा कि न मालूम कौन फालतू आदमी है! ऐसे लोग थे, जिन्होंने उनको मारा, ठोंका और समझा कि यह कोई बेईमान है, कोई ठग है, कोई जासूस है।

ऐसे लोग हुए, जो महावीर को नहीं समझ सके। ऐसे लोग हुए, जिन्होंने क्राइस्ट को सूली पर लटका दिया, यह समझकर कि यह तो झूठ बातें बोलता है। ऐसे लोग हुए, जिन्होंने सुकरात को जहर पिला दिया। और वे लोग उस दिन हुए, ऐसा मत सोचना, वे सब आपके भीतर मौजूद हैं। ये ही लोग थे। अभी आपको मौका मिल जाए, तो सुकरात को जहर पिला देंगे; और मौका मिल जाए, तो क्राइस्ट को सूली पर लटका देंगे; और मौका मिल जाए, तो महावीर को देखकर आप हंसने लगेंगे कि यह कैसा पागल आदमी है! लेकिन चूंकि वे मर गए, मुरदों को आप पूज़ लेते हैं, उनसे कोई दिक्कत नहीं है। जो जिंदा हैं, उनको पूज़ना बड़ा मुश्किल है; उनको मानना, उनको समझना बड़ा मुश्किल है।

तो अगर सद की खोज हो, तो यह सारा जगत सदपुरुषों से हमेशा भरा हुआ है। ऐसा कभी नहीं हुआ है, न कभी होगा। और जिस दिन यह हो जाएगा कि सदपुरुषों की परंपरा खंडित हो जाएगी, उस दिन आगे कोई सदपुरुष नहीं हो

सकेगा। क्योंकि वह धारा ही टूट जाएगी, वह रेगिस्तान में विलीन हो जाएगी। मोटी और पतली हमेशा बह रही है वह धारा। उससे परिचित होना, संबंधित होना। और उसके लिए रास्ता यह नहीं है कि आपको कोई जब बिलकुल ही परम व्यक्ति मिलेगा, तब आप समझेंगे। आपकी आंख खुली रखें। छोटी-छोटी घटनाओं में समझना हो सकता है।

एक बात मैं पढ़ता था एक साधु के बाबत। वे साठ वर्ष की उम्र तक व्यवसाय करते रहे। उनका नाम, घर का नाम राजा बाबू था। वृद्ध हो गए, तो भी लोग उन्हें राजा बाबू कहते। एक दिन सुबह-सुबह वे घूमने निकले थे। सुबह अभी सूरज नहीं ऊगा है, वे गांव के बाहर घूमने गए हैं। एक स्त्री अपने घर में एक बच्चे को जगा रही है। वह उससे कह रही है कि 'राजा बाबू! कब तक सोए रहोगे? अब सुबह हो गयी, उठो।' वे बाहर छड़ी लिए हुए चले जा रहे थे, उन्हें सुनायी पड़ा कि 'राजा बाबू! कब तक सोए रहोगे? अब तो सुबह हो गयी, अब तो उठो।' और उन्होंने यह सुना और वे वापस लौट आए और उन्होंने घर जाकर कहा कि 'अब मुश्किल है, आज उपदेश मिल गया। आज सुनायी पड़ गया कि राजा बाबू, कब तक सोए रहोगे! अब तो सुबह भी हो गयी, अब उठो।' तो उन्होंने कहा, 'आज तो बस बात समाप्त हो गयी।'

अब यह किसी स्त्री ने न मालूम किस बच्चे को सुबह उठाने के लिए कहा था, लेकिन जिसके पास आंख थी, उसके लिए उपदेश बन गया। और यह हो सकता है कि कोई आपको ही उपदेश दे रहा हो और आपके पास कान और आंख न हों, और आप बैठे सुनते रहें, और समझें कि शायद किसी और से कहता होगा।

तो सद का संपर्क, सद की आकांक्षा, सद की तलाश, अन्वेषण और सदविचारों का जीवन में प्रवेश, प्रकृति का सान्निध्य, ये सदविचार के लिए, शुद्ध विचार के लिए उपयोगी शर्तें और भूमिकाएं हैं।

ये थोड़ी-सी बातें मैंने विचार-शुद्धि के लिए कहीं, इसको एक अनिवार्य अंग समझकर प्रयोग करना है जीवनभर। कोई आज और कल की बात नहीं है। कोई धर्मों के शिविर नहीं हो सकते कि तीन दिन में बात आयी और समाप्त हो गयी। धर्मों की कोई ऐसी ट्रेनिंग नहीं हो सकती कि तीन दिन हम मिले और मामला खतम हो गया। अधर्म ऐसी बीमारी है कि जीवनभर चलती है, इसलिए धर्म का शिविर भी जीवनभर ही चलाना पड़ेगा। कोई रास्ता नहीं है। तो उसे जीवनभर प्रयोग करना होगा।

भाव के संबंध में कल मैं बात करूंगा कि भाव-शुद्धि के लिए हम क्या करें। अब रात्रि के ध्यान के लिए थोड़ी-सी बात समझ लें और फिर हम रात्रि के ध्यान के लिए बैठेंगे।

रात्रि के ध्यान के लिए सबसे पहले तो हम संकल्प करेंगे, जैसा सुबह के ध्यान में किया। पांच बार संकल्प करेंगे। फिर पांच बार के बाद थोड़ी देर तक जैसे सुबह भाव किया, वैसा भाव करेंगे। उसके बाद सब लोग लेट जाएंगे। सब लोग पहले ही से लेट जाएंगे। अपनी-अपनी जगह पर चुपचाप लेट जाएंगे। लेटने के बाद अंधकार हो जाएगा। फिर हम अपने शरीर को शिथिल करेंगे। पीछे जो शिविर में थे, वहां हमने शरीर को इकट्ठा शिथिल किया था। हो सकता है, कुछ लोगों का इकट्ठा शिथिल नहीं हो पाता है, इसलिए उनके लिए और सरल रास्ता मैं सुझाता हूं।

शरीर में योग की दृष्टि से सात चक्र होते हैं। शरीर में योग की दृष्टि से सात चक्र होते हैं। उन सात चक्रों में से पांच का प्रयोग हम इस ध्यान के लिए करेंगे। सबसे जो प्राथमिक चक्र है, वह मूलाधार कहलाता है, वह जननेंद्रिय के करीब होता है। वह पहला चक्र है, जिसका हम प्रयोग करेंगे अभी इस रात्रि के ध्यान में। दूसरा चक्र है, स्वाधिष्ठान चक्र। वह नाभि के करीब मान ले सकते हैं। अभी कल्पना में समझ लें। जननेंद्रिय के करीब जो चक्र है, उसका नाम मूलाधार। नाभि के पास जो चक्र है, उसका नाम स्वाधिष्ठान। और ऊपर चलें, हृदय के पास जो चक्र है, उसका नाम अनाहत। और ऊपर चलें, माथे के पास जो चक्र है, उसका नाम आज्ञा। और ऊपर चलें, चोटी के पास जो चक्र है, उसका नाम सहस्रार।

इन पांच का हम उपयोग करेंगे। यूं चक्र तो सात हैं, और भी ज्यादा हैं। इन पांच का हम उपयोग करेंगे और इनके उपयोग के साथ हम शरीर को शिथिलता की तरफ ले जाएंगे। और आप हैरान होंगे, मूलाधार जो चक्र है, उसका नियंत्रण आपके पैरों पर है। हम सुझाव देंगे मूलाधार चक्र को। जब आप लेट जाएंगे, तो मैं कहूंगा, मूलाधार चक्र पर ध्यान को ले

जाइए। तो आप अपने भीतर जननेंद्रिय के करीब मूलाधार चक्र के पास ध्यान को ले जाएंगे, वहां बोध रखेंगे। फिर मैं कहूंगा, मूलाधार चक्र को शिथिल छोड़ दीजिए और उसके साथ ही दोनों टांगों को शिथिल छोड़ दीजिए। आप भीतर भाव करेंगे कि मूलाधार चक्र शिथिल हो रहा है, मूलाधार चक्र शिथिल हो रहा है और पैर शिथिल होते जा रहे हैं। आप थोड़ी ही देर में पाएंगे कि पैर दोनों मुरदे की तरह लटककर शिथिल हो गए हैं।

जब पैर शिथिल हो जाएंगे, तो हम ऊपर की तरफ बढ़ेंगे, दूसरे चक्र स्वाधिष्ठान को नाभि के पास। मैं कहूंगा, ध्यान को नाभि के पास ले आएं, तो आप अपनी कल्पना में नाभि के पास भीतर ध्यान को लाएंगे। और हम वहां कहेंगे कि स्वाधिष्ठान चक्र शिथिल हो रहा है और पेट का सारा यंत्र शिथिल हो रहा है। उसको अनुभव करते ही वह सारा यंत्र धीरे-धीरे शिथिल हो जाएगा।

फिर हम और ऊपर बढ़ेंगे और हृदय के पास आएंगे और मैं कहूंगा, अनाहत चक्र शिथिल हो रहा है। तब आप हृदय को शिथिल छोड़ेंगे और अनाहत पर ध्यान रखेंगे, उस जगह, हृदय के पास और भावना करेंगे कि अनाहत शिथिल हो रहा है, तो छाती का पूरा का पूरा यंत्र और संस्थान शिथिल हो जाएगा।

फिर हम ऊपर आएंगे और माथे के पास दोनों आंखों के बीच में आज्ञा चक्र है, उसका अंदर भाव करेंगे कि आज्ञा के पास हमारा ध्यान है, दृष्टि है। और मैं कहूंगा, आज्ञा चक्र शिथिल हो रहा है और मस्तिष्क शिथिल हो रहा है। उसके साथ सारा मस्तिष्क, गर्दन, सारे सिर का हिस्सा एकदम शिथिल हो जाएगा। तब आपको सिर्फ चोटी के पास थोड़ी-सी धक-धक और भार मालूम पड़ेगा, सारा शरीर शिथिल हो जाएगा। सिर्फ चोटी के पास आपको थोड़ा-सा भार और धक-धक मालूम पड़ेगा।

अंतिम रूप से मैं कहूंगा, सहस्रार चक्र--तब आप सिर के ऊपर ध्यान ले जाएंगे चोटी के पास--वह शिथिल हो रहा है। और उसके साथ सारा मस्तिष्क शिथिल हो रहा है। तब भाव करने से आप पाएंगे कि भीतर भी सब शिथिल हो जाएगा।

इसको लंबी प्रक्रिया में किया, ताकि यह हरेक के लिए हो ही जाए कि उसका शरीर बिलकुल मृत हो जाए। इन पांच चक्रों पर सुझाव दूंगा। और जब यह सब शिथिल हो जाएगा, तब मैं आपसे कहूंगा कि अब शरीर बिलकुल मुरदा हो गया, अब उसको छोड़ दें, तो उसे बिलकुल छोड़ दें। शरीर मुरदा हो गया है। फिर मैं कहूंगा, श्वास आपकी शिथिल हो रही है, शांत हो रही है। थोड़ी देर उसका सुझाव दूंगा। उसके बाद सुझाव दूंगा कि मन बिलकुल शून्य हो रहा है। ये तीन सुझाव देंगे--पहले चक्रों के लिए, दूसरा प्राण-श्वास के लिए और तीसरा विचार के लिए।

इस पूरी प्रक्रिया में करने के बाद आपसे कहूंगा, दस मिनट के लिए सब शून्य हो गया। उस शून्य में आप भीतर पड़े हुए, सिर्फ बोध मात्र आपका रहेगा, एक ज्योति जलती रहेगी बोध की और आप चुपचाप पड़े रहेंगे। सिर्फ वह बोध मात्र रहेगा, सिर्फ होश भर रहेगा कि मैं पड़ा हूं। इसमें यह हो सकता है कि शरीर जब बिलकुल मुरदा-सा मालूम होने लगे--जो कि मालूम होगा, क्योंकि चक्रों के प्रयोग के साथ शरीर एकदम मुरदा होगा--तो घबराना नहीं है किसी को। अगर ऐसा लगने लगे कि शरीर बिलकुल मुरदा है, तो घबराना नहीं है। यह बड़ा शुभ है। यह बहुत शुभ है। जो जीते जी अपने शरीर के मुरदा होने को अनुभव कर लेगा, वह धीरे-धीरे मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है। तो उसमें घबराना नहीं है। कोई भी अनुभूति मालूम हो, कोई प्रकाश, आलोक मालूम हो, शांति मालूम हो, उसको चुपचाप देखते रहना है और शांत शून्य में पड़े रहना है। यह अनिवार्य है, इन तीन प्रक्रियाओं में--संकल्प, भाव और फिर ध्यान--यह रात्रि का ध्यान होगा।

मैं समझता हूं, आप मेरी बात समझ गए होंगे। तो अब सब इतने दूर बैठ जाएं लोग कि पहले तो हम अपनी जगह बना लें कि आप लेट सकेंगे। सब इतने दूर बैठ जाएं। सारी जगह का उपयोग कर लें। कोई बैठा हुआ नहीं रहेगा।

भाव-शुद्धि की कीमिया

ध्यान सूत्र-5

मेरे प्रिय आत्मन् ,

साधना की परिधि भूमिका के संबंध में हमने दो चरणों पर बातें की हैं, शरीर-शुद्धि और विचार-शुद्धि। शरीर और विचार से भी गहरा तल भाव का, भावनाओं का है। भाव की शुद्धि सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। परिधि की भूमिका और साधना में शरीर और विचार दोनों से ज्यादा भाव की शुद्धि की उपयोगिता है।

यह इसलिए कि मनुष्य विचार से बहुत कम जीता है, मनुष्य भाव से ज्यादा जीता है। यह कहा जाता है कि मनुष्य एक रैशनल एनिमल है, एक बौद्धिक प्राणी है। यह बात उतनी सच नहीं है। आप अपने जीवन में विचार करके बहुत कुछ, बहुत कुछ नहीं करते हैं। आप अधिक जो करते हैं, वह भाव से प्रभावित होता है। आप जो घृणा करते हैं, आप जो क्रोध करते हैं, आप जो प्रेम करते हैं, वह सब भावनाओं से संबंधित होता है, विचारों से संबंधित नहीं।

जीवन की अधिकतर चर्या भाव के जगत से उदभूत होती है, विचार के जगत से नहीं। इसलिए यह भी आपने देखा होगा कि आप विचार कुछ करते हैं, लेकिन समय पर काम कुछ और कर जाते हैं। उसका कारण विचार और भाव में भिन्न होना होता है। आप तय करते हैं कि मैं क्रोध नहीं करूंगा। आप विचार करते हैं कि क्रोध बुरा है। लेकिन जब क्रोध आपको पकड़ता है, तो आपका विचार एक तरफ पड़ा रह जाता है और क्रोध हो जाता है।

जब तक भाव के जगत में परिवर्तन न हो, केवल विचार के जगत में सोच-विचार से कोई क्रांति जीवन में नहीं होती है। इसलिए बहुत आधारभूत, परिधि-साधना में जो सबसे आधारभूत बिंदु है, वह भावनाओं का है, वह भावों का है। भाव की शुद्धि या शुद्ध भावों का प्रवर्तन कैसे हो, इस संबंध में आज सुबह हम विचार करें।

भाव की जो विभिन्न दिशाएं हैं, उनमें चार पर मैं सर्वाधिक जोर देना पसंद करूंगा। चार तत्वों की बात करूंगा, जिनके माध्यम से भाव शुद्ध हो सकते हैं। वे ही चार तत्व विपरीत होकर अशुद्ध भावों के जन्मदाता बन जाते हैं। वे चार भाव; उनमें प्रथम है मैत्री, द्वितीय है करुणा। प्रथम मैत्री, द्वितीय करुणा, तृतीय प्रमुदिता और चौथा कृतज्ञता।

इन चार भावों को अगर कोई व्यक्ति जीवन में साधे, तो भाव-शुद्धि उपलब्ध होती है। इन चार के विपरीत--मैत्री के विपरीत घृणा और वैर; करुणा के विपरीत क्रूरता, हिंसा और अदया; प्रमुदिता, प्रफुल्लता के विपरीत उदासी, विषाद, संताप, चिंता; और कृतज्ञता के विपरीत अकृतज्ञता--इनके विपरीत जिसकी जीवन और भाव स्थिति हो, वह अशुद्ध भाव में है। इन चार में जो प्रतिष्ठित हो, वह शुद्ध भाव में प्रतिष्ठित है।

यह हम विचार करें कि हमारी भाव की परिधि किन बातों से प्रभावित होती है और संचालित होती है। क्या हमारे जीवन में मैत्री की जगह वैर, वैमनस्य ज्यादा प्रमुख है? क्या हम मैत्री की बजाय दुश्मनी से, शत्रुता से ज्यादा संचालित होते हैं? क्या हम ज्यादा प्रभावित होते हैं? क्या हम ज्यादा सक्रिय हो जाते हैं? क्या हमारे भीतर शक्ति का उदभव ज्यादा होता है?

जैसा मैंने पीछे कहा, क्रोध में शक्ति है। लेकिन मैत्री में भी शक्ति है। और जो केवल क्रोध की ही शक्ति को पैदा करना जानता है, वह जीवन के एक बहुत बड़े हिस्से से वंचित है। जिसने मैत्री की शक्ति को जगाना नहीं जाना, जो केवल शत्रुता में ही शक्तिमान होता है और मैत्री की अवस्था में शिथिल हो जाता है...।

यह आपको पता होगा, दुनिया के सारे राष्ट्र शांति के दिनों में कमजोर हो जाते हैं और युद्ध के दिनों में शक्तिशाली हो जाते हैं। क्यों? क्योंकि मैत्री की शक्ति पैदा करना हमें पता नहीं है। शांति हमारे लिए शक्ति नहीं है, अशक्ति है। और यही वजह है कि भारत जैसे मुल्क, जिन्होंने शांति की बहुत चर्चा की, प्रेम की बहुत चर्चा की, वे शक्तिहीन हो गए। क्योंकि शक्ति पैदा करने का सामान्यतया एक ही रास्ता है, शत्रुता।

हिटलर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है, अगर किसी राष्ट्र को शक्तिमान बनाना है, तो या तो सच्चे दुश्मन या झूठे दुश्मन पैदा करो। अपने मुल्क को समझाओ कि दुश्मन आस-पास हैं, चाहे वे न हों। और जब उनको यह बोध होगा कि दुश्मन आस-पास हैं, शक्ति का और ऊर्जा का जन्म होगा। इसलिए हिटलर ने बिलकुल झूठे दुश्मन खड़े किए, यहूदी, जिनसे कोई मतलब न था। और दस वर्ष उसने प्रचार किया और सारे मुल्क को समझा दिया कि यहूदी दुश्मन हैं और इनसे बचाव करना है, और शक्ति पैदा हो गयी।

जर्मनी की सारी शक्ति वैमनस्य से पैदा हुई। जापान की सारी शक्ति वैमनस्य से पैदा हुई। आज सोवियत रूस की या अमेरिका की सारी शक्ति वैमनस्य पर है। अभी तक मनुष्य का इतिहास केवल शत्रुता की शक्ति को पैदा करना जानता है। मित्रता की शक्ति का हमें पता नहीं।

महावीर और बुद्ध ने और क्राइस्ट ने मित्रता की शक्ति की पहली बुनियादें रखी हैं। और उन्होंने जो कहा, अहिंसा शक्ति है, या क्राइस्ट ने कहा कि प्रेम शक्ति है, या बुद्ध ने कहा कि करुणा शक्ति है, यह हम सुनते हैं, लेकिन हमें पता नहीं।

तो मैं आपको कहूं, अपने जीवन में विचार करें, आप कब शक्तिशाली अनुभव करते हैं? जब आप किसी से शत्रुता में होते हैं तब? या जब आप किसी के प्रति शांत और प्रेम से भरे होते हैं तब? तो आपको ज्ञात होगा, आप शत्रुता की स्थिति में शक्तिशाली होते हैं; और जब आप शांत, अवैर की स्थिति में होते हैं, तो आप अशक्त और कमजोर हो जाते हैं।

इसका अर्थ है कि आप एक अशुद्ध भाव से प्रभावित होते हैं। यह अशुद्ध भाव की जितनी प्रगाढ़ता हमारे भीतर होगी, उतना हम भीतर प्रवेश नहीं कर सकेंगे। क्यों भीतर प्रवेश नहीं कर सकेंगे? बड़ा महत्वपूर्ण है यह बिंदु समझ लेना।

शत्रुता हमेशा बहिर्केंद्रित होती है। यानि कोई व्यक्ति बाहर होता है, उससे शत्रुता होती है। अगर बाहर कोई व्यक्ति न हो, तो आपमें शत्रुता नहीं हो सकती। और मैं आपको यह कहूं, प्रेम बहिर्केंद्रित नहीं होता। अगर बाहर कोई भी न हो, तो भी भीतर प्रेम हो सकता है। प्रेम अंतःकेंद्रित होता है, मैत्री अंतःकेंद्रित होती है। और शत्रुता पर-केंद्रित होती है, वह दूसरे से संबंधित होती है। घृणा बाहर से परिचालित होती है, प्रेम भीतर से उदभावित होता है। प्रेम के झरने भीतर से बहते हैं। घृणा की प्रतिक्रिया बाहर से पैदा होती है। अशुद्ध भाव बाहर से परिचालित होते हैं, शुद्ध भाव भीतर से बहते हैं। अशुद्ध और शुद्ध भाव के भेद को ठीक से समझ लें।

जो भाव बाहर से परिचालित होते हैं, वे शुद्ध नहीं हैं। तो वह प्रेम, वह पैशन, जिसको हम प्रेम कहते हैं, शुद्ध नहीं है, क्योंकि वह बाहर से परिचालित है। वही प्रेम शुद्ध है, जो भीतर से प्रवाहित है, बाहर से परिचालित नहीं। इसलिए हम अपने मुल्क में प्रेम को और मोह को अलग कर देते हैं। पैशन को, वासना को और प्रेम को हम अलग कर देते हैं। वासना बाहर से परिचालित है।

बुद्ध के या महावीर के हृदय में वासना तो नहीं है, लेकिन प्रेम है।

क्राइस्ट एक गांव से निकलते थे। दोपहर थी घनी। और वे काफी थके-मांदे थे और धूप बहुत तेज थी। वे एक बगीचे में एक दरख्त के नीचे विश्राम करने को रुके। वह भवन और वह बगीचा एक वेश्या का था। उस वेश्या ने क्राइस्ट को उस दरख्त के नीचे विश्राम करते देखा। ऐसा व्यक्ति कभी उसके बगीचे में विश्राम नहीं किया था। और ऐसे व्यक्ति को कभी उसने देखा नहीं था। उसने बहुत सुंदर लोग देखे थे, उसने बहुत स्वस्थ लोग देखे थे। लेकिन यह सौंदर्य कुछ और था और यह स्वास्थ्य कुछ और था। वह आकर्षित बंधी हुई कब उस दरख्त के पास आ गयी, उसे पता नहीं चला। वह जब पास आकर क्राइस्ट को देखने लगी, उनकी आंख खुली, वे उठकर जाने को हुए। क्राइस्ट ने उसे धन्यवाद दिया कि 'धन्यवाद इस छाया के लिए, जो तुम्हारे इस दरख्त ने मुझे दी, अब मैं जाऊं। और मेरा रास्ता लंबा है।'

उस वेश्या ने कहा, 'दो क्षण को अगर मेरे भवन के भीतर न गए, तो मेरे मन का बहुत अपमान होगा। दो क्षण रुको।' और उस वेश्या ने कहा, 'यह पहला मौका है कि मैं किसी को आमंत्रित कर रही हूं। लोग मेरे द्वार आते हैं और वापस लौटा दिए जाते हैं। यह पहला मौका है जीवन में, मैं किसी को आमंत्रित कर रही हूं।' क्राइस्ट ने कहा, 'तुमने कहा तो समझो कि मैं

आ ही गया। लेकिन रास्ता मेरा लंबा है, मुझे जाने दो।' क्राइस्ट ने कहा, 'तुमने कहा तो समझो कि मैं आ ही गया।' उस वेश्या ने कहा, 'इससे मुझे बड़ी पीड़ा होगी। इसका अर्थ होगा, आप इतना भी प्रेम नहीं दिखा सकते कि मेरे भवन में भीतर चल सकें!' क्राइस्ट ने कहा, 'स्मरण रखना, मैं अकेला आदमी हूं, जो तुम्हें प्रेम कर सकता है। और जितने लोग तुम्हारे द्वार आए, वे कोई प्रेम नहीं करते हैं।' क्राइस्ट ने कहा, 'मैं अकेला आदमी हूं, जो तुम्हें प्रेम कर सकता है। और जो तुम्हारे द्वार आए, वे तुम्हें कोई प्रेम नहीं करते हैं। क्योंकि उनके पास प्रेम नहीं है, वे तुम्हारे कारण आए हैं। और मेरे भीतर प्रेम है।'

प्रेम दीए के प्रकाश की भांति है। अगर कोई भी यहां न हो, तो प्रकाश शून्य में गिरता रहेगा और कोई निकलेगा तो उस पर पड़ जाएगा। और वासना और मोह प्रकाश की भांति नहीं हैं। वे किसी से प्रभावित होंगे, तो खिंचते हैं। इसलिए वासना एक तनाव है, एक टेंशन है। प्रेम तनाव नहीं है, प्रेम में कोई तनाव नहीं है। प्रेम अत्यंत शांत स्थिति है।

अशुद्ध भाव वे हैं, जो बाहर से प्रभावित होते हैं। अशुद्ध भाव वे हैं, जिनकी तरंगें बाहर की हवाएं आपमें पैदा करती हैं। और शुद्ध भाव वे हैं, जो आपसे निकलते हैं; बाहर की हवाएं जिन्हें प्रभावित नहीं करतीं।

महावीर को और बुद्ध को कभी हम इस भाषा में नहीं सोचते हैं कि वे प्रेम करते थे। मैं आपको यह कहूं, वे ही अकेले लोग हैं, जो प्रेम करते हैं। लेकिन उस प्रेम में और आपके प्रेम में फर्क है। आपका प्रेम एक संबंध है किसी व्यक्ति से। उनका प्रेम संबंध नहीं है, स्टेट आफ माइंड है, स्टेट आफ रिलेशनशिप नहीं है। उनका प्रेम कोई संबंध नहीं है किसी से। उनका प्रेम उनके चित्त की अवस्था है। यानि वे प्रेम करने को मजबूर हैं, क्योंकि उनके पास कुछ और करने को नहीं है।

लोग कहते हैं, महावीर को लोगों ने अपमानित किया, पत्थर मारे, कान में खीले ठोंके और उन्होंने सब कुछ क्षमा कर दिया। मैं कहता हूं, वे गलत कहते हैं। महावीर ने किसी को क्षमा नहीं किया। क्योंकि क्षमा वे लोग करते हैं, जो क्रुद्ध हो जाते हैं। और महावीर ने उन पर कोई दया नहीं की। क्योंकि दया वे लोग करते हैं, जो क्रूर होते हैं। और महावीर ने कोई सोच-विचार नहीं किया कि मैं इनके साथ बुरा व्यवहार न करूं। क्योंकि यह सोच-विचार वे लोग करते हैं, जिनके मन में बुरे व्यवहार का खयाल आ जाता है।

फिर महावीर ने क्या किया? महावीर मजबूर हैं, प्रेम के सिवाय उनके पास देने को कुछ भी नहीं है। आप कुछ भी करो, उत्तर में प्रेम ही आ सकता है। आप एक फलों से लदे हुए दरख्त को पत्थर मारो, उत्तर में फल ही गिर सकते हैं। और कोई रास्ता नहीं है। इसमें दरख्त कुछ भी नहीं कर रहा है, यह मजबूरी है। और आप जल से भरे हुए झरने में कैसी ही बाल्टियां फेंको, वे गंदी हों या सुंदर हों, या स्वर्ण की हों या लोहे की हों, इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है कि झरना आपको पानी दे दे। इसमें झरने की कोई खूबी नहीं है; मजबूरी है। तो जब प्रेम चित्त की अवस्था होती है, तब वह एक विवशता होती है, उसे देना ही पड़ेगा, उसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है।

तो वे भाव, जो भीतर से निकलते हैं, जिनको आप बाहर से खींचते नहीं, जिन्हें आप बाहर से नहीं खींच सकते हैं, वे भाव शुद्ध हैं। और वे भाव, जो बाहर के तूफान आपमें लहरों की तरह पैदा करते हैं, वे अशुद्ध हैं। जो बाहर से पैदा किए जाएंगे, वे आपमें बेचैनी और परेशानी पैदा करेंगे; और जो भीतर से निकलेंगे, वे आपको बहुत आनंद से भर जाएंगे।

शुद्ध और अशुद्ध भाव के लिए पहली बात यह स्मरण रखें। शुद्ध भाव चित्त की अवस्था है। अशुद्ध भाव चित्त की विकृति है, अवस्था नहीं। अशुद्ध भाव चित्त पर बाहर का परिणाम है; शुद्ध भाव चित्त पर अंतस का विकास है। तो अपने जीवन में यह विचार करें कि मैं जिन भावनाओं से संचालित होता हूं, वे मेरे भीतर से आते हैं या दूसरे लोग मुझमें पैदा करते हैं?

मैं रास्ते पर जा रहा हूं और आप मुझे एक गाली देते हैं, और अगर मुझे क्रोध पैदा हुआ है, यह अशुद्ध भाव है। क्योंकि आपने मुझमें पैदा किया। मैं रास्ते से जा रहा हूं और आप मुझे आदर करते हैं, और मैं प्रसन्न हुआ। यह अशुद्ध भाव है। क्योंकि यह आपने मुझमें पैदा किया है। मैं रास्ते से जा रहा हूं, आप गाली देते हैं या कि आप मेरी प्रशंसा करते हैं और मेरी अवस्था

वही बनी रहती है जो कि थी, गाली देने के पहले या प्रशंसा करने के पहले, वह शुद्ध भाव है। क्योंकि आपने उसे पैदा नहीं किया है; वह मेरा है।

जो मेरा है, वह शुद्ध है। जो मेरा है, वह शुद्ध है; और जो बाहर से आता है, वह अशुद्ध है। बाहर से जो आता है, वह रिएक्शन है, वह प्रतिध्वनि है।

हम वहां एक इकोप्वाइंट देखने गए थे पीछे। और वहां आवाज करिए, तो वहां से पहाड़ उसको दोहरा देते थे। मैंने कहा कि हममें से अधिक लोग इकोप्वाइंट हैं। आप कुछ कहिए, वे दोहरा देते हैं। उनके पास अपना कुछ नहीं है, वे खाली पहाड़ हैं। आप कुछ चिल्लाइए, वहां से भी चिल्लाहट लौटती है। वह उनकी नहीं है। वह आपने पैदा की थी। और आपने जो पैदा की थी, वह आपकी नहीं थी; वह किसी दूसरे ने आपमें पैदा की थी।

हम सब इकोप्वाइंट हैं। और हमारे पास अपनी कोई आवाज नहीं है और अपना कोई जीवन नहीं है, अपना कोई भाव नहीं है। हमारे सब भाव अशुद्ध हैं, क्योंकि वे दूसरों के हैं, उधार हैं।

यह स्मरण रखें पहला सूत्र कि भाव मेरे हों, वे प्रतिक्रियाएं न हों, वे मेरे चित्त की अवस्थाएं हों। ऐसी चित्त की अवस्थाओं को चार भागों में मैंने विभाजित किया। पहला, मैत्री।

मैत्री साधनी होगी। मैत्री इसलिए साधनी होगी, क्योंकि मैत्री का जो शक्ति बिंदु है हमारे भीतर, उसके विकसित होने के जीवन बहुत कम मौके देता है। वह अविकसित पड़ा रहता है, वह बीज की तरह हमारे मनोभूमि में पड़ा रहता है, विकसित नहीं हो पाता। शत्रुता का बीज एकदम विकसित हो जाता है। क्यों? उसके भी प्राकृतिक कारण हैं, वह भी जरूरत है। वह जरूरत जरूर है, लेकिन जीवनभर की संगी और साथी होने की जरूरत नहीं है। उसकी एक दिन जरूरत है, एक दिन उसे छोड़ देने की भी जरूरत है।

बच्चा जब पैदा होता है, पैदा होते से ही वह जो अनुभव करता है, पैदा होते से जो उसे अनुभव होता है, वह प्रेम का नहीं होता। बच्चे को पैदा होते से ही जो अनुभव होता है, वह भय का, फियर का होता है। और स्वाभाविक है, एक छोटा-सा बच्चा, जो मां के पेट में बड़ी व्यवस्था और सुविधा में था, जहां कोई अड़चन न थी, कोई परेशानी न थी। भोजन कमाने की, पानी पीने की कोई चिंता न थी। वहां वह बड़ी ही सुखद निद्रा में सोया हुआ था और जी रहा था। जब वह मां के पेट के बाहर आता है, एक छोटा-सा बच्चा, सब तरह से कमजोर, उसे जो पहला अनुभव, जो पहला आघात होता है, वह भय का होता है। और अगर भय का आघात हो, तो जिनको वह देखता है, उनके प्रति प्रेम पैदा नहीं होता, उनसे डर पैदा होता है। और जिनसे डर पैदा होता है, उनके प्रति घृणा पैदा होती है।

इसे नियम समझ लें। भय कभी प्रेम नहीं पैदा करता है। किसी ने अगर कहा हो कि भय के बिना प्रीति नहीं होती, तो बिलकुल गलत कहा है। भय हो तो प्रीति हो ही नहीं सकती। भय में कभी प्रीति नहीं होती। और ऊपर से प्रीति अगर दिखायी भी जाए, तो भीतर अप्रीति होती है।

इस दुनिया में जितनी प्रीति हम देखते हैं, वह अधिकतर भय पर खड़ी हुई है। और भय पर जो प्रीति खड़ी हुई है, वह झूठी है। इसलिए ऊपर से प्रीति रहती है और भीतर से घृणा सरकती रहती है। हम जिन-जिन को प्रेम करते हैं, उन्हीं को घृणा भी करते हैं। क्योंकि प्रीति ऊपर होती है, घृणा नीचे होती है, क्योंकि हम उनसे भयभीत होते हैं।

स्मरण रखें, जो व्यक्ति किसी को भयभीत कर रहा है, वह अपने प्रेम पाने के अवसर खो रहा है। अगर पिता अपने पुत्र को भयभीत कर रहा है, वह उसके प्रेम को नहीं पा सकेगा। अगर पति अपनी पत्नी को भयभीत कर रहा है, वह उसके प्रेम को नहीं पा सकेगा। वह प्रेम का अभिनय पा सकता है, प्रेम नहीं पा सकेगा। क्योंकि प्रेम केवल अभय में विकसित होता है, भय में विकसित नहीं होता।

बच्चे का जैसे ही जन्म होता है, वह भय को अनुभव करता है। और इसलिए उसकी शत्रुता के बिंदु तो सक्रिय हो जाते हैं, प्रेम के बिंदु सक्रिय नहीं हो पाते। प्रेम के बिंदु अधिकतर लोगों के जीवनभर बिना सक्रिय हुए ही समाप्त हो जाते हैं,

क्योंकि जीवन उनका कोई मौका नहीं देता। जिसे आप प्रेम करके जानते हैं, वह भी प्रेम नहीं है, वह भी केवल कामवासना है। वह भी केवल कामवासना है, वह भी प्रेम नहीं है। प्रेम तो केवल साधना से विकसित होता है।

इसलिए मैत्री का और प्रेम का हमारे भीतर जो बिंदु है, उसे विकसित करना होगा, सारी प्रकृति के खिलाफ विकसित करना होगा, क्योंकि प्रकृति उसे विकसित होने का मौका नहीं देती है। जो आप जीवन पाते हैं, वह उसे मौका नहीं देता। उसमें केवल शत्रुता विकसित होती है। और जिसको हम मैत्री कहते हैं, वह मैत्री केवल औपचारिकता होती है और शिष्टाचार होती है। वह मैत्री केवल एक व्यवस्था होती है शत्रुता से बचने की, शत्रुता को पैदा न कर लेने की। लेकिन वह मैत्री नहीं होती। मैत्री बड़ी अलग बात है।

उस बिंदु को कैसे विकसित करें? कैसे हमारे भीतर मैत्री का भाव पैदा होना शुरु हो? उसका भाव करना होगा। मैत्री का सतत भाव करना होगा। जो भी हमारे चारों तरफ लोग हैं, उनके प्रति मैत्री का संदेश भेजना होगा, मैत्री की किरणें भेजनी होंगी। और अपने भीतर उस मैत्री के बिंदु को निरंतर सचेष्ट करना होगा और सक्रिय करना होगा।

जब आप नदी के किनारे बैठे हों, तो नदी की तरफ प्रेम भेजिए। इसलिए नदी का नाम ले रहा हूं कि किसी आदमी की तरफ प्रेम भेजने में थोड़ी दिक्कत हो सकती है। एक दरख्त के प्रति प्रेम भेजिए। इसलिए दरख्त की बात कह रहा हूं कि एक आदमी की तरफ भेजने में थोड़ी कठिनाई हो सकती है। सबसे पहले प्रकृति की तरफ प्रेम भेजिए। प्रेम का बिंदु सबसे पहले प्रकृति की तरफ विकसित हो सकता है। क्यों? क्योंकि प्रकृति आप पर कोई चोट नहीं कर रही है।

पुराने दिनों में, अदभुत लोग थे, सारे जगत के प्रति प्रेम का संदेश भेजते थे। सुबह सूरज ऊगता था, तो हाथ जोड़कर उसे नमस्कार कर लेते थे। और उसे कहते कि 'धन्य हो। और तुम्हारी करुणा अपार है कि तुम हमें प्रकाश देते और तुम हमें रोशनी देते।'

यह पूजा कोई पैगेनिज्म नहीं था, यह पूजा कोई नासमझी नहीं थी। इसमें अर्थ थे, इसमें बड़े अर्थ थे। जो व्यक्ति सूरज के प्रति प्रेम से भर जाता था, जो व्यक्ति नदी को मां कहकर प्रेम से भर जाता था, जो जमीन को माता कहकर उसके स्मरण से प्रेम से भर जाता था, यह असंभव था कि वह आदमियों के प्रति अप्रेम से भरा हुआ ज्यादा दिन रह जाए। यह असंभव है। अदभुत लोग थे, उन्होंने सारी प्रकृति की तरफ प्रेम के संदेश भेजे थे। और सब तरफ पूजा और प्रेम और भक्ति को विकसित किया था।

जरूरत है इसकी। अगर प्रेम का अंकुर भीतर पैदा करना है, तो सबसे पहले उसका संदेश प्रकृति की तरफ भेजना होगा। हम तो ऐसे अजीब लोग हैं कि रात पूरा चांद भी ऊपर खड़ा रहेगा और हम नीचे बैठकर ताश खेलते रहेंगे और रमी खेलते रहेंगे। और हम हिसाब-किताब लगाते रहेंगे कि एक रुपया हार गए हैं या एक रुपया जीत गए हैं! और चांद ऊपर खड़ा रहेगा और प्रेम का एक इतना अदभुत अवसर व्यर्थ खो जाएगा।

चांद आपके उस केंद्र को जगा सकता था। अगर चांद के पास दो क्षण मंत्रमुग्ध बैठकर आपने प्रेम का संदेश भेजा होता, तो उसकी किरणों ने आपके भीतर कोई बिंदु सक्रिय कर दिया होता, कोई तत्व, और आप प्रेम से भर गए होते।

चारों तरफ मौके हैं। चारों तरफ मौके हैं, यह पूरी प्रकृति बहुत अदभुत चीजों से भरी हुई है। उनकी तरफ प्रेम करिए। और प्रेम का कोई भी मौका आ जाए, उसे खाली मत जाने दीजिए, उसका उपयोग कर लीजिए। उसका उपयोग इसलिए कि अगर रास्ते से आप जा रहे हैं और एक पत्थर पड़ा है, तो उसे हटा दीजिए। यह बिलकुल मुफ्त में मिला हुआ उपयोग है, जो आपके जीवन को बदल देगा। यह बिलकुल सस्ता-सा काम है। इससे सस्ती और साधना क्या होगी कि आप रास्ते से निकले हैं और एक पत्थर पड़ा था और आपने उठाकर उसे किनारे रख दिया है। न मालूम कौन अपरिचित वहां से निकलेगा! और न मालूम कौन अपरिचित उस पत्थर से चोट खाएगा! आपने प्रेम का एक कृत्य किया है।

मैं आपको इसलिए कह रहा हूं, बड़ी छोटी-छोटी बातें जिंदगी में प्रेम के तत्व को विकसित करती हैं, बहुत छोटी-छोटी बातें। एक रास्ते पर एक बच्चा रो रहा है। आप चले जाते हैं। आप खड़े होकर दो क्षण उसके आंसू नहीं पोंछ सकते!

अब्राहिम लिंकन एक सीनेट की बैठक में अपनी जा रहा था, बीच में एक सूअर फंस गया एक नाली में। वह भागा हुआ गया और उसने कहा कि 'सीनेट को थोड़ी देर रोकना। मैं अभी आया।' यह बड़ी अजीब बात थी। अमेरिका की संसद शायद ही कभी रुकी हो इस तरह से। वह वापस लौटा, उसने सूअर को निकाला। उसके सब कपड़े मिड़ गए कीचड़ में। उसे नाली से बाहर निकालकर उसने रखा, फिर वह अंदर गया। लोगों ने पूछा, 'क्या बात थी? इतने आप घबराए हुए काम रोककर बाहर क्यों गए!' तो उसने कहा, 'एक प्राण संकट में था।'

यह प्रेम का कितना सरल-सा कृत्य था, लेकिन कितना अदभुत है। और ये छोटी-छोटी बातें...। अब मैं देखता हूं, ऐसे लोग हैं, जो इसलिए पानी छानकर पीएंगे कि कोई कीड़ा न मर जाए, लेकिन उनके मन में प्रेम नहीं है। तो उनका पानी छानना बेकार है। वह उनके लिए बिलकुल ही मेकेनिकल हैबिट की बात है कि वे पानी छानकर पीते हैं; कि वे रात को खाना नहीं खाते, क्योंकि कोई कीड़ा न मर जाए। लेकिन उनके हृदय में प्रेम नहीं है, तो इससे कोई मतलब नहीं है।

मतलब इससे नहीं है कि पानी छानकर पीते हैं, कि रात को खाना नहीं खाते हैं; कि मांसाहार नहीं करते हैं, इससे भी मतलब नहीं है। एक ब्राह्मण या एक जैन या एक बौद्ध मांसाहार नहीं करेगा, तो यह मत समझना कि उसका मन प्रेम से भरा हुआ है। यह केवल आदत की बात है, यह केवल वंश-परंपरागत सुनी हुई बात है, समझी हुई बात है। लेकिन उसके मन में प्रेम नहीं है।

हां, अगर यह आपके प्रेम से विकसित हो, तो यह अदभुत बात हो जाएगी। अहिंसा तब परम धर्म है, जब वह प्रेम से विकसित हो। अगर वह ग्रंथों को पढ़कर और किसी संप्रदाय को मानकर विकसित हो जाए, वह कोई धर्म ही नहीं है।

तो जीवन में बड़े छोटे-छोटे काम हैं, बड़े छोटे-छोटे काम हैं। और हम भूल ही गए हैं। यानि मैं आपसे यह कहता हूं, जब आप किसी के कंधे पर हाथ रखते हैं, तो अपने सारे हृदय के प्रेम को अपने हाथ से उसके पास भेजें। अपने सारे प्राण को, अपने सारे हृदय को उस हाथ में संकलित होने दें और जाने दें। और आप हैरान होंगे, वह हाथ जादू हो जाएगा। और जब आप किसी की आंख में झांकते हैं, तो अपनी आंखों में अपने सारे हृदय को उंडेल दें। और आप हैरान हो जाएंगे, वे आंखें जादू हो जाएंगी और वे किसी के भीतर कुछ हिला देंगी। न केवल आपका प्रेम जागेगा, बल्कि हो सकता है कि दूसरे के प्रेम जगने के भी आप उपाय और व्यवस्था कर दें। जब कोई एक ठीक से प्रेम करने वाला आदमी पैदा होता है, तो लाखों लोगों के भीतर प्रेम सक्रिय हो जाता है।

ये मैत्री और प्रेम के बिंदु को उठाने के लिए जो भी आपको मौका मिले, उसे मत खोएं। और उसके मौका मिलने के लिए एक सूत्र याद रखें। नियमित चौबीस घंटे में यह स्मरण रखें कि एक-दो काम ऐसे जरूर करें, जिनके बदले में आपको कुछ भी नहीं लेना है। चौबीस घंटे हम काम कर रहे हैं। उन कामों को हम इसलिए कर रहे हैं कि बदले में हम कुछ चाहते हैं। चौबीस घंटे में नियमपूर्वक कुछ काम ऐसे करें, जिनके बदले में आपको कुछ भी नहीं लेना है। वे काम प्रेम के होंगे और आपके भीतर प्रेम को पैदा करेंगे। अगर एक व्यक्ति दिन में एक काम भी ऐसा करे जिसके बदले में उसकी कोई आकांक्षा नहीं है, उसका उसे बहुत बड़ा बदला मिल जाएगा, क्योंकि उसके भीतर प्रेम का केंद्र सक्रिय हो जाएगा और विकसित होगा।

तो कुछ करें, जिसके बदले में आपको कुछ भी नहीं चाहिए; कुछ भी नहीं चाहिए। उससे मैत्री धीरे-धीरे विकसित होगी। एक घड़ी आएगी कि आप केवल उनके प्रति मैत्रीपूर्ण हो पाएंगे, जो आपके प्रति शत्रुतापूर्ण नहीं हैं। फिर और विकास होगा और एक घड़ी आएगी, आप उनके प्रति भी मैत्रीपूर्ण हो सकेंगे, जो आपके प्रति शत्रुतापूर्ण हैं। और एक घड़ी आएगी, कि आपको समझ में नहीं आएगा कि कौन मित्र है और कौन शत्रु है।

महावीर ने कहा है, 'मित्ति मे सब्ब भुएषु वैरं मज्झ न केवई। सब मेरे मित्र हैं और किसी से मेरा वैर नहीं है।'

यह कोई विचार नहीं है, यह भाव है। यानि यह कोई सोच-विचार नहीं है, यह भाव की स्थिति है कि कोई मेरा शत्रु नहीं है। और कोई मेरा शत्रु नहीं, यह कब होता है? जब मैं किसी का शत्रु नहीं रह जाता हूं। यह तो हो सकता है कि महावीर

के कुछ शत्रु रहे हों, लेकिन महावीर कहते हैं, कोई मेरा शत्रु नहीं है। इसका मतलब क्या है? इसका मतलब है, मैं किसी का शत्रु नहीं। और महावीर कहते हैं, मेरा वैर किसी के प्रति नहीं है। कितने आनंद की घटना नहीं घटी होगी!

आप एक व्यक्ति को प्रेम कर लेते हैं, कितना आनंद उपलब्ध होता है। और जिस व्यक्ति को सारे जगत को प्रेम करने की संभावना खुल जाती होगी, उसके आनंद का कोई ठिकाना है! यह सौदा महंगा नहीं है। आप खोते कुछ नहीं हैं और पा बहुत लेते हैं।

इसलिए मैं महावीर को, बुद्ध को त्यागी नहीं कहता हूं। इस जगत में सबसे बड़ा भोग उन्हीं लोगों ने किया है। इस जगत में सबसे बड़ा भोग उन्हीं लोगों ने किया है। त्यागी आप हो सकते हैं, वे नहीं। आनंद के इतने अपरिसीम अनंत द्वार उन्होंने खोले। इस जगत में जो भी श्रेष्ठतम था, जो भी सुंदर था, जो भी शुभ था, सबको उन्होंने पीया और जाना। और आप क्या जान रहे हैं? सिवाय जहर के आप कुछ भी नहीं जान रहे हैं। और उन्होंने अमृत को जाना।

तो मैं आपको यह कहूं कि प्रेम की वह अंतिम चरम घड़ी, जब हम सारे जगत के प्रति प्रेम को विस्तीर्ण कर पाते हैं और हमारे हृदय से किरणें बहती रहती हैं, उसके लिए जीवन को साधना होगा। कोई कृत्य प्रेम का रोज जरूर करें, सचेत करें। और सारे दिन हजार मौके हैं, जब आप प्रेम जाहिर कर सकते हैं। लेकिन आदतें हमारी खराब हैं। प्रेम जाहिर करने के सारे मौके हम खो देते हैं और घृणा जाहिर करने का एक भी मौका नहीं खोते! घृणा जाहिर करने के जितने मौके खो सकें, उतना शुभ है। और प्रेम जाहिर करने के जितने मौके पकड़ सकें, उतना शुभ है। घृणा के मौके को खाली जाने दें। एकाध मौके को सचेत होकर खाली जाने दें और प्रेम के एकाध मौके को सचेत होकर पकड़ें। इससे साधना में अदभुत गति आएगी।

तो पहला सूत्र है, मैत्री। दूसरा सूत्र है, करुणा। करुणा मैत्री का ही एक रूप है। उसे अलग इसलिए कह रहे हैं कि उसमें कुछ अलग भाव भी हैं। अलग भावों से मतलब है, इस जगत में अगर आप अपने आस-पास के लोगों पर थोड़ा विचार करेंगे, तो आप उनके प्रति बहुत करुणा से भर जाएंगे।

अब हम यहां इतने लोग बैठे हुए हैं। नहीं कह सकता, सांझ इनमें से कोई समाप्त हो जाए। एक सांझ तो सब समाप्त हो ही जाएंगे। एक न एक दिन हममें से हर आदमी चुक जाएगा। अगर मुझे यह खयाल हो कि जो लोग मेरे सामने बैठे हैं, हो सकता है, इनमें से कोई चेहरे मैं दुबारा नहीं देख पाऊंगा, तो क्या मेरे हृदय में उनके प्रति करुणा पैदा नहीं होगी?

एक बगीचे में अभी-अभी मैं गया। और वहां फूल खिले हैं, सांझ वे मुर्झा जाएंगे। छोटी-सी घड़ी है उनके जीवन की। अभी खिले हैं सुबह, सांझ मुर्झा जाएंगे। क्या इस बात का स्मरण कि ये फूल जो अभी मुस्कुरा रहे हैं, सांझ गिर जाएंगे और धूल में मिल जाएंगे, उनके प्रति करुणा को पैदा नहीं कर देगा? क्या यह खयाल कि रात में जो तारे हैं, उनमें से कोई टूट जाता है और बिखर जाता है, क्या तारों के प्रति करुणा को पैदा नहीं कर देगा? अगर बोध हो, तो चारों तरफ देखने पर हरेक के प्रति करुणा मालूम होगी, बहुत दया मालूम होगी। इतना थोड़ा यह मिलन है, इतना मुश्किल यह जीवन है, इतनी दुर्लभ यह घटना है, और इतनी वासनाएं और इतनी तृष्णाएं और इतनी पीड़ाएं हैं हरेक के भीतर! फिर भी हम किसी तरह जीते हैं और किसी तरह प्रेम करते हैं और किसी तरह दो सुंदर कृतियां बनाते हैं। यह कितनी करुणा नहीं पैदा कर देगा!

बुद्ध के ऊपर एक दफा एक आदमी ने आकर थूक दिया। इतने गुस्से में आ गया, उनके ऊपर थूक दिया। उन्होंने उसको पोंछ लिया और उस आदमी से कहा, 'कुछ और कहना है?' उनके पास जो भिक्षु था आनंद, उसने कहा, 'आप क्या बात कर रहे हैं? उसने कुछ कहा है? हमें आज्ञा दें, हम उसे ठीक करें। यह तो हद्द हो गयी कि वह आपके ऊपर थूक दे।' बुद्ध ने कहा, 'वह कुछ कहना चाहता है। अब भाषा असमर्थ है।' बुद्ध ने कहा, 'वह कुछ कहना चाहता है, भाषा असमर्थ है, वेग तीव्र है। कह नहीं सका, क्रिया से प्रकट किया है।'

इसको मैं कहता हूं करुणा। बुद्ध उस पर दया खाए कि कितनी भाषा असमर्थ है। वह कुछ कहना चाहता है, कोई बड़ी क्रोध की बात है, उसे प्रकट करना चाहता है। शब्द नहीं मिल रहे, थूककर जाहिर किया है।

जब कोई मेरे पास प्रेम से आकर मेरे हाथ पर हाथ रख लेता है, तो कितनी करुणा मालूम होती है। वह कुछ कहना चाहता है, भाषा असमर्थ है, हाथ पर हाथ रखकर कुछ कहने की कोशिश करता है। जब कोई किसी से गले से गले मिलता है, भाषा असमर्थ है, आदमी कितना कमजोर है, कुछ कहना चाहता है। हृदय को हृदय के करीब ले आता है, कोई रास्ता नहीं मिलता।

कल मैं यहां से जाता था। कुछ लोग मेरे पैर पड़ने लगे और मुझे बड़ी करुणा आयी, आदमी कितना असमर्थ है! कुछ कहना चाहता है और नहीं कह पाता है और पैर पकड़ लेता है। मेरे पीछे मेरे एक प्रिय मित्र थे। वे विचारशील हैं। उन्होंने कहा, 'न-न, यह मत करो।' उन्होंने भी ठीक कहा। कितना बुरा हुआ है जगत में! पैर पड़ने वाले तो ठीक थे, पैर पड़ाने वाले पैदा हो गए हैं। तो उन्होंने ठीक ही कहा कि, 'न-न, यह मत करो।' मुझे उनकी बात ठीक लगी, लेकिन ठीक नहीं भी लगी। ठीक उन्होंने कहा, यह गलत है कि दुनिया में कोई किसी से पैर पड़वाए। लेकिन वह दुनिया भी गलत होगी, जिसमें ऐसे लोग न रह जाएं, जिनके पैर पड़ने का मन हो। और वह दुनिया भी गलत होगी, जहां ऐसे हृदय न रह जाएं, जो किसी के पैर में झुक जाएं। और वह दुनिया गलत होगी, जब कि हममें ऐसे भाव न उठें, जो बिना पैर पकड़े जाहिर नहीं हो सकते हैं।

मेरी आप बात समझते हैं? वह दुनिया गलत होगी, जब हममें ऐसे भाव न उठें, जो कि बिना पैर पकड़े जाहिर नहीं हो सकते हैं। आदमी बहुत सूखा और बेमानी हो जाएगा।

और फिर मैं यह भी आपको स्मरण दिलाऊं; मैं हैरान हुआ हूं, जब मैंने किसी को अपने पैर में झुकते देखा है, तो मैंने पाया, वह मेरे पैर नहीं पकड़े हुए है। उसे मेरे पैर में कुछ दिख रहा है; वह शायद परमात्मा के ही पैर पकड़े हुए है। और जब भी कोई किसी के पैर में झुका है आज तक--झुकाया न गया हो वह--जब भी कोई किसी के पैर में झुका है, वह सिर्फ परमात्मा के पैर में झुका है, वह किसी के पैरों में नहीं झुका है। आखिर किसी के पैरों में क्या है, जिसमें झुकने जैसा हो? लेकिन कोई भाव है भीतर, जिसके लिए रास्ता नहीं मिलता।

कल मुझे प्रेम करने वाला कोई मेरे पास था कमरे में। और सांझ जब नहाने जाने लगा और मैंने बल्ब जलाया, तो उसने कहा कि 'प्रकाश हो गया, मुझे अपने पैर पकड़ लेने दें।' मैं बहुत हैरान हुआ। और उन्होंने मेरे पैर पकड़ लिए। और मैंने उनकी आंखों में जो आंसू देखे, उन आंसुओं से सुंदर जमीन पर कुछ भी नहीं है। इस जमीन पर उन आंसुओं से सुंदर न कोई कविता है, न कोई गीत है, जो किसी प्रेम की घड़ी में उत्पन्न होते हैं। और अगर इनके प्रति बोध हो और अगर इनका स्मरण हो, अगर ये दिखाई पड़ते हों, तो आपको कितनी करुणा नहीं मालूम होगी!

लेकिन आप क्या देख रहे हैं? आप लोगों में वह देख रहे हैं, जिनसे करुणा तो नहीं पैदा होती, निंदा पैदा होती है। आप लोगों में वह देख रहे हैं, जिनसे करुणा तो पैदा नहीं होती, क्रूरता पैदा होती है। आप लोगों में वह देख रहे हैं, जो उनका असली हिस्सा नहीं है, जो उनका हृदय नहीं है, जो उनकी मजबूरियां हैं। एक आदमी मुझे गाली देता है। यह कोई हृदय है उसका? यह उसकी मजबूरी होगी। बुरे से बुरे आदमी के भीतर एक हृदय है, जिस तक अगर हमारी पहुंच हो पाए, तो हम बहुत करुणा से भर जाएंगे, बहुत करुणा से भर जाएंगे।

बुद्ध ने उस सुबह कहा था, 'दया आती है। दया आती है, भाषा कमजोर है आनंद। आदमी का हृदय बहुत कुछ कहना चाहता है, नहीं कह पाता है।' उससे कहा, 'कुछ और कहना है?' वह आदमी और क्या कहता! अब तो कहना मुश्किल हो गया। वह लौट गया। रात वह बहुत पछताया। वह दूसरे दिन क्षमा मांगने आया। वह पैरों में गिर गया और रोने लगा। बुद्ध ने कहा, 'देखते हो आनंद, भाषा कमजोर है। अब भी वह कुछ कहना चहता है और नहीं कह पा रहा है। कल भी उसने कुछ कहना चाहा था और नहीं कह पाया था। तब भी उसने कोई कृत्य किया था, अब भी कोई कृत्य कर रहा है। भाषा बहुत कमजोर है आनंद, और आदमी बड़ा दया योग्य है।'

और चार दिन का यह जीवन है। और चार दिन का भी हम कहते हैं, चार घड़ी का भी क्या है? और इस चार घड़ी के मिलन में अगर हम करुणा से न भर जाएं एक-दूसरे के प्रति, तो हम आदमी ही न थे। हमने जीवन को जाना भी नहीं, हम पहचाने नहीं।

तो अपने चारों तरफ करुणा को फेंकें, अपने चारों तरफ परिचित हों। कितने दुखी हैं लोग! उनके दुख में और दुख को मत बढ़ाएं। आपकी करुणा उनके दुख को कम करेगी। एक करुणा से भरा हुआ शब्द उनके दुख को कम करेगा। उनके दुख को और मत बढ़ाएं।

हम सब एक-दूसरे के दुख को बढ़ा रहे हैं। हम सब एक-दूसरे को दुख देने में सहयोगी हैं। एक-एक आदमी के पीछे अनेक-अनेक लोग पड़े हुए हैं दुख देने को। अगर करुणा का बोध होगा, तो आप किसी को दुख पहुंचाने के सारे रास्ते अलग कर लेंगे। और अगर किसी के जीवन में कोई सुख दे सकते हैं, तो उसे देने का उपाय करेंगे।

और एक बात स्मरण रखें, जो दूसरे को दुख देता है, वह अंततः दुखी हो जाता है। और जो दूसरे को सुख देता है, वह अंततः बहुत सुख को उपलब्ध होता है। इस वजह से यह कह रहा हूं कि जो सुख देने की चेष्टा करता है, उसके भीतर सुख के केंद्र विकसित होते हैं; और जो दुख देने की चेष्टा करता है, उसके भीतर दुख के केंद्र विकसित होते हैं।

फल बाहर से नहीं आते हैं, फल भीतर पैदा होते हैं। हम जो करते हैं, उसी की रिसेप्टिविटी हमारे भीतर विकसित हो जाती है। जो प्रेम चाहता है, प्रेम को फैला दे। और जो आनंद चाहता है, वह आनंद को लुटा दे। और जो चाहता है, उसके घर पर फूलों की वर्षा हो जाए, वह दूसरों के आंगनों में फूल फेंक दे। और कोई रास्ता नहीं है।

तो करुणा का एक भाव प्रत्येक को विकसित करना जरूरी है साधना में प्रवेश के लिए।

तीसरी बात है, प्रमुदिता, उत्फुल्लता, प्रसन्नता, आनंद का एक बोध, विषाद का अभाव। हम सब विषाद से भरे हैं। हम सब उदास लोग, थके लोग हैं। हम सब हारे हुए, पराजित, रास्तों पर चलते हैं और समाप्त हो जाते हैं। हम ऐसे चलते हैं, जैसे आज ही मर गए हैं। हमारे चलने में कोई गति और प्राण नहीं है। हमारे उठने-बैठने में कोई प्राण नहीं है। हम सुस्त हैं, और उदास हैं, और टूटे हुए हैं, और हारे हुए हैं। यह गलत है। जीवन कितना ही छोटा हो, मौत कितनी ही निश्चित हो, जिसमें थोड़ी समझ है, वह उदास नहीं होगा।

सुकरात मरता था, उसको जहर दिया जा रहा था और वह हंस रहा था। और उसके एक शिष्य क्रेटो ने पूछा, 'हंसते हैं! हमारी आंखें आंसुओं से भरी हुई हैं। और मौत करीब है और यह विषाद का क्षण है।' सुकरात ने कहा, 'विषाद कहां है? अगर मरा और बिलकुल ही मर गया, तो विषाद क्या? क्योंकि दुख को अनुभव करने को कोई बचेगा नहीं। और अगर मरा और बचा रहा, तो दुख क्या? जो खोया, वह अपन न थे, जो अपन थे वह बचे हुए हैं।' तो उसने कहा, 'मैं खुश हूं। मौत दो ही काम कर सकती है। या तो बिलकुल मिटा देगी। बिलकुल मिटा देगी, तो खुश हूं, क्योंकि बचूंगा ही नहीं दुख अनुभव करने को। और अगर बचा देगी मुझको, तो खुश हूं। क्योंकि जो मेरा नहीं है, वह नष्ट हो जाएगा, मैं तो बचूंगा। मौत दो ही काम कर सकती है, इसलिए हंसने जैसी है।'

सुकरात ने कहा, 'मैं प्रसन्न हूं, क्योंकि मौत क्या छीन लेगी? या तो बिलकुल ही मिटा देगी, तो क्या छीना? क्योंकि अब जिससे छीना, वह भी नहीं है, तो दुख का कोई अनुभव नहीं होगा। और अगर मैं बच रहा, तो सब बच रहा। मैं बच रहा, तो सब बच रहा। जो छीन लिया, वह मेरा नहीं था।' तो इसलिए सुकरात ने कहा, 'मैं खुश हूं।'

जो मौत के सामने खुश है--और हम हैं कि हम जिंदगी को पाए हुए दुखी बैठे हुए हैं। हम हैं कि हम जिंदगी में दुखी बैठे हुए हैं और लोग ऐसे भी हुए हैं कि जो मौत के सामने भी खुश थे!

मंसूर को वे सूली दे रहे थे। उसके पैर काट दिए, उसके हाथ काट दिए, उसकी आंखें फोड़ दीं। दुनिया में उससे कठोर यातना कभी किसी को नहीं दी गयी। क्राइस्ट को जल्दी मार डाला गया, गांधी को जल्दी गोली मार दी गयी, सुकरात को जहर दे दिया गया। मंसूर मनुष्य के इतिहास में सबसे ज्यादा पीड़ा से मारा गया। पहले उसके पैर काट दिए। जब उसके पैरों

से खून बहने लगा, तो उसने खून को लेकर अपने हाथों पर लगाया। भीड़ इकट्ठी थी, लोग पत्थर फेंक रहे थे। उन्होंने पूछा, 'यह क्या कर रहे हो?' उसने कहा, 'वजू करता हूं।' मुसलमान नमाज के पहले हाथ धोते हैं। उसने अपने खून से अपने हाथ धोए। उसने कहा, 'वजू करता हूं।' और उसने कहा, 'याद रहे मंसूर का यह वचन कि जो प्रेम की वजू है असली, वह खून से की जाती है, पानी से नहीं की जाती। और जो अपने खून से वजू करता है, वही नमाज में प्रवेश करता है।'

लोग बहुत हैरान हुए कि पागल है। उसके पैर काट दिए गए, फिर उसके हाथ काट दिए गए। फिर उसकी उन्होंने आंखें फोड़ दीं। और एक लाख लोग इकट्ठे हैं और पत्थर मार रहे हैं और उसका एक-एक अंग काटा जा रहा है। और जब उसकी आंखें फोड़ दी गयीं, तब वह चिल्लाया कि 'हे परमात्मा, स्मरण रखना। मंसूर जीत गया।'

लोगों ने पूछा, 'क्या बात है? किस बात में जीत गए?' उसने कहा, 'परमात्मा को कह रहा हूं। परमात्मा स्मरण रखना, मंसूर जीत गया। मैं डरता था कि शायद इतनी शत्रुता में प्रेम कायम नहीं रह सकेगा। तो स्मरण रखना परमात्मा कि मंसूर जीत गया। प्रेम मेरा कायम है। इन्होंने जो मेरे साथ किया है, मेरे साथ नहीं कर पाए। इन्होंने जो मेरे साथ किया है, मेरे साथ नहीं कर पाए। प्रेम कायम है।' और उसने कहा, 'यही मेरी प्रार्थना है और यही मेरी इबादत है।'

मंसूर उस वक्त भी हंस रहा था, उस वक्त भी मस्त था। लोग मौत के सामने खुश रहे हैं और हंसते रहे हैं। और हम जिंदगी के सामने उदास और रोते हुए बैठे हैं। यह गलत है। कोई उदास रास्ते, कोई विषाद से भरा हुआ चित्त कोई बड़े अभियान नहीं कर सकता है। अभियान के लिए उत्फुल्लता, अभियान के लिए बड़े आनंद से भरा हुआ चित्त।

तो चौबीस घंटे उत्फुल्लता को साधिए। ये सिर्फ आदतें हैं। उदासी एक आदत है, जिसको आपने बना लिया है। उत्फुल्लता एक आदत है, उसको बना सकते हैं। उत्फुल्लता को बनाए रखने के लिए जरूरी है कि जिंदगी का वह हिस्सा देखिए, जो प्रकाशित है; वह हिस्सा नहीं, जो अंधेरे से भरा है।

मैं अगर आपको कहूं कि 'मेरा कोई मित्र है और यह बहुत अदभुत गीत गाता है या बहुत अदभुत बांसुरी बजाता है।' आप मुझसे कहेंगे, 'होगा। यह क्या बांसुरी बजाएगा! इसको हमने शराबखाने में शराब पीते देखा है!' मैं अगर आपसे कहूं कि 'मेरा मित्र है और बहुत अदभुत बांसुरी बजाता है।' तो आप कहेंगे, 'यह क्या बांसुरी बजाएगा! हमने इसे शराबखाने में शराब पीते देखा है।' यह अंधेरा देखना है।

अगर मैं आपसे कहूं कि 'ये मेरे मित्र हैं, शराब पीते हैं।' और आप मुझसे कहें, 'होगा। लेकिन ये तो अदभुत बांसुरी बजाते हैं!' तो यह जिंदगी के प्रकाशित पक्ष को देखना है।

जिसको खुश होना है, वह प्रकाश को देखे। जिसको खुश होना है, वह यह देखे कि दो दिनों के बीच में एक रात है। और जिसको उदास होना है, वह यह देखे कि दो रातों के बीच में एक दिन है। हम कैसा देखते हैं जिंदगी को, वैसा हमारे भीतर कुछ विकसित हो जाता है। तो जिंदगी के अंधेरे पक्ष को न देखें। जिंदगी के उजाले पक्ष को देखें।

मैं छोटा था और मेरे पिता गरीब थे। उन्होंने बड़ी मुश्किल से एक अपना मकान बनाया। गरीब भी थे और नासमझ भी थे, क्योंकि कभी उन्होंने मकान नहीं बनाए थे। उन्होंने बड़ी मुश्किल से एक मकान बनाया। वह मकान नासमझी से बना होगा। वह बना और हम उस मकान में पहुंचे भी नहीं और वह पहली ही बरसात में गिर गया। हम छोटे थे और बहुत दुखी हुए। वे गांव के बाहर थे। उनको मैंने खबर की कि मकान तो गिर गया और बड़ी आशाएं थीं कि उसमें जाएंगे। वे तो सब धूमिल हो गयीं। वे आए और उन्होंने गांव में प्रसाद बांटा और उन्होंने कहा, 'परमात्मा का धन्यवाद! अगर आठ दिन बाद गिरता, तो मेरा एक भी बच्चा नहीं बचता।' हम आठ दिन बाद ही उस घर में जाने को थे। और वे उसके बाद जिंदगीभर इस बात से खुश रहे कि मकान आठ दिन पहले गिर गया। आठ दिन बाद गिरता, तो बहुत मुश्किल हो जाती।

यूं भी जिंदगी देखी जा सकती है। और जो ऐसे देखता है, उसके जीवन में बड़ी प्रसन्नता, बड़ी प्रसन्नता का उदभव होता है। आप जिंदगी को कैसे देखते हैं, इस पर सब निर्भर है। जिंदगी में कुछ भी नहीं है। आपके देखने पर, आपका एटीटयूड, आपकी पकड़, आपकी समझ, आपकी दृष्टि सब कुछ बनाती और बिगाड़ती है।

आप अपने से पूछें कि आप क्या देखते हैं? क्या आपने एक भी ऐसा बुरे से बुरा आदमी देखा है, जिसमें कुछ ऐसा न हो, जो साधुओं में भी मुश्किल होता है? क्या आपने ऐसा बुरे से बुरा आदमी भी देखा है, जिसमें एक भी चीज ऐसी न मिल जाए, जो साधुओं में मुश्किल होती है? और अगर आपको मिल सकती है, तो उसे देखें। वह उस आदमी का असली हिस्सा है। और जिंदगी में चारों तरफ खोजें किरण को, प्रकाश को। उससे आपके भीतर किरण और प्रकाश पैदा होगा।

इसको कहते हैं प्रमुदिता। तीसरा भाव है कि हम प्रसन्न हों। हम इतने प्रसन्न हों कि हम मौत को और दुख को गलत कर दें। हम इतने आनंदित हों कि मौत और दुख सिकुड़कर मर जाएं। पता भी न चले कि मौत और दुख भी हैं।

जो इतनी प्रफुल्लता और आनंद को अपने भीतर संजोता है, वह साधना में गति करता है। साधना की गति के लिए यह बहुत जरूरी है, बहुत जरूरी है।

एक साधु हुआ। वह जीवनभर इतना प्रसन्न था कि लोग हैरान थे। लोगों ने कभी उसे उदास नहीं देखा, कभी पीड़ित नहीं देखा। उसके मरने का वक्त आया और उसने कहा कि 'अब मैं तीन दिन बाद मर जाऊंगा। और यह मैं इसलिए बता रहा हूं कि तुम्हें स्मरण रहे कि जो आदमी जीवन भर हंसता था, उसकी कब्र पर कोई रोए नहीं। यह मैं इसलिए बता रहा हूं कि जब मैं मर जाऊं, तो इस झोपड़े पर कोई उदासी न आए। यहां हमेशा आनंद था, यहां हमेशा खुशी थी। इसलिए मेरी मौत को एक उत्सव बनाना। मेरी मौत को दुख मत बनाना, मेरी मौत को एक उत्सव बनाना।'

लोग तो दुखी हुए, बहुत दुखी हुए। वह तो अदभुत आदमी था। और जितना अदभुत आदमी हो, उतना उसके मरने का दुख घना था। और उसको प्रेम करने वाले बहुत थे, वे सब तीन दिन से इकट्ठे होने शुरू हो गए। वह मरते वक्त तक लोगों को हंसा रहा था और अदभुत बातें कह रहा था और उनसे प्रेम की बातें कर रहा था। सुबह मरने के पहले उसने एक गीत गाया। और गीत गाने के बाद उसने कहा, 'स्मरण रहे, मेरे कपड़े मत उतारना। मेरी चिता पर मेरे पूरे शरीर को चढ़ा देना कपड़ों सहित। मुझे नहलाना मत।'

उसने कहा था, आदेश था। वह मर गया। उसे कपड़े सहित चिता पर चढ़ा दिया। वह जब कपड़े सहित चिता पर रखा गया, लोग उदास खड़े थे, लेकिन देखकर हैरान हुए। उसके कपड़ों में उसने फुलझड़ी और फटाखे छिपा रखे थे। वे चिता पर चढ़े और फुलझड़ी और फटाखे छूटने शुरू हो गए। और चिता उत्सव बन गयी। और लोग हंसने लगे। और उन्होंने कहा, 'जिसने जिंदगी में हंसाया, वह मौत में भी हमको हंसाकर गया है।'

जिंदगी को हंसना बनाना है। जिंदगी को एक खुशी और मौत को भी एक खुशी। और जो आदमी ऐसा करने में सफल हो जाता है, उसे बड़ी धन्यता मिलती है और बड़ी कृतार्थता उपलब्ध होती है। और उस भूमिका में जब कोई साधना में प्रवेश करता है, तो गति वैसी होती है, जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। तीर की तरह विकास होता है।

बोझिल मन से जो जाता है, उसने तीर में पत्थर बांध दिए हैं। बोझिल मन से जो जाता है, उसने तीर में पत्थर बांध दिए, तीर कहां जाएगा? जितनी तीव्र गति चाहिए हो, उतना हलका और भारहीन मन चाहिए। जितने तीर को दूर पहुंचाना हो, उतना तीर में वजन कम चाहिए। और जिसे जितने ऊंचे पहाड़ चढ़ने हों, उतना बोझ उसे नीचे छोड़ देना पड़ता है। और सबसे बड़ा बोझ दुख का और विषाद का है, उदासी का है। इससे बड़ा कोई बोझ नहीं है।

क्या आप लोगों को देखते हैं? वे दबे चले जा रहे हैं, जैसे भारी बोझ उनके सिर पर रखा हुआ है। इस बोझ को नीचे फेंक दें और उत्फुल्लता की एक हुंकार करें और सिंहनाद करें और यह बता दें पूरे जीवन को कि जीवन कैसा ही हो, उसमें भी खुशी और जिंदगी गीत बनायी जा सकती है। जिंदगी एक संगीत हो सकती है। इस तीसरी प्रमुदिता को स्मरण रखें।

और चौथा मैंने कहा, कृतज्ञता। कृतज्ञता बहुत डिवाइन, बहुत दिव्य बात है। हमारी सदी में अगर कुछ खो गया है, तो कृतज्ञता खो गयी है, ग्रेटीटयूड खो गया है।

आपको पता है, आप जो श्वास ले रहे हैं, वह आप नहीं ले रहे हैं। क्योंकि श्वास जिस क्षण नहीं आएगी, आप उसे नहीं ले सकेंगे। आपको पता है, आप पैदा हुए हैं? आप पैदा नहीं हुए हैं। आपका कोई सचेतन हाथ नहीं है, कोई निर्णय नहीं है।

आपको पता है, यह जो छोटी-सी देह आपको मिली है, यह बड़ी अदभुत है। यह सबसे बड़ा मिरेकल है इस जमीन पर। आप थोड़ा-सा खाना खाते हैं, आपका यह छोटा-सा पेट उसे पचा देता है। यह बड़ा मिरेकल है।

अभी इतना वैज्ञानिक विकास हुआ है, अगर हम बहुत बड़े कारखाने खड़े करें और हजारों विशेषज्ञ लगाएं, तो भी एक रोटी को पचाकर खून बना देना मुश्किल है। एक रोटी को पचाकर खून बना देना मुश्किल है। यह शरीर आपका एक मिरेकल कर रहा है चौबीस घंटे। यह छोटा-सा शरीर, थोड़ी-सी हड्डियां, थोड़ा-सा मांस। वैज्ञानिक कहते हैं, मुश्किल से चार रुपए, पांच रुपए का सामान है इस शरीर में। इसमें कुछ ज्यादा मूल्य की चीजें नहीं हैं। इतना बड़ा चमत्कार चौबीस घंटे साथ है, उसके प्रति कृतज्ञता नहीं है, ग्रेटीटयूड नहीं है!

कभी आपने अपने शरीर को प्रेम किया है? कभी अपने हाथों को चूमा है? कभी अपनी आंखों को प्रेम किया है? कभी यह खयाल किया है कि क्या अदभुत घटित हो रहा है? शायद ही आपमें कोई हो, जिसने अपनी आंख को प्रेम किया हो, जिसने अपने हाथों को चूमा हो और जिसने कृतज्ञता अनुभव की हो कि यह अदभुत बात, यह अदभुत घटना घट रही है और हमारे बिलकुल बिना जाने। और हम इसमें बिलकुल भागीदार भी नहीं हैं।

अपने शरीर के प्रति सबसे पहले कृतज्ञ हो जाएं। जो अपने शरीर के प्रति कृतज्ञ है, वही केवल दूसरों के शरीरों के प्रति कृतज्ञ हो सकता है। और सबसे पहले अपने शरीर के प्रति प्रेम से भर जाएं। क्योंकि जो अपने शरीर के प्रति प्रेम से भरा हुआ है, वही केवल दूसरों के शरीरों के प्रति प्रेम से भर जाता है।

वे लोग अधार्मिक हैं, जो आपको अपने शरीर के खिलाफ बातें सिखाते हों। वे लोग अधार्मिक हैं, जो कहते हों कि शरीर दुश्मन है और दुष्ट है, और ऐसा है और वैसा है, शत्रु है। शरीर कुछ भी नहीं है। शरीर बड़ा चमत्कार है। और शरीर अदभुत सहयोगी है। इसके प्रति कृतज्ञ हों। इस शरीर में क्या है? जो इस शरीर में है, वह इन पंचमहाभूतों से मिला है। इस शरीर के प्रति कृतज्ञ हों, इन पंचमहाभूतों के प्रति कृतज्ञ हों।

एक दिन सूरज बुझ जाएगा, तो आप कहां होंगे! वैज्ञानिक कहते हैं, चार हजार वर्षों में सूरज बुझ जाएगा। वह काफी रोशनी दे चुका है, वह खाली होता जाएगा। और एक दिन आएगा कि वह बुझ जाएगा। अभी हम रोज इसी खयाल में हैं कि रोज सूरज ऊगेगा। एक दिन वक्त आएगा कि लोग सांझ को इस खयाल से सोएंगे कि कल सुबह सूरज ऊगेगा, और वह नहीं ऊगेगा। और फिर क्या होगा?

सूरज ही नहीं बुझेगा, सारा प्राण बुझ जाएगा, क्योंकि प्राण उससे उपलब्ध है। क्योंकि सारी ऊष्मा और सारा उत्ताप उससे उपलब्ध है।

समुद्र के किनारे बैठते हैं। कभी खयाल किया, आपके शरीर में सत्तर परसेंट समुद्र है, पानी है! और मनुष्य का जन्म इस जमीन पर, कीटाणु का जो पहला जन्म हुआ, वह समुद्र में हुआ था। और आप यह भी जानकर हैरान होंगे, आपके शरीर में भी नमक और पानी में वही अनुपात है, जो समुद्र में है--अभी भी। और उस अनुपात से जब भी शरीर इधर-उधर हो जाएगा, बीमार हो जाएगा।

कभी समुद्र के करीब बैठकर आपने अनुभव किया है कि मेरे भीतर भी समुद्र का एक हिस्सा है। और मेरे भीतर जो हिस्सा है समुद्र का, उसके लिए मुझे समुद्र का कृतज्ञ होना चाहिए। और सूरज की रोशनी मेरे भीतर है, उसके प्रति मुझे कृतज्ञ होना चाहिए। और हवाएं मेरे प्राण को चलाती हैं, उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। और आकाश और पृथ्वी, वे मुझे बनाते हैं, उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए।

इस ग्रेटीटयूड को मैं दिव्य कहता हूं। इस कृतज्ञता के बिना कोई आदमी धार्मिक नहीं हो सकता। अकृतज्ञ मनुष्य क्या धार्मिक होंगे! इस कृतज्ञता को अनुभव करें निरंतर और आप हैरान हो जाएंगे, यह आपको इतनी शांति से भर देगी कृतज्ञता और इतने रहस्य से! और तब आपको एक बात का पता चलेगा कि मेरी क्या सामर्थ्य थी कि ये सारी चीजें मुझे

मिलें! और ये सारी चीजें मुझे मिली हैं। इसके लिए आपके मन में धन्यवाद होगा। इसके प्रति आपके मन में धन्यवाद होगा, जो आपको मिला है, उसके प्रति कृतार्थता का बोध होगा।

तो कृतज्ञता को ज्ञापित करने का, कृतज्ञता को विकसित करने का उपाय करें; उससे साधना में गति होगी। और न केवल साधना में, बल्कि जीवन बहुत भिन्न हो जाएगा। जीवन बहुत भिन्न हो जाएगा, जीवन बहुत दूसरा हो जाएगा।

क्राइस्ट को सूली पर लटकाया। तो क्राइस्ट जब मरने लगे तो उन्होंने कहा, 'हे परमात्मा, इन्हें क्षमा कर देना। इन्हें क्षमा कर देना और दो कारणों से क्षमा कर देना। एक तो ये जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं।' इसमें तो उनकी करुणा थी। 'और एक इस कारण से कि मेरे और तेरे बीच जो फासला था, वह इन्होंने गिरा दिया। परमात्मा के और मेरे बीच जो फासला था, इन्होंने गिरा दिया। इसके लिए इनके प्रति कृतज्ञता है।'

तो जीवन में सतत कृतज्ञता का स्मरणपूर्वक व्यवहार करें। आप पाएंगे कि जीवन बहुत अदभुत हो जाएगा।

तो चार बातें मैंने कहीं शुद्ध भाव के लिए: मैत्री, करुणा, प्रमुदिता और कृतज्ञता। और बहुत बातें हैं। लेकिन ये चार काफी हैं। अगर इनका विचार करें, तो शेष सब इनके पीछे अपने आप चली आएंगी। इस भांति भाव शुद्ध होगा।

मैंने आपको बताया, शरीर कैसे शुद्ध होगा, विचार कैसे शुद्ध होगा, भाव कैसे शुद्ध होगा। अगर ये तीन ही हो जाएं, तो भी आप अदभुत लोक में प्रवेश कर जाएंगे। अगर ये तीन ही हो जाएं, तो भी बहुत कुछ हो जाएगा।

तीन जो केंद्रीय तत्व हैं, उनकी हम आगे बात करेंगे। उन तीन तत्वों में हम शरीर-शून्यता, विचार-शून्यता और भाव-शून्यता का विचार करेंगे। अभी हमने शुद्धि का विचार किया, फिर हम शून्यता का विचार करेंगे। और जब शुद्धि और शून्यता का मिलन होता है, तो समाधि उत्पन्न हो जाती है। जब शुद्धि और शून्यता का मिलन होता है, तो समाधि उत्पन्न हो जाती है। और समाधि परमात्मा का द्वार है। उसकी हम बात करेंगे।

अब हम सुबह के ध्यान के लिए बैठें। सुबह का ध्यान मैं आपको समझा ही दिया हूं। प्रारंभ में पांच बार हम संकल्प करेंगे। फिर उसके बाद थोड़ी देर तक हम भाव करेंगे। फिर उसके बाद श्वास-प्रश्वास को, रीढ़ को सीधी रखकर, आंख को बंद करके, नाक के पास जहां से श्वास भीतर आता-जाता है, उसको स्मरणपूर्वक देखेंगे।

सारे लोग दूर-दूर हो जाएं, ताकि कोई किसी को छूता हुआ मालूम न पड़े।